Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काश्मीर

डा. बी. के. शास्त्री

राजेश प्रकाशन
जम्मू (कश्मीर)

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

Simran

Jasmine

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काश्मीर

डा० बी० के० शास्त्री,
प्रोफेसर एवं पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
गवर्नमैन्ट एम० ए० एम० कालेज, जम्मू.

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu.
Acc. No....2095 (D)
Dated...17-8-2015

प्रकाशक

राजेश प्रकाशन जम्मू-कश्मीर

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

© डा० बी० के० शास्त्री
Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रकाशक :
राजेश प्रकाशन,
121, रघुनाथपुरा
जम्मू (काश्मीर)

संस्करण : 1990

मूल्य : पचास रुपये

मुद्रक :
नवनीत प्रिण्टर्स,
शाहदरा दिल्ली-110032

Kashmir
By : Dr. B. K. Shastri Rs. 50.00

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दो शब्द

प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान काल तक काश्मीर भूमि के प्राकृतिक सौन्दर्य, वैभव, गौरव, इतिहास और संस्कृति पर रचनाएं होती रही हैं। संस्कृत भाषा में रचित राजतरंगिणी नामक ग्रन्थों के अतिरिक्त, उर्दू, फारसी और अंग्रेजी में भी इस सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा गया है। पर हिन्दी में इस प्रकार की कोई पुस्तक नहीं मिली, जो चौरासी मील लम्बी और पच्चीस मील चौढ़ी काश्मीर घाटी के उन रमणीक स्थलों का शास्त्र और इतिहास सम्मत विवरण प्रस्तुत करे जिसके आकर्षण में बंधे लाखों देशी व विदेशी पर्यटक काश्मीर भूमि में आने लगे हैं।

काश्मीर को प्रकृति ने इतना सुन्दर बनाया है कि पर्यटक उसके रूप-सौन्दर्य को बार-बार देखने पर भी तृप्त नहीं होता। यही बात उसके इतिहास के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। उसका इतिहास भी अद्भुत है। उसके निर्माण में हिन्दू, मुसलमान, पठान, सिख आदि सब जातियों का योगदान रहा है। सुन्दर काश्मीर को और सुन्दर बनाने के लिए हिन्दू और मुसलमान शासकों ने समान रूप से प्रयप्न किए हैं।

काश्मीर के इस इतिहास और सदियों से पर्यटकों को काश्मीर भूमि में आने का मौन निमन्त्रण देने वाले कुछ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक और ऐतिहासिक स्थलों का विवरणात्मक परिचय देना ही इस रचना का उद्देश्य है।

विनीत

—डा० बी० के० शास्त्री

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विषय-सूची

1.	काश्मीर	5-45
2.	डल-झील	46-56
3.	शंकराचार्य मठ	57-64
4.	हरी-पर्वत	65-74
5.	चश्माशाही	75-82
6,	निशात	83-88
7.	शालीमार	89-96
8.	जामामस्जिद और हजरतबल	97-106
9.	वूलर झील	107-123
11.	अमरनाथ	124-160
12.	मार्त्तण्ड	161-172
13.	सहायक पुस्तक-सूची	173-174
14.	अनुक्रमणी	175-176

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काश्मीर

काश्मीर का प्राचीन इतिहास काश्मीरी कवियों द्वारा लिखित राजतरंगिणी नामक ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। काश्मीर घाटी को वर्तमान रूप प्रदान करने में कश्यप ऋषि का विशेष योगदान रहा है। कालान्तर में यह घाटी अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण धरती के स्वर्ग के नाम से विश्रुत हुई।

सम्पूर्ण भारतवर्ष में काश्मीर ही एक ऐसा प्रदेश है जहां संस्कृत भाषा में इतिहास लिखने की परम्परा रही है। राजतरंगिणियों के अतिरिक्त नृपावली, पार्थिवावली और कुछ सीमा तक नीलमत पुराण में भी अनेक राजाओं का ऐतिहासिक वर्णन मिलता है। महाभारत काल से लेकर ईस्वी वर्ष 1540 पर्यन्त 4642 वर्षों का इतिहास काश्मीर के कवियों द्वारा लिखित राजतरंगिणी नामक ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। इसके साथ काश्मीर का इतिहास फारसी तथा अन्य विदेशी भाषाओं में भी लिखा गया। कुछ वर्ष पूर्व काश्मीर के इतिहास और संस्कृति के मर्मज्ञ विद्वान् मान्यवर डा० रघुनाथ सिंह जी ने प्राचीन परम्परा को जीवित करते हुए ईस्वी वर्ष 1540 से ईस्वी वर्ष 1947 तक के काश्मीर का इतिहास संस्कृत भाषा में लिखे अपने राजतरंगिणी नामक ग्रन्थ के दो खण्डों में वर्णित किया है।

"वेरीनाग से निकली हुई वितस्ता नदी की घुमावदार ऊपरी द्रोणी ही काश्मीर भूमि है। हिमालय पर्वत की अन्त:शृंखला

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

से एक पर्वतश्रेणी फूटकर वितस्ता और कृष्णगंगा का पानी अलग-अलग करती हुई, पहले पूर्व की ओर जाती है, फिर पश्चिम की ओर मुड़ जाती है, और इसके बाद दक्षिण को घूम जाती है वही काश्मीर में हरमुक की पहाड़ी और काजनाग पर्वत कहलाती है। थोड़ा और पूरब से एक और पर्वत श्रृंखला दक्षिण की ओर जब मुड़ती है, तो उसके उस मोड़ पर काश्मीर का अमरनाथ तीर्थ है। अमरनाथ पर्वत श्रृंखला वितस्ता नदी की दक्षिणी-पूर्वी धाराओं को घेरती हुई उत्तर-पश्चिम की ओर घूम जाती है और वह श्रृंखला परिपंचाल-पीरपंचाल पर्वतमाला की संज्ञा ग्रहण करती है। हिमालय पर्वत की अन्तःश्रृंखला के उपर्युक्त पर्वत चौरासी मील लम्बी, पच्चीस मील चौड़ी, काश्मीर घाटी को चारों ओर से घेरे हुए हैं।[1]

काश्मीर की कथा कश्यप ऋषि से आरम्भ होती है। ब्रह्मा के पुत्र मरीचि और मरीचि के पुत्र ऋषि कश्यप थे। वे एक महान् तपस्वी थे। तीर्थ यात्रा, तपस्या और लोकमंगल उनके जीवन का प्रमुख उद्देश्य था। यद्यपि ऋषि कश्यप का कार्यक्षेत्र बहुत विस्तृत था, पर काश्मीर और जम्मू प्रदेश के कल्याण में उनका विशेष योगदान रहा। पहले उन्होंने सतीसर के रूप में विख्यात् जलाशय को वर्तमान काश्मीर घाटी का स्वरूप प्रदान किया और फिर जम्मू प्रदेश की जनता के कल्याण के लिए भगवान् शिव की कठोर तपस्या करके शुद्ध महादेव क्षेत्र में देविका नदी के अवतरण में सहायक हुए।[2]

कश्यप ऋषि का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है।[3] सामवेद में

1. नीलम अग्रवाल, कल्हण राजतंगिणी : भमिका
2. नीलमत पुराण : 10/110
3. ऋग्वेद 9 : 114 : 2

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रजापति के रूप में उनका वर्णन है।[1] अथर्ववेद में उन्हें प्राचीन पुरुष कहा गया है।[2] शतपथ ब्राह्मण के अनुसार उन्होंने विश्व-कर्मन नामक नृप का अभिषेक किया था।[3] वृह्‌दारण्यक[4] और जैमनीय उपनिषद[5] तथा ऐतरेय ब्राह्मण[6] में महाराजा जनमेजय के प्रसंग में उनका नाम आया है।

कश्यप ऋषि का वर्णन ऋग्वेद में होने के कारण यह प्रमाणित होता है कि वे ऋग्वेद काल अथवा उससे पहले भी विद्यमान थे। ऋग्वेद की रचना आज से दस हजार वर्ष पूर्व स्वीकार की गई है। काश्मीर घाटी का प्राचीन नाम सतीदेश था।[7] सतीदेश का मध्यवर्ती भू भाग जल से आपूर्ण होने के कारण सतीसर कहा जाता था। कश्यप ऋषि ने वारहमूला से जल के निकलने का मार्ग बनवाकर, इसे घाटी का स्वरूप प्रदान करके, मनुष्यों के निवास के योग्य बनवाया। कश्यप के द्वारा निर्मित होने के कारण इसका नाम काश्मीर हुआ।[8]

"जब पानी घट गया तो कश्यप, जो अपनी तपस्या के लिए मशहूर थे, ब्राह्मणों को इस घाटी में निवास करने के लिए ले

---

1. सामवेद 1 : 12 : 4 : 10
2. अथर्ववेद 1 : 14 : 4 : 2 : 33 : 7
3. शतपथ ब्राह्मण 13 : 7 : 1 : 5
4. वृहदारण्यक 2 : 2 : 6
5. जैमनीय उपनिषद 4 : 3 : 1
6. ऐतरेय ब्राह्मण 7 : 27
7. सतीदेश इति ख्यातं देवक्रीडं मनोहरम्।

   नीलमत पुराण : श्लोक 66
8. कः प्रजापतिरुद्दिष्टः कश्यपश्च प्रजाप्रति।

   तेनासौ निर्मितो देशः काश्मीराख्यो भविष्यति॥

   वही : श्लोक 292

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आए। जब आदमियों की तादाद बढ़ती गई तब शासन करना जरूरी हो गया।"[1]

इसके लिए कश्यप ऋषि ने अपने पुत्र नीलनाग को काश्मीर घाटी का राजा बनाया और स्वयं तीर्थ यात्रा प्रसंग में पृथ्वी पर भ्रमण करने लगे।[2] वे समय-समय पर काश्मीर में आते रहे और समस्याओं के समाधान में राजा नीलनाग का मार्गदर्शन करते रहे। राजा नीलनाग से आरम्भ होकर शासन की जो परम्परा चली उसमें नदी में तरंगों की भांति अनेक राजा तथा अनेक राजवंश उदय और अस्त हुए। पर महाभारत काल से लेकर नृपों के शासन का क्रमबद्ध इतिहास मिलने लगता है।

प्राप्त इतिहास ग्रन्थों के अनुसार काश्मीर के राजा गोनन्द प्रथम का राजतिलक उसी दिन हुआ था, जिस दिन महाभारत के प्रसिद्ध पात्र, राजा पाण्डु के ज्येष्ठ पुत्र युधिष्ठिर, एक बहुत बड़े युद्ध के बाद कौरवों को परास्त करके, राजसिंहासन पर बैठे थे। नीलमत पुराण के लेखक नीलमुनि और प्रथम राजतरंगिणी के लेखक कल्हण इसी मत की पुष्टि करते हैं।

वर्तमान कलियुग का आरम्भ लगभग छः हजार वर्ष पूर्व हुआ था। इसमें गोनन्द आदि 52 (बावन) राजाओं ने 2268 वर्ष तक काश्मीर पर शासन किया था। गोनन्द का मित्र पाटलीपुत्र का चक्रवर्ती राजा जरासन्ध था। एक बार राजा जरासन्ध ने राजा गोनन्द को श्रीकृष्ण से युद्ध करने के लिए बुलाया। श्रीकृष्ण ने उसके जामाता मथुरा के राजा कंस को मार दिया था। इस युद्ध में श्रीकृष्ण के बड़े भाई बलराम के हाथों राजा गोनन्द मारा गया।

---

1. अबुल फजल, आईने अकबरी।
2. तीर्थयात्रा प्रसंगेन चचार सकलां महीम्।

नीलमतपुराण : श्लोक, 123

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गोनन्द के बाद उसका पुत्र दामोदर काश्मीर का राजा हुआ। कुछ समय के उपरान्त गान्धार देश के राजा ने अपनी कन्या के विवाह के लिए स्वयंबर का आयोजन कर भारतवर्ष के अनेक राजाओं एवं राजकुमारों को निमन्त्रण पत्र भेजे। गान्धार देश, जिसमें पेशावर, रावलपिण्डी, उत्तर-पश्चिमी पंजाब का अंचल और काबुल आते थे, काश्मीर की सीमा पर था। जब राजा दामोदर को श्रीकृष्ण की इस स्वयंबर में आने की सूचना मिली तो उसने अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने का संकल्प कर लिया। वह श्रीकृष्ण पर आक्रमण करने की तैयारी करने लगा। उसने गान्धार जाते हुए श्रीकृष्ण और उनके साथियों पर घात लगाकर आक्रमण कर दिया। इस युद्ध में श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से दामोदर का सिर काट दिया और उसके बाद नगर में आकर राजा विहीन काश्मीर में दामोदर की गर्भवती रानी यशोमती को राजसिंहासन पर बिठा दिया।

उचित समय पर रानी यशोमती ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम गोनन्द द्वितीय रखा गया। महाभारत के युद्ध के दिनों वह बहुत छोटा था अत: कौरवों और पाण्डवों में किसी ने भी उसे युद्ध में भाग लेने का निमन्त्रण नहीं भेजा था। उस बालक राजा के बाद काश्मीर के राजसिंहासन पर जो पैंतीस राजा बैठे उनका इतिहास नहीं मिलता। इसके बाद लव नामक राजा से पुन: काश्मीर के राजाओं का इतिहास मिलने लगता है। राजा लव अत्यन्त वीर, पराक्रमी, न्यायशील और प्रतापी शासक था। इसके शासन में काश्मीर में शान्ति और सुव्यवस्था बनी रही। लवके उपरान्त कुशेशय, खगेन्द्र, सुरेन्द्र, गोधर, सुवर्ण, जनक और शचीनर क्रम से काश्मीर के नृपति बने। राजा शचीनर की कोई सन्तान नहीं थी, इसलिए शकुनी का प्रपौत्र अशोक

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काश्मीर का शासक बनाया गया जिसने अत्यन्त भव्य भवनों से शोभायमान **श्रीनगर** नामक नगर की स्थापना की।

अशोक के उपरान्त जलौक, दामोदर, हुष्क, जुष्क और कनिष्क नामक राजा हुए जिनके राजत्वकाल में काश्मीर में बौद्ध धर्म का बहुत प्रचार हुआ। फिर अभिमन्यु नाम का राजा हुआ और फिर उसके बाद उसके पुत्र राजा गोनन्द तृतीय के शासन में बौद्ध प्रभाव कम हुआ और नीलमत पुराण के विधि-निर्देशों के अनुसार धर्म-कार्य होने लगे। इसके उपरान्त प्रवरसेन, विभीषण, इन्द्रजीत, रावण, विभीषण द्वितीय और किन्नर काश्मीर के राजसिंहासन पर बैठे। राजा किन्नर की एक रानी को एक बौद्ध भिक्षु ने जादू के प्रभाव से हर लिया। इस दुराचार से क्रोधित होकर राजा ने सैकड़ों बौद्ध विहार नष्ट करवा दिए, अनेक बौद्धों की हत्या की गई और बौद्ध विहारों के साथ दान के रूप में लगे हुए गांव भी छीन लिए गए।

राजा किन्नर के उपरान्त सिद्ध उत्पलाक्ष, हिरण्याक्ष, हिरण्यकुल, वसुकुल और मिहिरकुल काश्मीर के राजा बने। इन सब में मिहिरकुल अत्यन्त प्रतापी और पराक्रमी नृपति हुआ। उससे उसकी प्रजा और शत्रु थरथर कांपते थे। उसने भारत के अनेक प्रदेशों पर सैनिक अभियान करके विजय प्राप्त की थी। वह वज्र से भी कठोर था। एक बार वह अपने सैनिक अभियान में सफल होकर लौट रहा था। साथ में पैदल, घोड़ों और हाथियों की विशाल सेना थी। जब वह काश्मीर के प्रवेश द्वार पर आया, तब वहां के एक ऊंचे शिखर से फिसलकर एक हाथी चिंघाड़ता हुआ नीचे गिरकर मर गया। राजा मिहिरकुल को पर्वत की ढलान पर लुढ़कते हुए हाथी की चिंघाड़ इतनी भा गई कि वह रोमांचित हो उठा। उसी प्रकार के शब्द को बार-बार सुनने के

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए उसने बहुत से दूसरे हाथियों को बारी-बारी उस चोटी से नीचे गिरवाया था।

मिहिरकुल के उपरान्त बक, क्षितिनन्द और राजा नर काश्मीर के राजा हुए। राजा नर ने अच्छावल, नामक नगर की स्थापना की। राजा नर के दिवंगत होने पर उसका पुत्र गोपादित्य राजसिंहासन पर विराजमान हुआ। उसने वेद शास्त्रों की मर्यादा के अनुसार शासन किया तथा गोपाचल-शंकराचार्य पर्वत पर श्री ज्येष्ठेश्वर की प्रतिमा स्थापित की। इसके उपरान्त गोकर्ण, नरेन्द्रादित्य और युधिष्ठिर क्रमशः सिंहासनारुढ़ हुए। बुरे सामन्तों की संगति से राजा का चरित्र दूषित हो गया। उसके सेवक और मन्त्री उससे द्वेष करने लगे। राज्य की आन्तरिक स्थिति से प्रोत्साहन पाकर काश्मीर के सीमावर्ती भूभाग के राजाओं ने आक्रमण करके उसे काश्मीर से भगा दिया।

इस प्रकार की परिस्थिति में मन्त्रीमण्डल ने परामर्श करके महाराजा विक्रमादित्य के सम्बन्धी प्रतापादित्य को देशान्तर से बुलाकर काश्मीर का राजा बना दिया। फिर जलौक और तुंजीन शासक बने। तुंजीन के उपरान्त दूसरे वंश में उत्पन्न विजय नाम के राजा ने आठ वर्ष तक काश्मीर पर शासन किया। इस प्रतापी राजा ने अपने नाम पर विजयनगर की स्थापना करके उसके मध्यभाग में विजयेश्वर महादेव का सुन्दर मन्दिर बनवाया।

राजा विजय के बाद उसका पुत्र जयेन्द्र काश्मीर-नृपति हुआ। जयेन्द्र के बाद आर्यराज, मेघवाहन, प्रवरसेन, मातृगुप्त, रणादित्य, बालादित्य, प्रतापादित्य, चन्द्रापोड़, तारापीड़, ललितादित्य ने क्रम से काश्मीर पर शासन किया।

ललितादित्य के राजत्व काल में काश्मीर भारत का सबसे शक्तिशाली राज्य था। ललितादित्य जैसा राजा फिर काश्मीर

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अथवा भारत के किसी भी प्रदेश में उत्पन्न नहीं हुआ। उसके नेतृत्व में काश्मीर की सेना ने लगभग सम्पूर्ण भारत में ही नहीं, ईरान में भी अपनी विजय पताका फहराई थी। यद्यपि इस राजा को नए-नए देशों पर सैनिक अभियान करने में आनन्द आता था, पर इसके साथ-साथ इसके शासनकाल में काश्मीर ने सभी क्षेत्रों में अभूतपूर्व उन्नति की थी। कला, निर्माण, संस्कृति और सैनिक अभियानों के क्षेत्र में उसने कीर्तिमान स्थापित किए। उसकी सभा में वाकपतिराज और भवभूति जैसे कवि थे। उसके द्वारा स्थापित नगरों में से पुंछ, मार्तण्ड, ललितपुर और परिहासपुर आज भी अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं।

ललितादित्य ने अपने प्रभाव और पराक्रम से काश्मीर का एकीकरण किया। उसने गिलगित, दरद आदि स्थानों से तिब्बत के शासकों का प्रभाव समाप्त कर उन्हें काश्मीर के प्रभाव में लाया। उसने अरबों की बाढ़ को रोक दिया। भारत, अफगानिस्तान और कुछ अन्य देश ललितादित्य के कारण कुछ और शताब्दियों तक अपनी स्वाधीनता कायम रख सके।

ललितादित्य के उपरान्त कुवलयापीड़, वज्रादित्य, पृथिव्यापीड़, संग्रामापीड़ और जयापीड़ ने क्रमशः काश्मीर पर राज्य किया। जयापीड़ अत्यन्त तेजस्वी और पराक्रमी शासक था जिसने अपने दादा राजा ललितादित्य की तरह ही दिग्विजय के लिए सैनिक अभियान किए थे। जयापीड़ के नेतृत्व में काश्मीरी वीरों ने काश्मीर सीमा के बाहर अन्तिम सैनिक यात्रा की थी। जयापीड़ की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र ललितापीड़ राजा हुआ। उसने अपने पिता द्वारा एकत्रित धन को अपने भोग-विलास के लिए खर्च किया और बाकी की कसर उसके सालों ने निकाल दी। उसके साले राजसुख को भोगकर इतने गिर गए कि सत्ता के लोभ में उन्होंने अपने भानजे की हत्या करवा दी, ताकि बड़ा

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

होकर वह उन्हें राजसुख से वंचित न कर दे। अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए उन्होंने जयादेवी से उत्पन्न वज्रादित्य के पुत्र अजितापीड़ को नाममात्र का राजा बनाकर उत्पलक, पदम्, धर्म, कल्याणवर्मा एवं मम्म—इन पांच भाईयों ने अगले छब्बीस वर्ष तक राज्य का उपभोग किया। इनमें पद्म ने पद्मपुर नगर बसाया था।

कुछ समय के उपरान्त मम्म और उत्पलक अपने-अपने स्वार्थ के कारण एक-दूसरे के शत्रु बन गए और उनमें घोर युद्ध हुआ। इसमें विजयी होकर मम्म ने अजितापीड़ को राजसिंहासन से हटाकर संग्रामापीड़ द्वितीय के पुत्र अनंगपीड़ को राजा बना दिया। इसके कुछ ही समय बाद उत्पलक के पुत्र सुखवर्मा ने षडयन्त्र करके अजितापीड़ के पुत्र उत्पलापीड़ को राजसिंहासन पर बिठा दिया और स्वयं उसका संरक्षक बनकर राजसुख भोगने लगा। सुखवर्मा अपनी शक्ति के कारण दूसरा राजा हो रहा था अतः उसके एक निकट सम्बन्धी ने ईर्ष्या से अन्धे होकर उसे मार डाला। कुछ ही दिनों में जब प्रजा राजा के विरोध में उठ खड़ी हुई तो उसे शान्त करने के लिए शूर नाम के एक शक्तिशाली मन्त्री ने सुखवर्मा के सुपुत्र अवन्तीवर्मा को राज्य करने के योग्य समझकर, राजसिंहासन पर बिठा दिया।

काश्मीर के राजसिंहासन पर बैठने के तत्काल बाद अवन्तीवर्मा ने अपने सारे विरोधियों का नाश किया और प्रजा के कल्याण के लिए ऐसे उत्तम कार्य किए कि सभी दिशाओं में उसकी प्रशंसा की जाने लगी। काश्मीर में अच्छी प्रशासन व्यवस्था स्थापित करने में उसके मन्त्री शूर ने उसे अभूतपूर्व सहयोग दिया। राजा ने अवन्तीपुर नगर बसाकर उसमें अवन्ती स्वामी विष्णु का मन्दिर बनवाया। इसी राजा की प्रेरणा से सुय्य नामक व्यक्ति ने काश्मीर भूमि में युक्ति से जल उपद्रव को शान्त करके सिंचाई प्रणाली का आविष्कार किया। इससे

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काश्मीर अन्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो गया। सुप्प ने वितस्ता के किनारे सुप्पपुर नाम का नगर बसाया था, जो आज सोपुर के नाम से विश्रुत है।

अवन्तीवर्मा के बाद उसका पुत्र शंकरवर्मा काश्मीर का नृपति हुआ। उसने शासन-व्यवस्था में और अधिक सुधार किया और फिर सैनिक अभियान करके बहुत से राजाओं को काश्मीर राज्य के अधीन कर लिया। पर अपने शासन काल के अन्तिम वर्षों में इस राजा ने लोभ के वश में बहुत से अपकर्म किए। राजा शंकरवर्मा के दिवंगत होने पर उसकी महारानी सुगन्धादेवी के संरक्षण में उसका पुत्र गोपाल वर्मा राज्य करने लगा। कुछ ही काल में गोपाल वर्मा का निधन होने पर महारानी सुगन्धादेवी अपनी प्रजा की प्रार्थना स्वीकार कर स्वयं शासन चलाने लगी। उसने दो वर्ष तक काश्मीर पर शासन किया। तदुपरान्त पार्थ, चक्रवर्मा, यशस्करदेव, संग्रामदेव, पर्वगुप्त, क्षेमगुप्त राजा हुए।

क्षेमगुप्त ने खशों के राजा लोहर (पुंछ) दुर्ग के शासक, महापराक्रमी सिंहराज की कन्या दिद्दा से विवाह किया। क्षेमगुप्त के दिवंगत होने पर अपने अल्पवयस्क राजकुमार अभिमन्यु को काश्मीर के राजसिंहासन पर बिठाकर दिद्दारानी स्वयं शासन करने लगी। अभिमन्यु के उपरान्त नन्दिगुप्त, संग्रामराज, अनन्तदेव, कलश, उत्कर्ष और हर्ष राजा हुए। राजा हर्ष को मारकर लोहर के उच्चल ने काश्मीर के राज्यसिंहासन पर अधिकार कर लिया। उच्चल भी राजकुल में उत्पन्न मल्ल का पुत्र और दिद्दारानी के भाई जस्सराज का पौत्र था।

राजा उच्चल जब अपने सेवकों द्वारा मार दिया गया तो उन सेवकों में सर्वश्रेष्ठ रड्ड ने शंखराज नाम से कुछ समय तक राज किया। शंखराज का वध हो जाने पर राजा उच्चल का सौतेला भाई सल्हण राजा बना, पर शीघ्र ही राजा उच्चल का छोटा

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाई सुस्सल सल्हण को बन्दी बनाकर स्वयं काश्मीर का शासक बन गया। कुछ ही काल में सुस्सल के अत्याचारों से खिन्न होकर उसके सामन्तों और सभासदों ने उसे राजसिंहासन से हटाकर राजा हर्ष के पौत्र भिक्षाचर को काश्मीर का नरेश बना दिया। भिक्षाचर लगातार दस वर्षों से अपने पूर्वजों के खोए हुए राज्याधिकार को पाने का प्रयत्न कर रहा था। मगर इसका शासन केवल छः मास तक रहा। अनुभवहीन होने के कारण प्रशासन दूषित हो गया। अपदस्थ राजा सुस्सल ने मौका पाते ही फिर राजसिंहासन पर अधिकार कर लिया। डामरों काश्मीर के सैनिक कृषक वर्ग के विद्रोह के परिणामस्वरूप जब अर्थात् राजा सुस्सल को राज्यसत्ता अपने हाथों से खिसकती दिखाई दी तो वह सावधान हो गया। इसी समय अपनी प्रिय रानी मेघमंजरी के देहावसान से उदास राजा सुस्सल ने अपने पुत्र राजकुमार जयसिंह को लोहर दुर्ग से बुलाया और ईस्वी वर्ष 1123 के आषाढ़ में उसका राज्याभिषेक कर दिया। कुछ ही समय बाद राजा सुस्सल अपने सेवकों द्वारा मार दिया गया। अपने पिता की हत्या के समय जयसिंह श्रीनगर के राजमहलों से दूर निवास कर रहा था। जनता की सहानुभूति प्राप्त कर उसने अपनी राजनीतिक चतुरता से एक तरफ डामरों-सैनिक कृषक वर्ग के विद्रोह को शान्त किया तथा दूसरी ओर भ्रष्टाचार को समाप्त करने में भी सफल हुआ जो अब भी निरन्तर काश्मीर राज्य के लिए संकट बना हुआ था।

जयसिंह ने ई० वर्ष 1128 से 1150 ई० वर्ष पर्यन्त अर्थात् 22 वर्ष तक राज्य किया। उसके राजत्वकाल में भी बहुत से विद्रोह और षडयन्त्र हुए, किन्तु अपनी राजनीतिक सूझ-बूझ एवं दृढ़ इच्छा शक्ति से इनका सामना करने में समर्थ हुआ। जयसिंह काश्मीर का अन्तिम शक्तिशाली हिन्दू राजा था। उसके राजा

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बनने से पूर्व ही मुसलमान पेशेवर सैनिक काश्मीरी सेना तथा राजसेवा में प्रवेश कर चुके थे। काश्मीर के राजा आपसी युद्धों में विदेशी सैनिकों पर अधिक विश्वास करने लगे थे। यद्यपि ये विदेशी सैनिक और कर्मचारी राजपरिवार में अथवा राज-परिवार के विरुद्ध होने वाले षडयन्त्रों में भाग नहीं लेते थे परन्तु काश्मीर के राजाओं की इस नीति ने काश्मीर की शक्ति का नाश करके काश्मीर में विदेशी राज्य की स्थापना का मार्ग खोल दिया।

जयसिंह के उपरान्त परमाणुक, वन्तिदेव, वोपदेव, जस्सक, जगदेव, राजदेव, संग्रामदेव, रामदेव, लक्ष्यदेव, सिंहदेव और सूहदेव क्रम से काश्मीर के शासक हुए। सूहदेव ईस्वी वर्ष 1301-1320 ईस्वी वर्ष पर्यन्त तक काश्मीर का शासक था। ईस्वी वर्ष 1313 में शाहमीर सपरिवार काश्मीर नरेश की शरण में आया। नौकरी प्राप्त की। समय के साथ शक्ति प्राप्त कर, काश्मीर में मुसलिम राज्य स्थापित कर उसका प्रथम सुलतान बनने में सफल हुआ।

ईस्वी वर्ष 1561 में गाजीचक ने जो उस समय हबीबशाह का मुख्यमन्त्री था, सुलतान को जबरदस्ती सिंहासन से हटाकर स्वयं सुलतान बन गया।

इस प्रकार ईस्वी वर्ष 1339-1561 ईस्वी वर्ष पर्यन्त (222) दो सौ बाईस वर्ष तक शाहमीर के वंश के सुलतानों ने काश्मीर पर शासन किया। इनमें अलीशाह, जैनुल आबदीन, मुहम्मदशाह, फतहशाह, नाजुकशाह तथा इब्राहीमशाह एक से अधिक बार राजसिंहासन पर आसीन हुए। इनमें मुहम्मदशाह पांच बार और फतहशाह तीन बार शासक बना।

गाजीचक से जो परम्परा चली उसमें नौ सुलतान हुए जिन्होंने ईस्वी वर्ष 1561 से ईस्वी वर्ष 1586 तक काश्मीर पर शासन किया। गाजीशाह के उपरान्त हुसेनशाह, अलीशाह,

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

युसूफशाह, लोहरशाह तथा ऐवाखान का पुत्र हुसेनशाह क्रम से काश्मीर के सुलतान हुए। इनमें युसूफशाह और याकूबशाह ने दो-दो बार सुलतान की पदवी प्राप्त की। पर काश्मीर में मुगलराज कायम होने के बाद इन दोनों बाप और बेटे को अकबर के आदेश से बिहार प्रदेश की राजधानी पटना के पास निर्वासित रूप में रखा गया। वहीं पर दोनों दिवंगत हुए।

युसूफशाह प्रकृति प्रेमी था। वह शान्त स्वभाव का था और अकारण युद्ध करके अपनी प्रजा का विनाश नहीं करवाना चाहता था। सम्राट अकबर ने उसके राजत्वकाल ईस्वी वर्ष 1580 से ईस्वी वर्ष 1586 पर्यन्त चार बार अपने दूत और सामन्त काश्मीर में भेजे ताकि काश्मीर पर अधिकार कर लिया जाए, परन्तु युसूफ जानता था कि मुगल सेना के सामने ठहरना सम्भव नहीं, अतः उसने हर बार अत्यन्त नम्रता का व्यवहार करके सम्राट को तोहफे और कर भेजकर काश्मीर की स्वाधीनता को बचाने के प्रयत्न किए।

परन्तु ईस्वी वर्ष 1585 में अकबर ने सैनिक शक्ति से काश्मीर को अधिकृत करने का निश्चय करके भगवानदास और कुलीखां के नेतृत्व में सेना भेजी। काश्मीर के सामन्तों और मन्त्रियों ने युद्ध करने की सलाह दी परन्तु युसूफ ने व्यर्थ का खून-खराबा न करने का निर्णय करके सम्राट की सेवा में उपस्थित होने का मन बना लिया। भगवानदास ने युसूफशाह के पास दो दूत भेजे। क्योंकि भारी बर्फबारी और काश्मीरियों के विरोध के कारण मुगल सेना का आगे बढ़ना रुक गया था। युसूफशाह ने रातभर उन दोनों के साथ सलाह-मशविरा किया और दूसरे दिन सवेरे सेना देखने के बहाने पहले कुमरमस्त वारहमूला दर्रा तथा फिर वरजुला पहुंचा। वहीं उसने पन्द्रह हजार घुड़सवार, पच्चीस हजार पैदल और सात हजार बन्दूकधारी सैनिक युद्ध के

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए तैयार देखे। मौका पाकर ईस्वी वर्ष 1586 के फरवरी मास की चौदह तारीख को वह अपने कुछ सैनिकों के साथ मुगल शिविर में चला गया।

युसूफशाह के इस प्रकार के अप्रत्याशित आचरण को देखकर उसके मन्त्रियों और सामन्तों ने विचार-विमर्श करके उसके पुत्र याकूबशाह को राजा घोषित कर दिया। दूसरी ओर बर्फवारी से पीड़ित मुगल-सेना, काश्मीरी सेना से पराजित हो गई। इस विकट स्थिति में भगवानदास ने सन्धि करने की इच्छा से अपना दूत याकूब के पास भेजा। याकूब मान गया पर अन्तिम सन्धि युसूफ के साथ करने का निश्चय किया। सन्धि में यह निश्चित किया गया कि सुलतान युसूफ ही रहेगा। सम्राट अकबर के नाम खुतवा पाठ तथा मुद्रा टंकणित होगी। युसूफशाह स्वयं अपने पुत्र याकूब को समय पर सम्राट की सभा में उपस्थित करेगा। ईस्वी वर्ष 1586 के मार्च मास की 28 तारीख को मुगल सेना काश्मीर से लौटी। युसूफशाह को अकबर के सामने राजसभा में उपस्थित किया गया।

अकबर ने सन्धि की शर्तें स्वीकार नहीं की तो भगवानदास अत्यन्त दुःखी हुआ। सम्राट की आज्ञा से युसूफशाह को राजा टोडरमल के संरक्षण में लाहौर के कारागार में रखा गया। इसके पश्चात् पांचसौ सैनिकों का मनसब व दो हजार की वृत्ति देकर गरमी के कारण उसे मानसिंह के साथ बिहार भेज दिया गया। बिहार की सख्त उसकी सेहत गिरती गई और ईस्वी वर्ष 1592 के सितम्बर मास की 22 तारीख को युसूफ का निधन हो गया। लगातार 3 वर्ष तक अपने खोए हुए राज्य को प्राप्त करने के लिए याकूब ने संघर्ष किया, फिर मन-ही-मन पराजय स्वीकार करके ई० वर्ष 1589 के अगस्त मास की 7 तारीख को आत्मसमर्पण कर दिया। अकबर ने उसे भी जागीर देकर बिहार में युसुफ के पास

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भेज दिया। बिहार की राजधानी 'पटना के इसलामपुर नामक गांव से तोन मील उत्तर-पूर्व में विसवक नामक गांव है। गांव के पास एक टीला है। यहां दो कब्रें युसूफशाह और याकूब की है।

इस प्रकार काश्मीर की स्वतन्त्रता का अन्त हो गया। काश्मीर के रेशम जैसे कोमल और केसर जैसे मोहक वातावरण में पला हुआ काश्मीर का अन्तिम सुलतान बिहार की प्रचण्ड लू में झुलसकर मर गया। वह अपने देश के बाहर मरा और वहीं दफनाया गया।

काश्मीर में मुगल शासन के स्थापित होने से काश्मीर की घरेलू राजनीति में होने वाले षडयन्त्र भी समाप्त हो गए। काश्मीर में पूर्णकालिक शान्ति की स्थापना के उद्देश्य से ही अकबर ने काश्मीर के अन्तिम दोनों सुलतानों को काश्मीर से बहुत दूर भेज दिया था।इसके अतिरिक्त मुगलों की विशाल सैन्य शक्ति का सामना करना विभाजित काश्मीरियों के वश की बात नहीं थी।

अकबर ने काश्मीर की तीन बार यात्रा की थी। उसके प्रशासन और प्रभाव के कारण हिन्दू-मुसलमान में भाई-चारे की भावना का प्रचार हुआ और सारी प्रजा बिना किसी जातिगत भेदभाव के सुखपूर्वक रहने लगी। मुगलों ने काश्मीर पर अपना शासन राज्यपालों के माध्यम से किया। यद्यपि दिल्ली के सिंहासन पर सत्रह (17) बाबर वंशीय मुगल सम्राट बैठे थे, परन्तु उनमें अकबर, जहांगीर, शाहजहां, औरंगजेब, शाहआलम, जहांदरशाह, फरुखशियर, मुहम्मदशाह एवं अहमदशाह बहादुर ही काश्मीर के भी सम्राट हुए।

अकबर ईस्वी वर्ष 1589, 1592 तथा 1597 में काश्मीर आया था। अपनी पहली यात्रा में अकबर ने विद्वान् हिन्दू और मुसलमानों को सोने की मोहरें प्रदान की थीं। उसने वितस्ता में

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नौका उत्सव का आयोजन किया जिसमें तीस हजार नौकाओं ने भाग लिया था। सम्राट ने जून और जुलाई के महीने में पामपुर, अवन्तीपुर, वीजविहारा, अनन्तनाग, नन्दवल और अच्छावल की यात्रा की। काश्मीर से लौटते समय उसने ऊलर झील और उसमें निर्मित जैन लंका को भी देखा।

अपनी दूसरी यात्रा के समय पामपुर में केसर के फूलों को देखकर सम्राट अति प्रसन्न हुआ था। उसने श्रीनगर पहुंचकर ईदगाह के मैदान में अस्सी हजार काश्मीरियों को शानदार दावत दी। कार्तिक अमावस्या को वितस्ता के दोनों तटों और तटवर्ती भवनों को दीपमालाओं से अलंकृत करवाया। अकबर ने हरिपर्वत पर किला और इसी पर्वत की ढलान पर नगर-नागर का निर्माण करवाया था।

ईस्वी वर्ष 1605 में अकबर के निधन के बाद उसका पुत्र जहांगीर मुगल सम्राट बना। उसे काश्मीर से अत्यन्त लगाव था और इसी लगाव के कारण वह इतने बड़े साम्राज्य का स्वामी होते हुए भी आठ बार काश्मीर की यात्रा पर आया था। उसने ईस्वी वर्ष 1611 में वेरीनाग को रमणीक बनवाया। 1620 में उसने काश्मीर के सभी रमणीक स्थानों की चार महीने तक यात्रा की। 1626 में वह गुलमर्ग भी गया। 1627 में सात नवम्बर को काश्मीर से लौटते समय ही राजौरी के समीप चिंगस नामक स्थान पर उसका देहान्त हो गया। जहांगीर की अन्तिम इच्छा यही थी कि उसे वेरीनाग के मुकाम पर ही दफन किया जाए पर राजनैतिक कारणों से उसे लाहौर में रावी के तट पर शहादरा में दफनाया गया।

जहांगीर के राजत्वकाल में अखून्द रहनुमा मध्येशिया मार्ग से हज यात्रा पर गया। वह कालीन बनाने के प्रसिद्ध स्थान फारस में अन्दीजन गया। वहां कालीन बनाने की कला में

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रशिक्षित होकर ऊनी कला काश्मीर में लाया। शालीमार बाग, ऐशाबाद बाग का निर्माण जहांगीर ने करवाया था। उसकी मलिका नूरजहां ने ईस्वी वर्ष 1622 में पत्थर मस्जिद तथा 1623 में डलझील के पश्चिमी तट पर बहरआरा नामक उद्यान का निर्माण करवाया था। पर यह मस्जिद नूरजहां की एक गर्वोक्ति के कारण श्रीनगर में लोकप्रिय नहीं हुई। जहांगीर के आदेश से ईस्वी वर्ष 1630 में मटन में चिनारों का बाग लगाया गया था।

जहांगीर के उपरान्त ईस्वी वर्ष 1628 में 24 फरवरी को शाहजहां का राज्याभिषेक हुआ। उसने चार बार काश्मीर की यात्रा की थी। ईस्वी वर्ष 1631 में शाहजहां के आदेश से चश्मा शाही बाग का तथा 1632 ईस्वी वर्ष में निशात बाग का निर्माण किया गया। अपनी ईस्वी वर्ष 1640 की यात्रा के दिनों में काश्मीर में भ्रमण करते समय उसने अच्छावल में एक बाग बनवाकर उसमें फबारे लगाने का निर्देश दिया। ईस्वी वर्ष 1641 में शाहजहां के सबसे छोटे पुत्र मुरादबख्श ने, जो उस समय काश्मीर का राज्यपाल था, डलझील के एक टापू क्षेत्र में चिनार के चार वृक्ष लगवाए। डलझील की चौकोर भूमि पर शोभायमान ये वृक्ष आज भी उसकी स्मृति दिलाते हैं। ईस्वी वर्ष 1645 में शाहजहां ने लगातार छः महीने तक काश्मीर के सुन्दर स्थानों का भ्रमण किया। ईस्वी वर्ष 1651 में शाहजहां काश्मीर में दो महीने तक रहा। इसी समय उसके बड़े पुत्र दाराशिकोह ने डलझील के तटीय जेवन पर्वत पर चश्माशाही के समीप वामभाग में **परीमहल** का निर्माण करवाया था।

ईस्वी वर्ष 1657 में शाहजहां बीमार हुआ। राजसिंहासन के लिए भाइयों में हुए खूनी संघर्ष में विजय प्राप्त करके औरंगजेब 30 जुलाई 1658 में सिंहासन पर बैठा। ईस्वी वर्ष

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1663 में औरंगजेब ने प्रथम एवं अन्तिम काश्मीर यात्रा की। उसके साथ उसकी बहन रोशनआरा भी थी। सम्राट ने भिम्बर-राजौरी मार्ग से श्रीनगर पहुंचकर डलझील के पास हरिपर्वत पर निवास किया।

3 मार्च 1707 ईस्वी वर्ष में औरंगजेब के निधनोपरान्त उसका ज्येष्ठ पुत्र मुअज्जम, शाहआलम के नाम से आगरा में राजसिंहासन पर बैठा। शाहआलम से लेकर अहमदशाह बहादुर तक कोई मुगल सम्राट काश्मीर नहीं आया। इसलिए अकबर ने सुन्दर काश्मीर को और भी सुन्दर बनाने का जो उपक्रम किया था वह शाहजहां तक ही जारी रहा। बाद के मुगल बादशाहों ने राज्यपालों के माध्यम से ही काश्मीर पर शासन किया।

ईस्वी वर्ष 1753 में काबुल के अहमदशाह अब्दाली ने मुगलों से काश्मीर छीन लिया। अगले 67 वर्ष पर्यन्त अर्थात् ईस्वी वर्ष 1819 तक काश्मीर पठानों के अधीन रहा। इस काल में अहमदशाह अब्दाली, तैमूरशाह, जमनशाह, शाहशुजा-अफगान शासक हुए, पर इनमें से कोई भी काश्मीर की यात्रा पर नहीं आया। इन सबने राज्यपालों द्वारा ही काश्मीर पर शासन किया।

मुगल भारत को अपनी भूमि मानते थे तथा विदेशियों से उसकी रक्षा करना अपना कर्त्तव्य मानते थे। वे मनोरंजन और प्रकृति के सौन्दर्य को देखने के लिए काश्मीर में आते थे। इसके लिए उन्होंने अनेक बागों और भवनों का निर्माण करवाया था। इसके विपरीत पठान मुगलों की तरह न तो सुसंस्कृत थे और न ही उन्हें ललित कलाओं से प्रेम था। काश्मीर में उनका उद्देश्य केवल धन प्राप्त करना था। प्रजा से अधिक-से-अधिक पैसा वसूल करने में निपुण आदमी को ही काश्मीर में राज्यपाल/उपराज्यपाल

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नियुक्त करने के काबिल माना जाता था। काश्मीर में पठानों का राजत्वकाल सबसे अधम शासनकाल माना जाता है।

ईस्वी वर्ष 1819 में पंजाब केसरी महाराजा रणजीत सिंह की सेना दीवान मिश्रीचन्द की कमान में राजौरी मार्ग से काश्मीर की ओर चली। महाराजा रणजीतसिंह और राजकुमार खड़गसिंह भी इस अभियान में शामिल थे। खड़गसिंह अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ बहराम गला पहुंचा और महाराजा ने स्वयं अनन्तनाग से बारह मील दूर शाहाबाद में आकर अपना शिविर लगाया। दोनों ने अपने-अपने रास्तों पर चौकियां बना दी ताकि आवश्यक सूचना और दूसरी वस्तुएं बिना रुकावट के मुख्य सेना के पास पहुंचती रहे।

पठानों की बारह हजार सेना लेकर राज्यपाल जब्बारखां (हीरपुर) शोपियान आ पहुंचा। उसने पीरपंचाल की पहाड़ियों पर अपने सैनिक भेजे। परन्तु तीन जुलाई 1819 ईस्वी वर्ष में लड़े गए इस युद्ध में जब्बारखां पराजित हो गया। वह भागकर श्रीनगर पहुंचा। धन और परिवार लेकर काबुल चला गया। सिक्ख सेना आगे बढ़ती हुई श्रीनगर के शेरगढ़ी दुर्ग में प्रवेश कर गई और इस प्रकार काश्मीर में पठानों के शासन का अन्त हुआ।

पठानों के राजत्वकाल में उनके पहले राज्यपाल अब्दुल्लाखां अकासी ने लोगों को भयंकर यातना देकर एक करोड़ रुपये इकट्ठा करके अब्दाली को दिए। इसके अन्याय से काश्मीरी जनता का जीवन और व्यापार नष्ट हो गया। इसके वध के बाद सुखजीवन मल ने, जो अब्दुल्ला की सहायता के लिए भेजा गया था, अपने को राज्यपाल घोषित करके सत्ता अपने हाथ में ले ली। उस समय पंजाब और ईरान की लड़ाई में कमजोर हुआ अब्दाली उसका कुछ न बिगाड़ सका। सुखजीवन ने काश्मीरी जनता को

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पठानों के अत्याचार से मुक्ति दिलाकर उन्हें सब प्रकार से सुख दिया। उसने तत्कालीन दिल्ली के मुगल बादशाह आलमगीर द्वितीय को अपना स्वामी माना और बादशाह ने भी उसे राजा मान लिया। वह आठ वर्ष तक अब्दाली के षडयन्त्रों और आक्रमणों का सफलतापूर्वक सामना करता रहा पर ईस्वी वर्ष 1762 में जब अब्दाली ने पचास हजार सेना के साथ आक्रमण किया तो सुखजीवन का एक विश्वासघाती सेनापति बख्तमल पठानों से मिल गया। काश्मीरी सेना हार गई। अब्दाली ने राजा सुखजीवन को हाथी के पैरों तले डालकर मरवा दिया।

ईस्वी वर्ष 1770 से ईस्वी वर्ष 1783 पर्यन्त काश्मीर में नियुक्त दो राज्यपालों अमीर मुहम्मदखां जवांशेद (1770-1777) तथा हाजी करीमदाद खां बमजाई (1777-1783) ने कुछ निर्माण करवाए थे। अमीरखां ने सोनलंका में सात तल ऊंचा भवन बनवाया जिसमें रहट से सब तलों पर जल पहुंचाया जाता था और इससे फबारे छूटते थे। ईस्वी वर्ष 1773 में अमीरबाद का बाग तथा अमीराकदल नामक पुल का पुर्ननिर्माण करवाया जो बाढ़ के कारण विक्षत हो गए थे। इसी ने ईस्वी वर्ष 1772 में शेरगढ़ी नाम के दुर्ग की रचना भी करवाई थी। पठान शासन काल के दसवें राज्यपाल हाजी करीमदाद खां ने अमीराकदल से लेकर शंकराचार्य पर्वत तक सफेदे के वृक्षों की पंक्तियां लगवाई थीं।

ईस्वी वर्ष 1819 से ईस्वी वर्ष 1846 पर्यन्त काश्मीर में सिख शासन रहा। इस काल में राजा रणजीतसिंह, राजा खड़गसिंह और राजा शेरसिंह नृपति हुए। ग्यारह राज्यपालों के माध्यम से केवल 27 वर्ष तक अर्थात् ईस्वी वर्ष 1946 तक काश्मीर पर शासन किया। चार सौ अस्सी वर्ष के बाद काश्मीर पर फिर हिन्दु शासन होने पर हिन्दुओं ने राहत की सांस ली।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस काल में जैनुल आबदीन और राजा सुखजीवनमल के शासन की तरह गोहत्या पर प्रतिबन्ध लगाया गया। राज्यपाल मोतीराम ने परिहासपुर में सूरजबाग नामक उद्यान का निर्माण करवाया। ईस्वी वर्ष 1821 में राज्यपाल हरिसिंह नलवे ने ऊरी और मुजफराबाद में किले बनवाए तथा श्रीनगर में वितस्ता के किनारे-किनारे छोटे-छोटे बगीचे लगवाए। राज्यपाल कृपाराम (1827-1831) ने श्रीनगर में रामबाग नामक उद्यान की स्थापना करवाई और राज्यपाल मियांसिंह ने (1834-1841) सुन्तकुल स्थान से नीचे बसन्तबाग का निर्माण करवाया था। सिख काल के अन्तिम राज्यपाल गुलाम महीउद्दीन (1841-1846) ने चश्माशाही स्थान पर गरमी के मौसम में निवास के लिए एक सुन्दर भवन की रचना करवाई।

ईस्वी वर्ष 1839 में जब खालसाराज अपने पूर्ण यौवन पर था तो जून मास में 59 वर्ष की आयु में 42 वर्ष राज्य करने के उपरान्त महाराजा रणजीत सिंह का देहान्त हो गया। जुलाई में युवराज खड़गसिंह राजसिंहासन पर अभिषिक्त हुआ पर वह केवल एक वर्ष और दो महीने राज्य करके 5 नवम्बर 1841 को दिवंगत हुआ। राजवंश में पारिवारिक शत्रुता और घात-प्रतिघात का अन्तहीन दौर चल पड़ा। सेना में भी विघटन हुआ और निष्ठाएं बदली जाने लगीं। सेनापति, सामन्त और मन्त्री एक दूसरे की हत्या करने लगे। अराजकता के इस दौर में प्रधानमन्त्री ध्यानसिंह की सहायता से राजकुमार शेरसिंह 20 जनवरी 1841 ईस्वी वर्ष में पंजाब का महाराजा बना। ईस्वी वर्ष 1843 में एक षड्यन्त्र के अन्तर्गत अजीतसिंह और लहनासिंह नामक सामन्तों ने महाराजा शेरसिंह, राजकुमार प्रतापसिंह और प्रधानमन्त्री ध्यानसिंह की हत्या कर दी। इस पर ध्यानसिंह के पुत्र राजा हीरासिंह ने अपने पिता के दोनों हत्यारों

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के सिर धड़ से अलग कर दिए और उनके शवों को सारे लाहौर नगर में घुमाया।

अराजकता और हत्याओं की इस परिस्थिति में जींद कुंअर के गर्भ से उत्पन्न महाराजा रणजीतसिंह के नौ साल के पुत्र राजकुमार दिलीपसिंह को पंजाब के राजसिंहासन पर अभिषिक्त करके हीरासिंह स्वयं उसका प्रधानमन्त्री बन गया। उसने दो वर्ष तीन मास तक राज्य किया। पर उसने भी अपने ताया राजा गुलाबसिंह तथा चाचा सुचेतसिंह पर घात किए। इनमें भाग्यवश गुलाबसिंह तो बच गए, पर उनका भाई राजा सुचेतसिंह और बेटा सोहनासिंह मारे गए। ईस्वी वर्ष 1844 के अप्रैल मास में सिख सामन्तों में परस्पर जो युद्ध हुआ उसमें अतरसिंह सन्धा-वालिया और दूसरे अनेक योद्धा मार डाले गए।

अराजकता के भयानक दौर में हीरासिंह को हटाकर ईस्वी वर्ष 1845 की 14 मई को जीन्द कुंअर का भाई जवाहरसिंह प्रधानमन्त्री बना, पर उसकी भी हत्या कर दी गई। प्रधानमन्त्री पद से अलग होने के दूसरे दिन ही जम्मू लौटते हुए हीरासिंह पर आक्रमण करके उसे भी मार दिया गया। परन्तु हीरासिंह ने वीरता से युद्ध करके बहुत से सिख सैनिकों को मार गिराया।

भारत पर अधिकार करने की कामना करने वाले अंग्रेज इसी अवसर की ताक में थे। वे शीघ्रतापूर्वक एक के बाद दूसरे और फिर तीसरे युद्ध में सिखों को परास्त कर लाहौर के समीप आ गए। अंग्रेजों के सेनापति लार्ड हार्डिंग ने सिखों से सन्धि की जिसके अनुसार ब्यास और सतलुज का मध्यवर्ती भू-भाग अंग्रेजों के अधिकार में चला गया और इसके साथ डेढ़ करोड़ रुपया युद्ध के हर्जाने के रूप में मांगा गया। सिख इतनी बड़ी रकम देने में असमर्थ थे। जम्मू के राजा गुलाबसिंह ने जो लाहौर दरबार और अंग्रेजों में सन्धि करवाने में मुख्य भूमिका निभा रहे थे, पचहत्तर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लाख रुपये के बदले में काश्मीर का अधिग्रहण मान लिया। ईस्वी वर्ष 1846 के मार्च महीने की 16 तारीख को अमृतसर में अंग्रेजों और राजा गुलाबसिंह के मध्य एक सन्धि हुई जिसमें गुलाबसिंह के अधीन किए जाने वाले इलाके का निर्धारण किया गया तथा अंग्रेजों ने वचन दिया कि उसके अधीन भूमि की रक्षा के लिए यदि आवश्यक हुआ तो वे सहायता करेंगे।

इस सन्धि के अनुसार राजा गुलाबसिंह ने लखपतराय की कमान में एक सैनिक टुकड़ी काश्मीर का विधिवत् अधिग्रहण करने के लिए श्रीनगर भेजी। लाहौर दरबार के तत्कालीन प्रधानमन्त्री लालसिंह के निर्देश पर काश्मीर के राज्यपाल इमामुद्दीन ने इस पर आक्रमण करके लखपतराय और उप-सेनापति रामसिंह को मार दिया। बाकी सैनिकों ने सुरक्षा के लिए हरि पर्वत के किले में शरण ली। इमामुद्दीन ने पूरे चालीस दिन किले को घेरे रखा।

राजा गुलाबसिंह ने अमृतसर सन्धि के अन्तर्गत जब लार्ड हार्डिंग से सहायता मांगी तो उसने तत्काल मेजर लारैन्स को आदेश दिया कि काश्मीर का शासन यथाशीघ्र राजा गुलाबसिंह के अधीन करवाया जाए। डोगरा और अंग्रज सेना के श्रीनगर पहुंचने पर मेजर लारैन्स के समझाने पर राज्यपाल इमामुद्दीन मेजर लारैन्स के पास आया और काश्मीर का राजत्व राजा गुलाबसिंह के सेनापति वजीर रतनू को सौंप दिया। इस प्रकार 1 नवम्बर 1846 ईस्वी वर्ष में काश्मीर राज्यलक्ष्मी ने लाहौर दरबार का परित्याग कर दिया।

राजा गुलाबसिंह डोगरा राजवंश की परम्परा में एक आदर्श शासक थे। पहले उन्होंने अपने प्रताप से जम्मू के राज्य को दृढ़ और शक्तिशाली बनाया और उसके बाद ईस्वी वर्ष 1846 में काश्मीर को प्राप्त करके वे इस विशाल राज्य के महाराजा

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बने। अपने राजत्व काल में इन्होंने जम्मू व काश्मीर राज्य का विस्तार किया और उसकी सीमा उत्तर में तिब्बत तक विस्तृत कर ली। इस क्षेत्र के बहुत से छोटे-छोटे राजाओं को अपने स्वामित्व में लाकर अपनी शक्ति का विस्तार किया।

महाराजा गुलाबसिंह ने चालीस वर्ष तक डोगरा जाति का नेतृत्व किया। लद्दाख को जीतकर उसे भारत में मिलाया। गिलगित, दरदिस्तान, राजौरी, पुंछ तथा दूसरे कई पहाड़ी राज्यों को जीतकर अपने शासन के अधीन किया। अपने जीवनकाल में महाराजा गुलाबसिंह ने चालीस सैनिक अभियान किए और किसी भी सैनिक अभियान में पराजित नहीं हुए। जहां भी आक्रमण किया वहीं विजय प्राप्त की। वर्तमान जम्मू-काश्मीर प्रदेश उन्हीं की देन है। काश्मीर के प्रशासन और उसके प्राकृतिक सौन्दर्य को सुरक्षित रखने की ओर महाराजा गुलाबसिंह ने विशेष ध्यान दिया। मुगल सम्राट जहांगीर के उपरान्त गुलाबसिंह दूसरे शासक थे जिन्होंने काश्मीर की अनेक यात्राएं कीं, कई-कई महीने तक वहां निवास किया और अन्त में अपने प्राणों का परित्याग भी वहीं पर किया। ईस्वी वर्ष 1852 के सितम्बर मास में महाराजा श्रीनगर आए और अगले सोलह मास तक श्रीनगर में रहकर प्रशासन में सुधार किए। दर्शनीय प्राकृतिक स्थानों की यात्राएं करके उनकी उचित देखभाल व सुधार के आदेश दिए। फूलों और फलों की उपज की ओर विशेष ध्यान देने की सलाह दी। उनका सबसे महत्त्वपूर्ण काम प्रशासन के विरुद्ध होने वाले विद्रोहों का दमन करके अपने राज्य की सीमाओं की सुरक्षा-व्यवस्था को दृढ़ करना था।

महाराजा गुलाबसिंह ने अपने जीवनकाल में अपने हाथों से युवराज रणवीरसिंह को राजसिंहासन पर बिठाया और उसका मार्गदर्शन किया।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

30 जून 1857 में गुलाबसिंह 70 वर्ष की अवस्था में श्रीनगर में दिवंगत हुए। रामबाग में लाखों लोगों की उपस्थिति में उनका अन्तिम संस्कार किया गया। उनके दाहस्थल दूधगंगा के किनारे उनका समाधि मन्दिर बनाया गया।

गुलाबसिंह उत्साही, साहसी, दानी, शुद्ध चरित्र के राजा थे। हिन्दू होकर भी इस्लाम और दूसरे धर्मों के प्रति उनका आदरभाव था। मुगल, पठान और सिख शासन के विपरीत उन्होंने प्राचीनकाल के राजाओं की तरह काश्मीर पर शासन किया और कुछ ही काल में अपनी प्रजा में लोकप्रिय हो गए।

गुलाबसिंह के उपरान्त राजकुमार रणवीरसिंह जम्मू-काश्मीर के महाराजा हुए। अपने पिताश्री के आदर्शों पर चलते हुए इन्होंने जम्मू-काश्मीर राज्य के विकास के लिए अनेक योजनाएं बनाईं और उन्हें लागू किया। स्वस्थ प्रशासन के लिए काश्मीर में श्रीनगर, शोपियान, अनन्तनाग, कमराज और पहाड़ी इलाका—ये पांच प्रशासकीय विभाग स्थापित किए। स्थान-स्थान पर अस्पताल, पाठशालाएं, मदरसे और धर्मशालाएं बनवाई गईं। धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में बहुत काम किया गया। महाराजा ने जम्मू में श्री रघुनाथ मन्दिर, हव्वाकदल के समीप रणवीरेश्वर मन्दिर तथा रैनावादी में प्रतापस्वामी का मन्दिर बनवाया। श्रीनगर में जामा मस्जिद की मरम्मत के लिए बाईस सौ रुपये प्रदान किए। ईस्वी वर्ष 1866 में महाराजा के आदेश से श्रीनगर के मार्गों पर समतल पत्थर बिछाए गए। ईस्वी वर्ष 1871 में श्रीनगर में महाराजगंज तथा अमीराकदल क्षेत्र में महाराज बाजार बनवाए गए। लालमण्डी में राजमहल भी बनवाया गया। ईस्वी वर्ष 1876 में ब्रिटेन का भावी सम्राट प्रिंस आफ वेल्स जम्मू आया। महाराजा ने उसका भव्य स्वागत किया और उसकी यात्रा के स्मारक के रूप में

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जम्मू में प्रिंस आफ वेल्स कालेज की स्थापना की जिसे आज साइंस कालेज कहा जाता है। ईस्वी वर्ष 1877 में काश्मीर में अकाल तथा ईस्वी वर्ष 1885 में भूकम्प से पीड़ित जनता को सहायता के लिए महाराजा ने लाखों रुपये खर्च किए। महाराजा रणवीरसिंह अपने उदार और न्यायशील शासन के कारण अपनी प्रजा में काश्मीर के प्राचीन राजाओं प्रवरसेन, मेघवाहन और जैमुल आबदीन की तरह जनप्रिय हो गये। महाराजा रणवीरसिंह जी के राजत्वकाल में गरमी के मौसम में अंग्रेज काफी संख्या में काश्मीर में पर्यटन के लिए आने लगे थे। उनकी सहूलियत के लिए हर साल आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के दाम नियत कर दिए जाते थे। आज से लगभग एक सौ बीस वर्ष पहले आम इस्तेमाल की वस्तुओं के रेट इस प्रकार थे—

1. आटा—16 से 32 सेर, एक रुपये का।
2. जौ—डेढ़ मन एक रुपये का।
3. डबल रोटी—एक रुपये की बारह।
4. तन्दूर की रोटी—एक रुपये की बारह।
5. माखन—एक रुपये का चार सेर।
6. अण्डे—दो से तीन आने दर्जन।
7. घी—एक रुपये का चार सेर।
8. एक बकरी या भेड़—दो से पांच रुपये की।
9. दूध—एक रुपये का 16 से 24 सेर।
10. मांस कच्चा—एक रुपये का आठ सेर।
11. आलू—एक रुपये के 16 सेर।
12. चावल—एक रुपये के 16 सेर।
13. लकड़ी—एक रुपये की आठ मन।
14. घास—एक रुपये का 4 से 6 मन।
15. घोड़ा/खच्चर—एक दिन का किराया आठ आने।
16. कुली—पालकी उठाने वाले चार से छः आना प्रतिदिन।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ईस्वी वर्ष 1885 के सितम्बर मास में महाराजा रणवीरसिंह का निधन होने पर उनके बड़े पुत्र राजकुमार प्रतापसिंह राज-सिंहासन पर बैठे। राजकुमार प्रतापसिंह का जन्म ईस्वी वर्ष 1850 में हुआ था। इनके दो छोटे भाईयों का नाम अमरसिंह और रामसिंह था। महाराजा प्रतापसिंह अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति के शासक थे। संस्कृत, डोगरी, अंग्रेजी और फारसी भाषाओं के जानकार थे। इन्होंने अगले चालीस वर्ष तक काश्मीर पर शान्तिपूर्वक शासन किया। महाराजा रणवीरसिंह जी द्वारा किए गए पुण्य कर्मों के प्रभाव से इन्हें न तो राज-विद्रोहों का सामना करना पड़ा और न ही सैनिक अभियान करने की आवश्यकता हुई।

महाराजा प्रतापसिंह के शासक बनते ही अंग्रेजों ने काश्मीर में हस्तक्षेप करना आरम्भ कर दिया और ईस्वी वर्ष 1888 में काश्मीर में अपना प्रतिनिधि नियुक्त करने में सफल हो गए। धीरे-धीरे राज्य के प्रमुख व्यक्तियों को अपने साथ मिलाकर अंग्रेज प्रतिनिधि कर्नल पैरी ने एक सभा बनाई और राजा के सभी अधिकार ले लिए। राजा अमरसिंह इस सभा के अध्यक्ष थे और राजा रामसिंह, पं० सूरजकौल एवं रायबहादुर भागराम प्रमुख सदस्य थे। ये सब अंग्रेजों के अनुगामी थे, अतः काश्मीर का शासन अंग्रेजों की इच्छानुसार चलने लगा। ईस्वी वर्ष 1889 के अप्रैल मास की 18 तारीख को इस सभा को मान्यता दे दी गई। प्रजा में असंतोष और राजकोश का दुरुपयोग इस सभा की स्थापना में कारण बताये गए।

इस घटना के उपरान्त काश्मीर में अंग्रेजी प्रतिनिधि कर्नल आर पैरी ने अपना षड्यन्त्र जारी रखा और चार महीने के बाद सितम्बर मास में जम्मू-काश्मीर राज्य की सेना का अपने ढंग से संगठन करके महाराजा का सेना के साथ सम्बन्ध समाप्त कर

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
दिया। इस प्रकार महाराजा प्रशासन के समस्त अधिकारों से रहित होकर शक्तिहीन हो गया। प्रदेश की मुसलमान प्रजा को खुश करने के बहाने फारसी के स्थान पर उर्दू को सरकारी भाषा का दर्जा दे दिया गया।

अंग्रेज काश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य और उसकी सामयिक स्थिति के कारण उसे पूर्णरूप से हथियाना चाहते थे, पर महाराजा के प्रति उनकी नीति का भारत में प्रबल विरोध हुआ। अमृत बाजार पत्रिका और देश के अन्य समाचार पत्रों ने अंग्रेजों की स्वार्थ नीति की खुलकर निन्दा की। ब्रिटेन की लोकसभा में भी कई सदस्यों ने महाराजा के प्रति वायसराय के व्यवहार को निन्दनीय कहा गया। इस प्रकार के विरोध से अंग्रेज प्रतिनिधि डर गया और उसने अपनी योजना की गति मन्द कर दी।

अपने प्रशासकीय अधिकारों की कटौती के विरोध में महाराजा प्रतापसिंह द्वारा भेजे गए विरोध पत्र को वायसराय पहले ही निरस्त कर चुका था, पर महाराजा ने 1894 ईस्वी वर्ष में पुन: वायसराय को लिखा। दूसरे देशों द्वारा की गई निन्दा से भयभीत वायसराय ने कुछ अधिकार वापस किए। इसके उपरान्त ईस्वी वर्ष 1895 में कुछ और अधिकार महाराजा को लौटाए गए। महाराजा ने अपनी लड़ाई जारी रखी तो ईस्वी वर्ष 1907 में वायसराय ने अपने द्वारा स्थापित सभा/कौन्सिल भंग करके महाराजा को पूर्ण अधिकार सौंप दिए। प्रशासन में महाराजा की सहायता के लिए वित्तमन्त्री, गृहमन्त्री, न्यायमन्त्री एवं प्रधानमन्त्री नियुक्त करने का निर्देश दिया। ईस्वी वर्ष 1907 के आस-पास भारत में अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का वातावरण बनने लगा था। सबसे पहले बंगाल में विद्रोह हुआ। काश्मीर में भी इसका प्रभाव पड़ा। इससे अंग्रेज प्रतिनिधि कुछ और शिथिल हो गया। महाराजा की शक्ति और बढ़ी। ईस्वी वर्ष 1914 के
CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विश्व युद्ध में महाराजा ने सेना व धन से अंग्रेजों की सहायता की। अंग्रेज राजा के उपकार से कृतज्ञ हुए। ईस्वी वर्ष 1915 में महाराजा प्रतापसिंह ने अपने छोटे भाई राजा अमरसिंह के पुत्र राजकुमार हरिसिंह को काश्मीरी सेना का सेनापति नियुक्त किया।

ईस्वी वर्ष 1922 में वायसराय ने महाराजा के सभी अधिकार लौटा दिए और उन्हें परामर्श देने के लिए एक समिति गठित की गई, जिसके प्रमुख राजकुमार हरिसिंह थे। ईस्वी वर्ष 1923 में अंग्रेजों की भेदनीति से प्रभावित काश्मोरी मुसलमानों ने अपने अधिकारों की मांग की। इसी वर्ष जब वायसराय काश्मीर आया तो उसे मांग पत्र पेश किया गया कि सरकारी सेवाओं में उन्हें लिया जाए और बेगार प्रथा समाप्त की जाए। इस मांग पत्र के फलस्वरूप ईस्वी वर्ष 1924 में मुसलमानों के हित का विचार करने के लिए महाराजा प्रतापसिंह की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई। इस काल में भारत में स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए आन्दोलन तीव्र होने लगा था। हिन्दू और मुसलमान अपने-अपने ढंग से अंग्रेज सरकार के विरोध में अभियान चला रहे थे। इसी प्रकार के संघर्षमय काल में, ईस्वी वर्ष 1925 के दिसम्बर मास की 23 तारीख को महाराजा प्रतापसिंह का देहान्त हो गया।

महाराजा प्रतापसिंह अत्यन्त धार्मिक, उदार और आदर्श चरित्र के स्वामी थे। बदले हुए राजनैतिक परिवेश के कारण उन्हें अपने दादा महाराजा गुलाबसिंह तथा पिताश्री महाराजा रणवीरसिंह की तरह युद्ध करने का अवसर नहीं मिला। उन्हें महाराजा बनने के कुछ समय उपरान्त ही अंग्रेजों के षड्यन्त्र के कारण शासन के अधिकार से वंचित होना पड़ा था। उनका अधिकांश राजत्वकाल अपने अधिकारों की पुनः प्राप्ति में ही

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

व्यतीत हो गया। महाराजा प्रतापसिंह ही बचपन से काश्मीर में बाढ़ से होने वाली तबाही देखते आ रहे थे। ईस्वी वर्ष 1873, 1883, 1885, 1890 और 1903 में बाढ़ ने काश्मीर में बहुत विनाश किया था। अत: उन्होंने सबसे पहले काश्मीर को सड़क मार्ग से शेष भारत के साथ जोड़ने के लिए सड़कों का जाल बिछाया। इसमें बहुत समय और बहुत धन लगा पर अन्त में ईस्वी वर्ष 1922 में जम्मू-श्रीनगर राजमार्ग बनकर तैयार हो गया। महाराजा ने कलकत्ता से ड्रेजर मंगवाकर वितस्ता और ऊलरलेक के तल की सफाई कराई। इससे पूर्व काश्मीर के राजा अवन्तीवर्मा के मन्त्री सुय्य ने भी नदी और ऊलर के तल को साफ करवाया था। प्रदेश में बिजली घरों का निर्माण, रेशम के कारखाने को स्थापना, खानों से कोयला और नीलम निकालने की व्यवस्था का प्रबन्ध इनके ही शासन काल में हुआ था।

प्रतापसिंह नि:सन्तान थे, अत: अमरसिंह के पुत्र हरिसिंह जम्मू-काश्मीर के महाराजा बने। ईस्वी वर्ष 1926 के फरवरी मास में इनका राजतिलक हुआ। महाराजा ने प्रशासन में सुधार और सहायता के लिए एक छ: सदस्यों वाली परिषद बनाई जिसमें अलवियन वैनर्जी, मेजर जनरल जनकसिंह, मौलवी नजीर, ई० सी० वेकफील्ड, तुलसीराम और पी० के० बहल को सदस्य नामजद किया। शासन की बागडोर हाथ में आते ही महाराजा ने प्रजासुख के लिए अनेक सुधारों की घोषणा की। ईस्वी वर्ष 1927 में प्रदेश की जनता के भविष्य को सुरक्षित करने के उद्देश्य से उन्होंने स्टेट सब्जैक्ट का कानून लागू किया। ईस्वी वर्ष 1928 में कन्याओं की विवाह आयु 16 वर्ष तथा लड़कों की 18 वर्ष नियत की। चेचक का टीका लगवाना सबके लिए अनिवार्य किया। युवकों को धूम्रपान करने से रोक दिया गया। पांच वर्ष की अवस्था के बाद सभी बच्चों के लिए शिक्षा अनिवार्य

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कर दी गई तथा विधवा विवाह की अनुमति भी प्रदान की। राजपूत परिवारों में कन्यावध की प्रथा को निवारित किया और हरिजनों को तालाब-कुएं से जल भरने तथा मन्दिरों में प्रवेश का अधिकार दिया। प्रदेश में खानों सम्बन्धी सर्वेक्षण करवाकर पाडर में नीलमणि की खान प्राप्त की।

ईस्वी वर्ष 1929 में काश्मीरी मुसलमानों ने पंजाब के लुधियाना शहर में सम्मेलन करने के बाद महाराजा को स्मृति पत्र दिया कि प्रशासन में हिन्दू-मुसलमान का भेदभाव समाप्त किया जाए। ईस्वी वर्ष 1930 में मौलाना अबुलकलाम आजाद अपने साथियों सहित काश्मीर आए और साम्प्रदायिक भावनाएं शान्त कीं। इसी वर्ष शेख अब्दुल्ला ने अलीगढ़ विश्वविद्यालय से एम० एस० सी० की उपाधि प्राप्त की और श्रीनगर के सरकारी हाई स्कूल में अध्यापक के रूप में नियुक्त हुए। ईस्वी वर्ष 1931 में शेख अब्दुल्ला के नेतृत्व में काश्मीरी डोगरा शासन के प्रति विद्वेष फैलाने लगे। धीरे-धीरे यह विद्वेष फैलता गया। साम्प्रदायिक दंगा होने पर पुलिस की गोली से दस व्यक्ति मारे गए। बहुत से घायल भी हुए। अनेक लोग बन्दी बनाए गए।

ईस्वी वर्ष 1931 और 1932 में काश्मीर और प्रदेश के दूसरे नगरों में भी लगातार उपद्रव होते रहे। महाराजा हरिसिंह ने प्रजा के सन्तोष तथा घटनाओं के सम्बन्ध में असलियत जानने के लिए दो निष्पक्ष कमीशन बनाए। इनमें एक के अध्यक्ष ग्लांसी ग्रिविस तथा दूसरे के मिडिलटन थे। ग्लांसी कमीशन के अन्य सदस्य जे० ए० अशनी और प्रेमनाथ बजाज, काश्मीर से गुलाम अब्बास और ए० एन० शर्मा जम्मू से थे। इस कमीशन ने 75 सदस्यों वाली प्रजा सभा बनाने का सुझाव दिया। जो राज्य में प्रशासन सम्बन्धी दिशा निर्देश देगी। इसमें 35 सदस्य महाराजा द्वारा मनोनीत तथा 40 सदस्य निर्वाचित होने थे। 40 में 31

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्थान मुसलमानों के लिए सुरक्षित थे। 33 गैर सरकारी सदस्यों में सात हिन्दू, सात मुसलमान तथा एक सिख जम्मू प्रदेश से, 11 मुसलमान, चार हिन्दू तथा सीमावर्ती प्रदेश से दो मुसलमान और एक हिन्दू लिया जाए। इस प्रकार प्रजा सभा में 20 मुसलमान, 11 हिन्दू, एक सिख और एक बौद्ध रखा गया। ईस्वी वर्ष 1934 के अक्तूबर में प्रजासभा का अधिवेशन पन्द्रह दिन तक हुआ जिसमें राज्य के कर्त्तव्य निश्चित किए गए।

भारत में महात्मा गांधी के नेतृत्व में जनता लोकतन्त्र के लिए संघर्ष कर रही थी, अत: काश्मीरी मुसलमान भी अपना शासन प्राप्त करने के लिए तैयार हो गए। काश्मीर की सेना अंग्रेजों की इच्छानुसार चलती थी, अत: महाराजा अपने अधिकारों की रक्षा के लिए उसकी सहायता नहीं ले सका।

ईस्वी वर्ष 1936 के मई मास की 8 तारीख को मुस्लिम कान्फ्रेंस ने स्वशासन दिवस मनाया। कालविन के प्रधानमन्त्री पद से मुक्त होने पर कुछ समय के लिए खुसरो जंग प्रधानमन्त्री रहे। ईस्वी वर्ष 1937 के अप्रैल मास में गोपालास्वामी आयंगर इस पद पर आसीन हुए। इसी वर्ष श्रमिक आन्दोलन के नेता बख्शी गुलाम मुहम्मद तथा गुलाम मुहम्मद सादिक के नेतृत्व में मजदूरों ने अपना वेतन बढ़ाने की मांग को लेकर सबसे पहला जलूस निकाला। ईस्वी वर्ष 1938 के अगस्त मास में मुस्लिम कान्फ्रेंस ने फिर स्वशासन दिन मनाया और "हम लोग अपना शासन खुद करेंगे" जैसे नारे लगाते हुए शहर में जलूस निकाले। इस पर कई लोग बन्दी हुए तथा कई लोग प्रदर्शन करते समय पुलिस के लाठी चार्ज से घायल हुए।

राजनीतिक परिस्थितियों से विवश होकर ईस्वी वर्ष 1939 के जून मास की 11 तारीख को मुस्लिम कान्फ्रेंस का नाम नेशनल कान्फ्रेंस रख दिया गया। इसके नेता शेख मुहम्मद

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अब्दुल्ला थे। परन्तु कुछ पाकिस्तान परस्त साम्प्रदायिक लोगों ने मुस्लिम कान्फ्रेंस को जीवित रखा। इस प्रकार काश्मीर में डोगरा शासन के विरुद्ध नेशनल कान्फ्रेंस और मुस्लिम कान्फ्रेंस दो संगठन थे। मुस्लिम कान्फ्रेंस पाकिस्तान समर्थक थी।

ईस्वी वर्ष 1939 के सितम्बर मास में दूसरा विश्वयुद्ध आरम्भ हुआ। इससे भारत में अंग्रेजों की स्थिति और भी कमजोर हुई। इण्डियन नेशनल कांग्रेस का काश्मीर में भी प्रभाव बढ़ा। ईस्वी वर्ष 1940 के मई मास में पंडित जवाहरलाल नेहरू और अब्दुल गफ्फारखां श्रीनगर आए। शेख अब्दुल्ला व अन्य नेताओं से वातचीत की। ईस्वी वर्ष 1943 में गोपालास्वामी आयंगर ने प्रधानमन्त्री पद से अवकाश ग्रहण किया। उनके बाद महाराजासिंह, कैलाश नारायण हकसर और सर वी० एन० राव प्रधानमन्त्री बने। ईस्वी वर्ष 1943 में अगस्त मास की 13 और 14 तारीख को मुस्लिम कान्फ्रेंस का अधिवेशन श्रीनगर में हुआ। इस अधिवेशन में मुस्लिम लीग के सभापति नवाब यारजंग भी भाग लेना चाहते थे। महाराजा ने उन्हें अनुमति न दी। मुहम्मद अली जिन्ना ने इस सम्मेलन को अपना आशीर्वाद दिया। सम्मेलन ने लोगों की साम्प्रदायिक भावनाओं को इतना विषैला वना दिया कि सरकार के विरुद्ध दंगा हो गया। इस पर गोली चली और नौ व्यक्ति मारे गए। अनेक घायल हुए।

ईस्वी वर्ष 1944 में 26 जनवरी के दिन राज्य कांग्रेस के सदस्यों ने तिरंगा झण्डा फहराकर स्वाधीनता की कामना की। मुस्लिम लीग के नेता मुहम्मद अली जिन्ना नौ मई को जम्मू पहुंचे। केवल मुस्लिम कान्फ्रेंस वालों ने उनका स्वागत किया। दस मई को जिन्ना श्रीनगर पहुंचे। जून मास में मुस्लिम कान्फ्रेंस के जामा मस्जिद में किए गए अधिवेशन में जिन्ना का सम्मान किया गया। जिन्ना जुलाई के तीसरे सप्ताह तक श्रीनगर में रहे।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शेख अब्दुल्ला और मुस्लिम कान्फ्रेंस के नेताओं ने उनके विचार ग्रहण किए।

इसी वर्ष 29 और 30 सितम्बर को नेशनल कान्फ्रेंस का वार्षिक अधिवेशन श्रीनगर में हुआ। इसमें नये काश्मीर के निर्माण के लिए स्वीकृत समाजवादी सिद्धान्तों को पुस्तकाकार प्रदान किया गया। इसके प्रथम भाग में नियम तथा दूसरे भाग में आर्थिक योजनाओं का विवरण था। सारे नियम और योजनाएं रूसी सिद्धान्त के अनुसार थीं।

ईस्वी वर्ष 1945 के जून मास की 25 तारीख को महाराजा हरीसिंह ने रामचन्द काक को प्रधानमन्त्री नियुक्त किया। अगस्त में पंडित जवाहरलाल नेहरू अबुलकलाम आजाद और अब्दुल गफ्फार खां काश्मीर आए। हिन्दू-मुसलमान सभी काश्मीरियों ने उनका स्वागत किया। नेशनल कान्फ्रेंस ने 3, 4 और 5 अगस्त को सोपुर में अपना वार्षिक अधिवेशन किया। इसमें शामिल होकर नेहरू और गफ्फार खां ने शेख अब्दुल्ला की बहुत तारीफ की।

मुहम्मद अली जिन्ना और दूसरे फिरका परस्त नेताओं के दुष्प्रचार से भारत और काश्मीर में मुसलमान दो भागों में बंट गए। कुछ लोग मुसलमानों की हकूमत चाहते थे और कुछ लोग हिन्दुओं के साथ मिलकर हकूमत बनाने के हिमायती थे। ईस्वी वर्ष 1946 के मार्च मास में ब्रिटिश केबिनेट मिशन भारत आया। शेख अब्दुल्ला ने उसे मैमोरेण्डम दिया कि काश्मीर राज्य में मुसलमानों के अतिरिक्त जो लोग रहते हैं वे जल्दी काश्मीर से चले जाएं। शेख अब्दुल्ला के इन विचारों का भारत में प्रबल विरोध हुआ। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष आचार्य जे० बी० कृपलानी ने शेख अब्दुल्ला के इन विचारों की कठोर निन्दा की। नाराज होकर शेख अब्दुल्ला ने इन विचार

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को त्याग दिया, पर महाराजा के विरुद्ध अत्यन्त कठोर वाणी का प्रयोग किया। 21 मई 1946 को उन्हें बन्दी बना लिया गया। शेख अब्दुल्ला का बन्दी होना जवाहरलाल नेहरू से न सहा गया। उन्होंने काश्मीर जाने का इरादा किया, पर महाराजा ने अनुमति न दी। बार-बार रोके जाने पर भी नेहरू शेख के प्रति अपने स्नेह के कारण 19 जून को रावलपिण्डी के राजमार्ग से कोहाला पहुंचे। वहां बन्दी हुए और दिल्ली लौट गए। इसके बाद फिर यत्न करके राजा से अनुमति लेकर चौबीस जुलाई को श्री नेहरू श्रीनगर पहुंचे। जेल में शेख से मुलाकात की। शेख अब्दुल्ला की तरफ से भारत के प्रसिद्ध वकील श्री आसफ अली ने वकालत की। उसके बावजूद कठोर एवं आपत्तिजनक भाषण करके दंगे भड़काने के आरोप में उन्हें दस सितम्बर को 3 वर्ष का कारावास तथा पांच सौ रुपये जुर्माना किया गया।

अंग्रेजों ने 7 जून 1947 को अपनी संसद में भारत को स्वतन्त्र करने का निर्णय लिया। उन्होंने 15 अगस्त 1947 को भारत भूमि छोड़ने का निश्चय करके कहा कि मुस्लिम बहुल क्षेत्र में पाकिस्तान बनेगा। गिलगित्त काश्मीर के महाराजा को सौंप दिया जाएगा। महाराजा हरिसिंह ने वायसराय माउण्टवेटन को काश्मीर यात्रा का निमन्त्रण दिया। वायसराय 20 जून ईस्वी वर्ष 1947 को श्रीनगर पहुंचा। चार दिन तक काश्मीर का भ्रमण किया। महाराजा को परामर्श दिया कि जम्मू व काश्मीर भारत अथवा पाकिस्तान में शामिल हो, ऐसा कोई नियम नहीं होगा। इसमें जनमत का ध्यान रखना होगा। प्रजा विरोध न करे, इसलिए मुस्लिम बहुल राज्य का पाकिस्तान में सम्मिलन उचित होगा, ऐसा न करने पर संकट उपस्थित हो सकता है। इस प्रकार की और भी बातें करके वायसराय ने महाराजा को भ्रमित कर दिया। वायसराय ने महराजा को विश्वास दिलाया कि यदि वह

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पाकिस्तान के साथ मिलता है तो भारत इसको अमैत्रीपूर्ण कार्य नहीं मानेगा। वायसराय द्वारा काश्मीर को पाकिस्तान के साथ मिलने के लिए जोर देने पर महाराजा हरिसिंह अनिर्णय की स्थिति में आ गए। इसके साथ ही प्रधानमन्त्री रामचन्द काक 19 जुलाई को मुहम्मद अली जिन्ना से मिले। काक की पत्नी अंग्रेज महिला थी। वे चाहते थे कि काश्मीर पाकिस्तान से मिले।

इस स्थिति में श्री नेहरू ने काश्मीर जाकर महाराजा हरिसिंह से बात करने का निर्णय किया, परन्तु श्री नेहरू की काश्मीर नीति से कांग्रेस कार्य समिति सरदार पटेल, मौलाना आजाद आदि नेता सहमत नहीं थे, अतः गांधी जी ने स्वयं काश्मीर जाकर महाराजा हरिसिंह से बात करना उचित समझा।

1 अगस्त को महात्मा गांधी ने श्रीनगर में दो दिन तक ठहरकर महाराजा हरिसिंह को समझाया कि न तो राज्य को पाकिस्तान में मिलाओ और न स्वयं को अलग रखो। हिन्दू-मुसलमान के भेद से मनुष्य में भेद मत करो। मनुष्यों को मनुष्यों के रूप में देखो। हिन्दू या मुसलमान के रूप में नहीं। महात्मा गांधी जी ने राजा पर जोर दिया कि वह पाकिस्तान से न मिले। उन्होंने महाराजा का यह विचार बदल दिया कि काश्मीर का पाकिस्तान से सम्मिलन अनिवार्य है। गांधी जी से प्रभावित महाराजा ने तत्काल अपने प्रधानमन्त्री रामचन्द काक को हटाकर जनरल जनकसिंह को उस पद पर बिठा दिया। रामचन्द काक के हटते ही पाकिस्तान से मिलने की बातचीत में शिथिलता आ गई।

ईस्वी वर्ष 1947 की अगस्त मास की 14 तारीख को पाकिस्तान बना। मुहम्मद अली जिन्ना उसके प्रथम गर्वनर जनरल हुए। पन्द्रह अगस्त को भारत स्वतन्त्र हो गया। उसके गर्वनर जनरल लार्ड माउण्टबेटन ही बने रहे। जम्मू काश्मीर के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रधानमन्त्री जनकसिंह ने भारत और पाकिस्तान को तार द्वारा निवेदन किया कि जब तक काश्मीर दोनों में से किसी एक के साथ नहीं मिलता तब तक पहले की तरह शासन चलने दिया जाए। पाकिस्तान ने इस स्थिति को स्वीकार कर लिया पर भारत ने काश्मीर के प्रतिनिधि को दिल्ली बुलाकर कहा कि जब तक शेख अब्दुल्ला जेल में हैं, क्या बात हो सकती है। तभी जम्मू-काश्मीर को पाकिस्तान के साथ मिलाने की इच्छा रखने वाले मुसलमानों ने अनेक नगरों और उपनगरों में उपद्रव करना आरम्भ कर दिया। जम्मू-काश्मीर के पाकिस्तान की सीमा के साथ लगने वाले नगर और गांवों पर पाकिस्तानी मुसलमान लूटपाट और हत्याएं करने लगे। भारत और पाकिस्तान में भी दिन-रात हिन्दू-मुसलमानों में दंगे होने लगे। जम्मू-काश्मीर प्रदेश के पुंछ, राजोरी, मीरपुर, सांबा, कठूआ, राजपुरा आदि स्थानों पर जब पाकिस्तानियों ने आक्रमण और लूटपाट आरम्भ की तो प्रदेश के मुस्लिम सैनिक और पुलिस के सिपाही उनके साथ मिल गए। पाकिस्तान ने प्रदेश में आने वाली वस्तुओं पर भी रोक लगा दी और दोनों मार्ग बन्द कर दिए। ईस्वी वर्ष 1947 के अक्तूबर मास की 15 तारीख को मेहरचन्द महाजन जनकसिंह के स्थान पर प्रधानमन्त्री नियुक्त किए गए। जिन्ना के प्रतिनिधि मेजर शाह ने उनसे मिलकर कहा कि वे बिना देर किए काश्मीर को पाकिस्तान में मिला दें। प्रधानमन्त्री ने कहा कि पहले रास्ते खोल दिए जाएं, फिर विचार किया जाएगा। मेजर शाह ने जब इस सम्बन्ध में जिन्ना से सम्पर्क किया तो जवाब मिला कि जब तक काश्मीर पाकिस्तान का अंग नहीं बन जाता तब तक न तो रास्ता मिलेगा और न ही बाहर से वस्तुएं जाने दी जाएंगी।

इसी महीने में पाकिस्तानी सैनिकों, कवायलियों और दूसरे दंगाईयों द्वारा काश्मीर सीमा पर सामूहिक आक्रमण आरम्भ हो

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गए। उस समय राज्य की सेना में जो मुसलमान थे, वे शत्रुओं से मिल गए। शेष सेना अलग-अलग स्थानों पर बिखरी थी, और उपद्रवियों ने राज्य की पूरी सीमा पर आक्रमण किया था, अतः उन्हें रोक पाना उनके बस की बात नहीं रह गई थी। सर्वत्र हाहाकार होने लगा। अक्तूबर मास की 24 तारीख को कबायली ऊरी पहुंच गए। महोरा पहुंचकर उसे तबाह कर दिया। सब ओर से सहायता के लिए सन्देश पर सन्देश आने लगे। महाराजा ने चिन्तित होकर भारत से अपनी प्रजा की सुरक्षा की प्रार्थना की। दूसरे दिन कबायली मार्गवर्ती गांवों को लूटते, हत्याएं और बलात्कार करते बारहमूला आ पहुंचे। उन्होंने बिना भेदभाव के हिन्दुओं, सिखों और मुसलमानों की हत्या की और उनका जेवर, नकदी जो भी मिला लूट लिया। स्त्रियों और बच्चों का भी निर्दयता से वध किया गया।

अक्तूबर मास की 25 तारीख को दिल्ली में भारतीय सुरक्षा समिति ने विचार किया कि काश्मीर को कबायली डाकुओं और दूसरे आक्रमणकारियों से कैसे बचाया जाए। अब वे श्रीनगर शहर से केवल अठारह मील दूर रह गए थे। माउण्टबेटन ने कहा कि प्रजा के मत की अनदेखी करके काश्मीर का भारत में मिलन नहीं हो सकता। फिर निर्णय हुआ कि कुछ लोग हवाई जहाज से काश्मीर जाकर वहां की वस्तुस्थिति का निरीक्षण करें। उसी दिन भारत से सहायता प्राप्त शेख अब्दुल्ला जेल से मुक्त होकर हवाई जहाज से दिल्ली पहुंचे। दिल्ली से गृह मन्त्रालय के श्री वी० पी० मेनन स्थल और वायुसेना के अधिकारियों के साथ बी० ओ० ए० सी० हवाई जहाज से श्रीनगर पहुंचे। यह जहाज श्रीनगर से नागरिकों को हटाने के लिए मंगाया गया था। मेनन श्रीनगर को शमशान की तरह शान्त देखकर सकते में आ गए और यथाशीघ्र मेहरचन्द से मिलने उनके घर गए। मेहरचन्द

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ने उन्हें बताया कि शत्रु दो या तीन दिन में श्रीनगर में पहुंच जाएंगे। अत: भारत को तुरन्त सहायता करनी चाहिए। अन्त में सब लोगों ने निर्णय किया कि महाराजा अपने परिवार के साथ श्रीनगर छोड़ दें और सेनापति राजेन्द्रसिंह आक्रमणकारी डाकुओं को बारहमूला में रोकने का यत्न करें। महाराजा 25 अक्तूबर को जम्मू चले आए। मेहरचन्द महाजन और वी० पी० मेनन दिल्ली गए और सुरक्षा समिति को सारी परिस्थिति बताई। माउण्टबेटन ने कहा जब तक राजा अपना राज्य भारत का अंग नहीं बना देता, तब तक सहायता नहीं दी जा सकती। राज्य से कबायली डाकुओं को निकालने के बाद शान्ति हो जाने पर किसी देश के साथ मिलने के सम्बन्ध में प्रजा का बहुमत लिया जा सकता है। सुरक्षा समिति के सदस्यों ने इस बात को स्वीकार कर लिया। तत्काल मेनन एवं प्रधानमन्त्री मेहरचन्द महाजन हवाई जहाज से जम्मू पहुंचे। महाराजा हरिसिंह ने तत्काल भारत की अंगता स्वीकार कर ली और अपने हाथ से माउण्टबेटन को लिखा कि बिना देर किए सेना भेजी जाए। देरी होने पर सफलता नहीं मिलेगी।

महाराजा हरिसिंह के हाथ का लिखा पत्र लेकर मेनन जहाज से दिल्ली पहुंचे। सरदार वल्लभ भाई पटेल हवाई अड्डे पर मेनन की प्रतीक्षा कर रहे थे। शाम को पटेल मेनन के साथ सुरक्षा समिति में गए। वहां पर स्थल, नभ और जल सेना के तीनों अंग्रेज सेनापतियों ने काश्मीर में सेना भेजने को उचित नहीं कहा। इस पर गृहमन्त्री सरदार पटेल और रक्षामन्त्री सरदार बलदेवसिंह ने एक साथ कहा कि तत्काल काश्मीर की रक्षा की जाए। बाद में जैसा होगा देखा जाएगा। सेनापतियों को उसी समय काश्मीर में सेना भेजने के आदेश दिए गए। तत्काल एक

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सौ सिविल एयर क्राफ्ट तथा वायु सेना के हवाई जहाज सेना पहुंचाने के काम में लग गए।

लाहौर में जब जिन्ना को इस बात की सूचना मिली तो उन्होंने भारतीय सेना को रोकने के लिए अपने सेनापति ग्रेसी को आदेश दिया। सेनापति ग्रेसी अंग्रेज अधिकारी के अधीन था। उसने इस बात की आज्ञा नहीं दी। भारतीय सेना के काश्मीर पहुंचने पर निहत्थी और भोली-भाली जनता के हत्यारे और लुटेरे कबायली कायरों की तरह भागने लगे। उनमें बहुत से मारे गए, कुछ पकड़े गए और जो जनता के हाथ में लगे उनके टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए।

जम्मू-काश्मीर रियासत के अन्तिम डोगरा शासक महाराजा हरिसिंह के अनुरोध पर प्रदेश में भारतीय सेना के प्रवेश के साथ ही एक सौ एक वर्ष और आठ मास के पश्चात् 27 अक्तूबर 1947 को काश्मीर में डोगरा राज्य की सम्मानपूर्वक समाप्ति हुई।

नए युग का आरम्भ हुआ। नए काश्मीर में लोकप्रिय जननेता शेरे काश्मीर शेख मुहम्मद अब्दुल्ला जम्मू-काश्मीर प्रदेश के प्रथम प्रधानमन्त्री बने। ईस्वी वर्ष 1953 में राजनैतिक परिस्थितियों के कारण बख्शी गुलाम मुहम्मद प्रधानमन्त्री बने और ईस्वी वर्ष 1964 तक इस पद पर रहे। इसके बाद शमसुद्दीन, जी० एम० सादिक और सैयद मीर कासिम ईस्वी वर्ष 1975 तक इस पद पर आसीन हुए। ईस्वी वर्ष 1975 में शेख अब्दुल्ला दूसरी बार प्रदेश के शासक बनाए गए। ईस्वी वर्ष 1982 में उनके निधन के उपरान्त उनके बड़े पुत्र डा० फारुख अब्दुल्ला ने मुख्यमन्त्री पद प्राप्त किया। कुछ ही समय बाद शासक दल नेशनल कान्फ्रेंस में विघटन के परिणास्वरूप श्री गुलाम मुहम्मद शाह मुख्यमन्त्री बने। इन्होंने 1984 से फरवरी 1986 तक शासन किया। प्रशासनिक अफरातफरी

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और साम्प्रदायिक दंगों के कारण इन्हें पदच्युत करके प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू किया गया। राज्यपाल जगमोहन ने शासन की बागडोर सम्भाल ली।

ईस्वी वर्ष 1947 से 1986 तक डा० कर्णसिंह, भगवान सहाय, के० एम० पनिक्कर, एल० के० झा, बी० के० नेहरू आदि राज्यपालों को काश्मीर में शासन करने का मौका नहीं मिला था। जगमोहन को यह मौका मिला तो उन्होंने अपने आठ मास के शासन में निर्माण, प्रशासन में सुधार और सांस्कृतिक क्षेत्र में ऐसे कीर्तिमान स्थापित किए जो प्रदेश के इतिहास में महत्त्वपूर्ण घटनाओं के रूप में चर्चा का विषय बनते रहेंगे। ईस्वी वर्ष 1987 के विधान सभा के चुनाव में विजय प्राप्त करने के बाद श्री फारुख अब्दुल्ला के नेतृत्व में कांग्रेस और नेशनल कान्फ्रेंस की सरकार बनी जो आज भी सत्तारूढ़ है।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डल-झील

समुद्र की सतह से 5200 फुट की ऊंचाई पर स्थित काश्मीर घाटी की सबसे सुन्दर झील को डल-झील कहते हैं। प्राचीन काल में इस झील का नाम सुरेश्वरी सर था। सुरेश्वरी क्षेत्र निशात बाग के उत्तर तथा शालीमार बाग के दक्षिण का मध्यवर्ती भू-भाग है। इसके पूर्व में पर्वत तथा पश्चिम में झील है। सुरेश्वरी माता दुर्गा का नाम है और इस स्थान पर शिव और शक्ति दोनों का निवास माना गया है। 'सुरेश्वरी माहात्म्य' नामक रचना में इस क्षेत्र से सम्बन्धित कथा का वर्णन हुआ है।

प्रथम राजतरंगिणी के लेखक महाकवि कल्हण ने अपनी रचना में सुरेश्वरी क्षेत्र का अनेक बार वर्णन किया है।[1] कवि ने यह भी लिखा है कि सुरेश्वरी का सरोवर राजधानी से लेकर दूर-दूर तक विस्तृत है।[2] यह बहुत गहरा है और अब उसे जनता 'डल' नाम से अभिहित करती है।[3] इस झील के किनारे-किनारे लगभग छः मील तक विस्तृत श्रीपर्वत इसके जल में प्रतिबिम्बित होता रहता है।[4] डल-झील के तटवर्ती श्रीपर्वत के कारण ही इस पर्वत

1. कल्हण, राजतरंगिणी, 5 : 37, 40, 41, 6 : 14
2. आ राजधान्यां यद् दीर्घं सुरेश्वर्याः सरोवरम् श्रीवर, जैन राजतरंगिणी : 1.5.33
3. लोके 'डल' इतिख्यातं यदागाध सरोवरम्। श्रीवर जैन राजतरंगिणी : 1/5/32
4. श्री पर्वतोऽपि षटकोशस्तीर्थ स्नान फलेऽसया, वही, 1/5/36

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की उपत्यका में स्थापित राजधानी का नाम श्रीनगर रखा गया था। डल-झील की श्री अथवा शोभा श्रीपर्वत और राजधानी श्रीनगर के कारण है परन्तु यह पर्वत और नगर भी इस झील के कारण ही इतने रमणीय लगते हैं।

सुरेश्वरी सर का 'डल'—यह नामकरण किसने और क्यों किया, इस बात का कोई स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता। श्रीवर ने अपनी रचना में ही सर्वप्रथम इसे 'डल' नाम से सम्बोधित किया है।[1] इस महाकवि ने ईस्वी वर्ष 1459 से लेकर ईस्वी वर्ष 1486 तक का तिहास लिखा था। इससे स्पष्ट होता है कि इस सरोवर का 'डल' नामकरण ईस्वी वर्ष 1459 के उपरान्त ही हुआ है। श्रीवर के जीवनकाल में सुरेश्वरी सर डल नाम से आम जनता में विश्रुत हो चुका था। जनता इसे 'डल' और 'डल्ल' इन दोनों रूपों में प्रयुक्त कर रही थी। लोकमुख में प्रयुक्त होने के कारण ही श्रीवर ने भी इस शब्द का दोनों रूपों में प्रयोग किया।

काश्मीर घाटी में 'डल' अलग किए जा सकने वाले जल के ऊपर तैरते हुए खेत को कहते हैं। पूर्वकाल में इस झील के जल के ऊपर अनेक ऐसे खेत बनाए जाते रहे हैं जो जल के ऊपर निर्मित होने पर भी स्थिर होते थे। वैसे भी अंग्रेजी और लद्दाखी भाषा में डल्ल शब्द का अर्थ हैं—स्टिल अर्थात् स्थिर। जल की चंचल धारा पर भी यह खेत स्थिर रहते हैं, अतः किसानों में यह 'डल्ल' नाम से पुकारे जाने लगे। बाद में उस पूरी जल राशि को जिस पर ये खेत तैरते थे, यही नाम दे दिया गया। 'डल' शब्द लोकमुख में चलता-चलता विश्रुत होता गया और फिर इतिहासकारों ने भी इस नाम को अपनी रचनाओं में प्रयुक्त करके इसे प्रतिष्ठित कर दिया। 'डल' शब्द सुरेश्वरी सर शब्द से छोटा

---

1. वही, 1/5/32, 4.1.18

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और बोलने में आसान था। अत: भाषा विज्ञान के प्रयत्न लाघव सिद्धान्त के अनुसार जनता इसी शब्द का प्रयोग करती गई और कुछ ही वर्षों में सुरेश्वरी सर शब्द इतिहास की वस्तु बनकर रह गया।

काश्मीर घाटी में आकार और विस्तार की दृष्टि से वुल्लर झील के उपरान्त इसी झील का नाम आता है। श्रीनगर के उत्तर-पूर्व में वितस्ता नदी के दाएं तट पर विद्यमान इस झील का विस्तार दक्षिण से उत्तर की तरफ पांच से छ: मील तक तथा पूर्व से पश्चिम तक की चौड़ाई दो से तीन मील तक है। पूर्वी भाग में पर्वत श्रृंखला दूर-दूर तक चली गई है। शंकराचार्य पर्वत से लेकर शालीमार बाग तक यह क्रम लगातार चलता है।

सामान्य रूप में डल झील की गहराई सात से दस फुट तक है, पर कहीं-कहीं यह बीस से छब्बीस फुट तक भी गई है। इसका जल साफ है अत: वीड़ से आवृत इसका तल दिखाई देता रहता है। इस झील में लाल और सफेद रंग के कमल के फूल बहुसंख्या में पाए जाते हैं। किसी-किसी स्थान पर तो कमल के विस्तृत और विशाल पत्ते इतनी अधिकता से जल की सतह पर छाए रहते हैं कि उनसे बने तल पर जलमुर्ग और अन्य जलपक्षी मनोरंजक क्रीडाएं करते हैं।

झील के कुछ भाग में 'Juour' जुबुर नामक 'वाटर प्लांट' भी पाया जाता है। इसके चौड़े-चौड़े और बड़े-बड़े पत्ते कमल के पत्तों की तरह ही जल की सतह पर छाए रहते हैं। झील में पाए जाने वाले दूसरे वाटर प्लांट्स में सफेद लिली, सिंगारा तथा बहुत किस्म के 'रीडस और रशिज' हैं जिनमें से कुछ शिकारों के छत बुनने के काम आते हैं।

पतझड़ और सर्दी के मौसम में झील पर मुर्गों और बत्तखों
CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh
की अधिक आमद होती है जबकि मौसमें बहार में इनकी संख्या

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कम हो जाती है। जल में डुबकी लगाने वाले पक्षी झील के क्षेत्र में लगातार दिखाई देते हैं। लम्बी-लम्बी टांगों वाले बगुले, मछलियों का शिकार करने के लिए उपयुक्त स्थानों पर बैठे रहते हैं। सामान्य रूप में झील पर पाए जाने वाले किंगफिशर नामक पक्षी झील के सभी कोनों पर दिखाई देते हैं। किंगफिशर कुछ काल के लिए धूप में आराम करके फिर मछली पकड़ने के लिए जल में डुबकियां लगाते रहते हैं।

आरानदी, जो डल झील का सबसे बड़ा स्रोत है, इसके उत्तरी भाग में आकर गिरती है। इसके अतिरिक्त झील में अनगिनत चश्में भी हैं। झील के दक्षिण भाग में द्रुगजन नामक 'गेट' है जिसमें से गुजरने वाली एक नहर के माध्यम से यह वितस्ता महानदी से भी जुड़ी हुई है। कहा जाता है कि इस 'गेट' का निर्माण A. D. 59 में राजा प्रवरसेन ने करवाया था। इस 'गेट' के पास ही नहर के बीचों-बीच एक खम्भा बना हुआ है जिससे पानी के स्तर का पता चलता रहता है। जब कभी झील का जल-स्तर वितस्ता नदी के जल-स्तर से अधिक हो जाता है तो इस गेट को खुला रखा जाता है और जब वितस्ता में जल का स्तर घट जाता है तो 'गेट' बन्द कर दिया जाता है ताकि झील का जल मर्यादा में रहे। इसे 'फलड्ड गेट' भी कहा जाता है। इस पर एक सेतु का भी निर्माण किया गया है।

डल-झील अलग-अलग क्षेत्रों में विभाजित है। दक्षिण-पूर्व में गंगरीबल बड़े डल से एक पतले से भूखण्ड के द्वारा पृथक् किया गया है। बड़ी झील के पूर्वी भाग में एक छोटा-सा द्वीप है जिसे सोन लंका कहते हैं। झील के उत्तरी किनारे पर अस्ताबल है। जल की विस्तृत राशि के मध्य में 'रूप लंका' अर्थात् चार चिनारी है। इसके उत्तर में तेलबल की नीची, गीली और कीचड़ वाली भूमि है। अस्ताबल के दक्षिण में डल कोतवाल डिवीजन है और

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डल कोतवाल के पश्चिम में सुन्दरबल है। झील के पश्चिमी तट पर ही मस्जिद हजरतबल और नसीम बाग है।

सोनलंका अर्थात् गोल्डन आईलैण्ड बड़ी झील-डलकलां के मध्य में है। काश्मीर भूमि के सर्वप्रिय नृपति जैनुल आबदीन ने ऊलर झील में जैनलंका बनवाई थी[1]। उसी प्रकार उसने डल-झील में भी दो द्वीपों का निर्माण करवाकर एक का नाम सोनलंका और दूसरे का नाम रूपलंका रख दिया। तीसरी राजतरंगिणी के लेखक श्रीवर ने डल-झील का वर्णन करते समय इन दोनों लंकाओं के सोन्दर्य की चर्चा की है। जोनराज ने जैनुल आबदीन के अन्तिम ग्यारह वर्षों का इतिहास नहीं लिखा है। श्रीवर ने जोनराज के वर्णन से आगे का वर्णन किया है और बताया है कि बादशाह जैनुल आबदीन डल-झील में भ्रमण करने का बड़ा शौकीन था।

सोनलंका का सारा एरिया चालीस गज लम्बा तथा इतना ही चौड़ा है। इस द्वीप की सारी भूमि हरियाली से आपूर्ण है तथा ढलान झील के जल का स्पर्श करती है। इसके मध्यभाग में निर्मित चौकोर भवन को काश्मीर के शासकों द्वारा कभी मनोरंजन के लिए और कभी अपने विरोधियों को कैद में रखने के लिए प्रयुक्त किया जाता रहा। एक जेल के रूप में इस भवन की बड़ी महत्ता थी। इस स्थान से तैरकर भाग जाना बड़ा कठिन था। एक तो इस स्थान से किनारा बड़ा दूर था और दूसरा झील के जल में 'रीडस' और दूसरे 'वाटर प्लान्ट्स' इतनी अधिकता में थे कि उनसे बचना नामुमकिन था।

रूपलंका अथवा सिलवर आईलैण्ड जो आजकल चार चिनारी के नाम से विश्रुत है, नसीमबाग और हजरतबल के सामने डल-

---

1. जोनराज : राजतरंगिणी : श्लोक 941

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

झील के Astawhoz डिवीजन के मध्य में है। यह द्वीप जल के स्तर से तीन फुट ऊंचा है और इसका क्षेत्रफल चार सौ पैंसठ गज का है। मुरादबख्श मुगल सम्राट शाहजहां का सबसे छोटा पुत्र था। दाराशिकोह, शाहशुजा और औरंगजेब, उसके बड़े भाई थे। शाहजहां ने उसे ईस्वी वर्ष 1640-1641 में काश्मीर का राज्यपाल नियुक्त किया था। वह शाहजहां के शासनकाल का दूसरा तथा काश्मीर पर मुगल शासन का चौदहवां राज्यपाल था और उसका विवाह काश्मीर निवासी शाहाबाद के मलिक की कन्या के साथ हुआ था। काश्मीर में राज्यपाल नियुक्त होने के उपरान्त मुराद अपना अधिक समय भोग और विलास में बिताने लगा।

मुराद के पूर्वजों ने डल-झील के इर्द-गिर्द सैकड़ों बाग लगवाए थे जिनमें उत्पन्न होने वाले गुलाब और दूसरे फूलों की शोभा अत्यन्त निराली थी। डल-झील के एक तरफ उसके परदादा अकबर महान् ने हरिपर्वत पर किला और दर्शनी बाग बनवाया था। उसके दादा जहांगीर शालीमार बाग, ऐशाबाद बाग तथा दादी नूरजहां डल-झील के पश्चिमी तट पर बहरआरा नामक उद्यान की स्थापना करवा चुकी थी। पिता शाहजहां ने चश्माशाही और निशात बाग का निर्माण करवाया था। उसका बड़ा भाई दाराशिकोह भी झील के पास एक स्मरणीय निर्माण करवाने की सोच रहा था। अतः मुराद के मन में भी इस सुन्दर झील के क्षेत्र में कुछ इस प्रकार का निर्माण करने की इच्छा हुई जो आश्चर्यमय भी हो और काश्मीर में उसके नाम को सदा के लिए अमर कर सके। उसने रूपलंका को अच्छी तरह सजाने और संवारने के आदेश दिए। इसके उपरान्त उसने रूपलंका के चारों कोनों पर अपने हाथों से चुनार के चार वृक्ष आरोपित कर दिए। काश्मीर में अपने शासनकाल में मुराद ने अपना अधिकांश समय

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रूपलंका में बिताया। उसके द्वारा लगाए गए चारों चिनार जब बड़े हुए और डल-झील में दूर-दूर से दिखाई देने लगे तो लोग इस स्थान को चार-चिनारी कहने लगे।

मुगलों के बाद काश्मीर पर ०7 वर्ष तक पठानों का शासन रहा और फिर ईस्वी वर्ष 1819 से ईस्वी वर्ष 1846 पर्यन्त काश्मीर में सिख शासन रहा। इस काल में चार चिनारी अथवा रूपलंका में जो परिवर्तन आया था उसका परिचय विने नामक अंग्रेज यात्री ने अपनी पुस्तक में किया है। ईस्वी वर्ष 1835 के दिसम्बर मास में वह श्रीनगर पहुंचा था। वह लिखता है कि जब उसने इस स्थान को देखा था तो वहां पर एक चौकोर छोटा-सा मन्दिर था जिसके खम्भे संगमरमर के थे और छत चांदो के पत्रों से मढ़ा था। स्थान के इर्द-गिर्द एक छोटा-सा बाग था जिसमें गुलाब, स्टाकस, मैरीगोल्ड और वाईन्ज के फूल थे। इन चिनारों काले संगमरमर का एक शिलालेख भी लगा हुआ था जिस पर खुदा हुआ था—

Three Travellers

Baron Carlvon Hugel, From Jammu John

Handerson From Ladak Godfrey Thomas Vigne From Iskar Do

Who Met In Srinagar On The 18th November 1835.

Have Caused The Names of Those European Travellers Who Had Previously Visited The Vale of Kashmir

To Here Under Engraved

Bernier 1663

Forester 1786

Moorcroft, Trebeck And Guthrie 1823

Jaquemont 1831

Wolff 1832

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Of These Only Three Lived To Return To Their Native country.

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इतिहास ग्रन्थों से स्पष्ट होता है कि इस सुन्दर झील को सुन्दरतम बनाने के लिए मुगल शासकों ने इसके इर्द-गिर्द सात सौ सतत्तर उद्यानों का निर्माण करवाया था। इन उद्यानों में उत्पन्न होने वाले गुलाब और दूसरे फूलों से एक लाख रुपये वार्षिक आय होती थी। शाहजहां का सबसे बड़ा पुत्र दारा-शिकोह डल-झील के रूप सौन्दर्य के प्रति इतना समर्पित था कि उसके रमणीय रूप को लगातार देखने के लिए उसने इस झील के तटवर्ती जेवन पर्वत की ढलान पर चश्माशाही के समीप परीमहल का निर्माण करवाया था।

पठान, सिख और डोगरा शासनकाल में भी इस झील तथा इसके तटवर्ती उद्यानों की उचित देखभाल की जाती रही। पर प्रकृति ने इस झील को आकर्षित करने वाला रूप-सौन्दर्य प्रदान किया ही है। श्रीपर्वत के चरणों में स्थित इस झील के दक्षिण में रमणीय वृक्षावलियों से आवृत शंकराचार्य की पहाड़ी, पश्चिम में प्राचीन दुर्ग से सुशोभित हरि पर्वत, पूर्व में परिमहल-चश्मा-शाही, निशात और शालीमार बाग तथा उत्तर में दूर-दूर तक विस्तृत गिरीकोणियां इसकी सुन्दरता को चार चांद लगा देती हैं।

इस झील की सबसे बड़ी विशेषता इसका श्रीनगर शहर के अत्यन्त निकट होना है। अब तो यह दिन-प्रतिदिन आबादी से घिरती जा रही है। इसके दक्षिणी तट पर बहुत से आलीशान होटलों का निर्माण हुआ है जिनमें—लेकवियु, ओबराय पैलेस, न्यू शालीमार, अजीज, परीमहल, शहनशाह पैलेस, सनशाईन, जमरूद, गुलमर्ग, मधुवन, ब्राउन पैलेस, न्यू ग्रीनवियु आदि प्रमुख हैं। काश्मीर में निर्मित वस्तुओं की बहुत-सी बड़ी-बड़ी दुकानें और व्यापारिक केन्द्र इन होटलों के साथ-साथ बनाए गए हैं। लकड़ी के अत्यन्त सुन्दर एवं आधुनिक सुविधाओं से आपूर्ण

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नौकाघर सैकड़ों की संख्या में झील के उत्तरी तट पर विराजमान हैं। काश्मीर के पर्यटन उद्योग में नौकागृहों, शिकारों, होटलों और मुगल उद्यानों का प्रमुख स्थान है और ये सारे के सारे इस झील के जल और तट पर विद्यमान हैं। काश्मीर घाटी में आने वाला पर्यटक अथवा स्वामी अमरनाथ जी की यात्रा पर जाने वाला व्यक्ति गुलमर्ग, पहलगाम, अच्छावल, कुक्कुरनाग, अहरबल, वुल्लर आदि को देखने के लिए चाहे न जा सके परन्तु डल-झील और इसके तटवर्ती उद्यानों को देखने के लिए वह अवश्यमेव समय निकाल लेता है।

आधुनिक काल में जिस प्रकार डल-झील के किनारे-किनारे भव्य भवनों और राजमहलों का निर्माण हुआ है, इसी प्रकार प्राचीनकाल में भी राजा और बड़े-बड़े राज्याधिकारी, सेनापति और सामन्त झील क्षेत्र में अपने आवास बनाना पसन्द करते थे। आज से पांच सौ तीस वर्ष पूर्व जैन राजतरंगिणी के लेखक श्रीवर ने अपनी रचना में डल-झील का वर्णन करते हुए लिखा है कि "संसार में 'डल' नाम से प्रसिद्ध अगाध सरोवर में बादशाह जैनुल आबदीन नौकाविहार करता था। बादशाह की नौका के अंग-सग, आगे और पीछे अनेक रंग-बिरंगी नौकाएं चलती थीं। डल-झील के तट के साथ-साथ लगातार छः कोस तक विस्तृत श्रीपर्वत इस झील रूपी तीर्थ में स्नान करके उत्तम गति प्राप्त करने की कामना से दिन-रात इसके जल में प्रतिबिम्बित होता रहता है।

झील के निर्मल जल में प्रतिबिम्बित होने वाले वृक्ष शैवाल की तरह, पर्वत कछुए की तरह तथा नगर नाग लोक की तरह रमणीय लगते हैं। शाली के छोटे-छोटे खेत जल के ऊपर चलते हुए ऐसे लगते हैं मानों वे झील में खिले कमल के फूलों की खुशबू सूंघने के लिए आगे बढ़ रहे हों। झील के तटवर्ती क्षेत्र में बादशाह और

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसके मन्त्रियों द्वारा निर्मित विहार, अग्रहार, मड, आश्रम तथा राजा और उसके परिवार के आवास के कारण यह स्थान स्वर्ग के समान प्रतीत होता है। इन सब भव्य इमारतों में बादशाह के सिद्धपुरी नामक राजमहल की शोभा एकदम निराली[1] है।"

इस वर्णन के एक सौ पच्चीस वर्ष बाद ईस्वी वर्ष 1597 में मुगल सम्राट अकबर जब श्रीनगर में आया तो उसने डल-झील के तट पर शोभायमान मुहम्मद अली के महल में निवास किया था। डल-झील के जल में तैरते खेतों को देखकर अकबर अत्यन्त हर्षित और विस्मित हुआ था।

सन् 1947 में भारत की आजादी के उपरान्त काश्मीर में भी लोकतन्त्र की स्थापना हुई। काश्मीर राज्य के दूसरे प्रधानमन्त्री बख्शी गुलाम मुहम्मद के शासनकाल ईस्वी वर्ष 1953-1963 में इस झील में एक और द्वीप बनाकर उसमें एक छोटे से उद्यान का निर्माण करवाकर उसका नाम नेहरू पार्क रखा गया। आजकल नेहरू पार्क डल-झील का सबसे अधिक रौनक वाला भाग है। इस स्थान पर शिकारों की भीड़ रहती है। जो लोग अग्नि नौका में बैठकर झील में सैर करना चाहते हैं, उसका भी यहां पर प्रबन्ध है। द्वीप पर एक छोटा-सा होटल भी है जहां से खाने-पीने की वस्तुएं मिल सकती हैं। गरम और शीतल पेय भी उपलब्ध है।

गत कुछ वर्षों से काश्मीर में आने वाले पर्यटकों की संख्या में बहुत अधिक वृद्धि हुई है, किन्तु जहां तक डल-झील का सम्बन्ध है, इस पर बहुत ही विपरीत प्रभाव पड़ा है।

श्रीनगर की यह झील पिछले चार दशकों में लगभग आधी सिकुड़ गई है। यह झील कई समस्याओं से ग्रस्त है। इनमें से कीचड़ का भर जाना तथा घाटी से आई गन्दगी का इसमें जमा

---

1. श्रीवर, जैन राजतरंगिणी : तरंग श्लोक,

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

होना प्रमुख है। नये-नये निर्माणों के कारण जलरेखा का सिकुड़ना तथा उचित मलनिकासी व्यवस्था के बगैर ही झील में नौकागृहों की बढ़ती संख्या अन्य प्रमुख समस्याओं में से है।

डल-झील विकास परियोजना के अधिशासी अभियन्ता जी० एच० कल्लो ने कहा है कि राज्य सरकार द्वारा दो सौ करोड़ रुपये लागत की चार चरणों की परियोजना पर काम चल रहा है। श्री कल्लो ने बताया कि झील का कुल क्षेत्रफल अब मात्र चौबीस वर्ग किलोमीटर रह गया है जबकि चालीस साल पहले अड़तालीस वर्ग किलोमीटर था। अब जल 15.42 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में ही है। 7.32 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में मकान बने हैं जबकि 1.26 किलोमीटर क्षेत्र दलदली भूमि है।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शंकराचार्य मठ

श्रीनगर की विश्व-प्रसिद्ध डल-झील के दक्षिणी तट के पर्वत के शिखर पर एक मध्यम आकार का मन्दिर दूर-दूर से दिखाई देता है। इसे ही शंकराचार्य का मन्दिर कहते हैं। विश्वास किया जाता है कि आदि गुरु शंकराचार्य सनातन वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार के लिए अनेक अन्य धर्मावलम्बी विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित करके काश्मीर में पहुंचे थे। उस काल में काश्मीर में बौद्ध-धर्म की विचारधारा का प्राबल्य था।

शंकर का जन्म भारतवर्ष के केरल प्रदेश में हुआ था। इनकी माता का नाम आर्याम्मा तथा पिता का नाम शिवगुरु था। पांच की अवस्था होने पर इनका यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। कुछ बड़े होने पर अपनी माताश्री से संन्यासी बनने की आज्ञा मांगी। माता ने उनकी बात नहीं मानी। एक दिन जब मां और बेटा दोनों नदी में स्नान करने के लिए आए तो नदी में नहाते समय बालक शंकर को मगरमच्छ ने पकड़ लिया। शंकर ने चिल्लाते हुए अपनी माता से कहा कि यदि माता उसे संन्यासी बनने की आज्ञा प्रदान कर दे तो उसके प्राण बच सकते हैं। माता ने पुत्र के प्राणों की रक्षा के लिए उसकी बात स्वीकार कर ली।

शंकर मगरमच्छ से छूट गए। जब घर से विदा होने लगे तो माता ने उनसे वचन ले लिया कि वे उसके अन्तिम काल में उसके पास रहेंगे।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

माता से विदा होकर शंकर हिमालय के बदरिकाश्रम में गए और वहां पर तपस्या करने वाले महात्मा श्री गोविन्द पाद जी के शिष्य बनकर उनके उपदेश से विधि के अनुसार संन्यास आश्रम में प्रवेश किया। वैदिक धर्म के पुन: प्रचार और प्रसार के निमित्त उन्होंने नीलकण्ठ, हरदत्त और भट्टभास्कर को पराजित किया। फिर बाण और दण्डी जैसे संस्कृत भाषा के महाकवियों को अपनी विचारधारा से अवगत कराया।

इसके पश्चात् शंकराचार्य जी ने भारत में भ्रमण करके हर्ष, अभिनव गुप्त, मुरारी मिश्रा, उदयनाचार्य, कुमारिल और मण्डन मिश्र जैसे प्रकाण्ड पंडितों को तर्क में परास्त किया। अपनी विचारधारा की विजय के प्रतीकों के रूप में उन्होंने शृंगगिरि, जगन्नाथपुरी, द्वारिका, काश्मीर आदि स्थानों में अपने मठ स्थापित किए। श्रीनगर का शंकराचार्य मन्दिर उनकी काश्मीर यात्रा का प्रतीक है जब उन्होंने मण्डन मिश्र को तर्क में परास्त करके अपना शिष्य बना लिया था।

काश्मीर के अमर कवि कल्हण ने अपनी राजतंगिणी में महाराजा ललितादित्य के समय गौड़ अथवा बंगाली ब्राह्मणों का काश्मीरी ब्राह्मणों से शारदा मन्दिर में जो शास्त्रार्थ होना लिखा है, जनरल कनिंघम उसे शंकराचार्य का काश्मीर के पंडितों से शास्त्रार्थ होना मानते हैं।

अन्यत्र लिखा गया है कि वृजेश्वरानन्द नामक महात्मा ने जैन और बौद्ध गुरुओं का शिष्य बन उन धर्मों से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त किया और फिर शंकर को इस सम्बन्ध में सम्पूर्ण ज्ञान करवाकर उन्हें आदेश दिया कि वे कर्मकाण्ड, बौद्ध एवं जैन धर्म के प्रभाव को समाप्त करके वैदिक धर्म की स्थापना करें। इतना वृजेश्वरानन्द ने अपने गुरुओं से विश्वासघात करने के कारण अर्थात् जिस गुरु से विद्या पढी उसी के धर्म का खण्डन किया,

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

प्रायश्चित स्वरूप अपना देह त्याग करने का निर्णय ले लिया। देहत्याग से पूर्व उन्होंने शंकर से कहा कि यदि वह काश्मीर में मण्डन मिश्र को तर्क में परास्त कर लेगा तो वहां के अन्य लोग भी वैदिक धर्म स्वीकार कर लेंगे।

भारत के दूसरे प्रदेशों में वैदिक धर्म की विजय पताका फहराने के उपरान्त काश्मीर भूमि के प्रमुख और प्रधान विद्वान् मण्डन मिश्र से शास्त्रार्थ करने की कामना से शंकर काश्मीर पहुंचे। उस काल में काश्मीर में तन्त्र-मन्त्र और अभिचार करने का बहुत प्रचार था। आम आदमी की तो बात ही क्या ब्राह्मण जाति के लोग राजकीय अन्याय के विरोध में राजाओं तक पर अभिचार क्रिया करके उन्हें मार डालते थे। अवध्य होने के कारण उन्हें राजा से भी किसी प्रकार का भय नहीं होता था।

जब शंकर काश्मीर पहुंचे तो वहां के तान्त्रिकों ने मन्त्र-शक्ति से उनके हाथ-पैर बांध दिए और उन्हें लाचार कर दिया। इस स्थिति से उबरने के लिए उन्होंने देव्यापराध क्षमापन स्तोत्र द्वारा माता खीर भवानी की स्तुति की। माता भवानी ने प्रसन्न होकर उन्हें उस प्रभाव से मुक्त कर दिया। इसके पश्चात् देवी का आशीर्वाद लेकर उन्होंने मण्डन मिश्र के निवास स्थान की ओर प्रस्थान किया।

मण्डन मिश्र के घर पहुंचकर उन्होंने उसे शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी। मण्डन मिश्र ने शर्त रखी कि उन दोनों में से जो भी शास्त्रार्थ में पराजित होगा, उसे विजयी की आज्ञा माननी पड़ेगी। यदि शंकर पराजित होते हैं तो उन्हें मण्डन मिश्र का सेवक बनना पड़ेगा और यदि मण्डन मिश्र हार जाते हैं तो वे वैदिक धर्म के अनुयायी बन जाएंगे।

इतने बड़े विद्वानों की शास्त्रार्थ में जय-पराजय का निर्णय करने का कार्य मण्डन मिश्र की परम विदुषी पत्नी उभय भारती

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को सौंपा गया। उसने दोनों के गले में फूलों के हार डालकर कहा कि शास्त्रार्थ करते समय उन दोनों में से जो भी उचित उत्तर नहीं दे पाएगा, उसके गले का हार अपने आप मुरझा जाएगा। फिर लगातार सात दिन तक शास्त्रार्थ होता रहा, पर दोनों के गले में पड़े हुए हार बिल्कुल ताजा थे। लेकिन इसके दूसरे ही दिन मण्डन मिश्र के हार के फूल मुरझा गए। मण्डन मिश्र मौन रहे। दूसरे विद्वानों ने उभय भारती को निर्णय सुनाने की प्रार्थना की।

उभय भारती ने कहा कि जब तक शंकर उसे भी शास्त्रार्थ में परास्त नहीं कर देते, मण्डन मिश्र को पूर्णरूप से पराजित घोषित नहीं किया जा सकता। वह अपने पति की अर्धांगिनी है। अतः शंकर को अपनी पूर्ण विजय के लिए उसे भी तर्क में परास्त करना जरूरी है।

इतना कहकर उसने भरी सभा में शंकर से कामसूत्र के प्रश्न पूछने आरम्भ किए। शंकर ने कहा कि एक संन्यासी होने से उन्हें एक नारी के ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना उचित और शोभाजनक नहीं लगता और फिर वे बाल ब्रह्मचारी हैं। इसलिए यदि उसे उनसे वैसे ही प्रश्न करने हैं वह उन्हें छः मास का समय दे।

ऐसा होने पर शंकर भ्रमण करते-करते काशी में पहुंचे। वहां उन्हें पता चला कि काशी का राजा कुछ क्षण पहले ही दिवंगत हुआ है। उन्होंने तत्काल एक गुफा में अपना शरीर रखकर अपने दो सेवकों को उसकी पूर्णरूप से रक्षा करने का आदेश दिया और उन्हें कहा कि अपना उद्देश्य पूरा करके वे लौट आएंगे। अपने शिष्यों को भली-भांति समझा-बुझाकर उन्होंने काशीराज की मृतदेह में प्रवेश कर लिया। राजा जीवित हो गया। राजमहल और राज्य में खुशी का वातावरण छा गया। शंकर लगभग छः मास तक रनिवास की महिलाओं के सम्पर्क में

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कामकला का ज्ञान प्राप्त करते रहे। समय आने पर जब वे फिर काश्मीर आए तो उभय भारती ने अपनी पराजय स्वीकार कर ली। मण्डन मिश्र ने वैदिक धर्म अपना लिया और वे काश्मीर में वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिए मुख्य शिष्य बने। उनका नाम सुरेशाचार्य रखा गया।

अपनी इस विजय की स्मृति में आचार्य शंकर ने गोपाद्रि पर्वत पर मठ की स्थापना कर दी जहां से इनके शिष्य वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार के लिए प्रेरणा लेते रहें। राजतरंगिणीकारों ने इस पर्वत का वर्णन गोपाद्रि नाम से ही किया है। राजा गोपादित्य ने इस पर्वत पर शिव का मन्दिर बनवाया था। तब इसका नाम गोपाचल पर्वत हो गया। इसे गोपाद्रि नाम से भी सम्बोधित किया गया। आज भी इस पर्वत की उपत्यका में निर्मित महाराजा काश्मीर तथा अन्य अधिकारी वर्ग के भवनों की ओर जो राजमार्ग जाता है उसे गुपगार रोड कहा जाता है। शंकराचार्य द्वारा इस पर्वत पर मठ की स्थापना से इसका नाम शंकराचार्य पर्वत ही पड़ गया।

शंकराचार्य के काश्मीर में आने से पूर्व भी काश्मीर में मठों की स्थापना होती थी, पर उनकी अलग शैली थी। मठों में मुफ्त भोजन तथा निवास की व्यवस्था रहती थी। उनमें शिक्षा दी जाती थी। उनमें शिक्षक ब्राह्मण तथा संन्यासी हुआ करते थे। काश्मीर के राजाओं ने विदेशी ब्राह्मणों के आवास और भोजन के लिए भी मठ बनवाए थे। उस शैली पर आचार्य शंकर ने भी मठ बनवाया।

भारत में आचार्य शंकर ने मठों की स्थापना करके जो परम्परा स्थापित की उसका निश्चित रूप और नियम भी उन्होंने बना दिए थे। इनके द्वारा भारत मठ तीर्थ, आश्रम, वन, पर्वत, सागर, सरस्वती, भारती एवं पुरी में हैं। इन सबमें शिष्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परम्परा होती है। आचाय शंकर ने बदरीनाथ, द्वारिका, शृंगेरी तथा पुरी इन चार पीठों में मठ स्थापित किए।

उत्तर बदरीनाथ में जोशीमठ है। उसकी शिष्य परंपरा में गिरि पर्वत और सागर हैं। आचार्य सुरेश्वर अथवा स्वरूपाचार्य हैं। पश्चिम द्वारिका में शारदा मठ है। वहां की परंपरा तीर्थ तथा आश्रम है। आचार्य पद्मपाद हैं। दक्षिण में शृंगेरी मठ है। इसकी परंपरा सरस्वती भारती एवं पुरी है। आचार्य त्रोटमाचार्य हैं। पूर्व में पुरी में गोवर्धन मठ है। आचार्य रुस्तामतक हैं। उसकी परंपरा वन एवं अरण्य हैं। प्रत्येक संन्यासी के साथ ऊपर कहे गत दस नामों में से कोई एक पद अथवा नाम साथ लगा रहता है।

जोशीमठ का तीर्थ स्थान बदरीनाथ वेद, अथर्ववेद महावाक्य 'अपमात्मा ब्रह्म और गोत्र आनन्दवर' है। इसके ब्रह्मचारी आनन्द कहे जाते हैं। इसका क्षेत्र काश्मीर, कुरु, कम्बोज, पांचाल और तिब्बत है। शारदा मठ का तीर्थ स्थान द्वारिका है। महावाक्य 'तत्वमसि' और गोत्र कीटवर है। इसके ब्रह्मचारी स्वरूप कहे जाते हैं। इसका क्षेत्र सिन्ध, सौवीर, सौराष्ट्र तथा महाराष्ट्र है। शृंगेरीमठ का तीर्थस्थान रामेश्वर, वेद यजुर्वेद तथा महा-वाक्य 'अहं ब्रह्मास्मि' है। गोत्र भूरिवा है। इस मठ के ब्रह्मचारी चैतन्य कहे जाते हैं। इसका क्षेत्र द्रविड भाषा भाषी हैं। गोवर्धन मठ का तीर्थस्थान पुरी है। वेद ऋग्वेद है। महावाक्य है—"प्रज्ञानं ब्रह्म" और गोत्र योगवर है। इसके ब्रह्मचारी प्रकाश कहे जाते हैं। इसका क्षेत्र अंग, बंगाल, बिहार और उड़ीसा प्रदेश हैं।

मठ का उद्देश्य पुण्यकार्य के अतिरिक्त किसी सम्प्रदाय एवं किसी विशेष मत का प्रचार होता है। मठ तथा मन्दिर दोनों में किसी न किसी देवता की मूर्ति रखी जाती है और उसमें साधु, संन्यासी, विद्यार्थी, यति और योगी निवास करते हैं। काश्मीर में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुस्लिमशासन स्थापित हो जाने के बाद भी सुल्तान-क़ुतबुद्दीन के राजत्वकाल ईस्वी वर्ष 1373-1389 तक पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रता थी। पर इस काल के बाद वैसी स्थिति न रही। मठों और मन्दिरों को धार्मिक उन्माद का शिकार होना पड़ा। शंकराचार्य मन्दिर में स्थापित रुद्र की मूर्ति को अनेक बार तोड़ा गया। पर उसमें फिर रुद्र की स्थापना की जाती रही। ईस्वी वर्ष 1586 में सम्राट अकबर ने जब काश्मीर को अपने अधिकार में ले लिया तब से ऐसी घटनाओं में बहुत कमी आ गई।

ईस्वी वर्ष 1841-42 में शेख गुलाम महीउद्दीन काश्मीर में सिख शासन का दसवां राज्यपाल था। इस समय में शंकराचार्य के मन्दिर में बहुत रौनक होती थी। ईस्वी वर्ष 1819 से काश्मीर पर पंजाब केसरी महाराजा रणजीतसिंह अपना शासन स्थापित कर चुके थे। हिन्दुराज होने पर हिन्दू तीर्थों और पूजा स्थानों में नवजीवन का संचार हो गया था। एक दिन शंकराचार्य के मन्दिर में एक साधु भगवान् शिव की पूजा कर रहा था। उस समय मूर्ति पूजा का विरोध करने वाले गिलगित्त के रहने वाले कुछ लोगों ने वहां आकर उसकी हत्या कर दी और शिवलिंग को तोड़कर भाग गए। महाराजा रणजीतसिंह के पुत्र युवराज शेरसिंह ने तत्काल राज्यपाल से इस घटना की रिपोर्ट मांगी। राजा और प्रजा के भय से राज्यपाल कांप उठा। उसने तत्काल सेना को अपराधियों को पकड़ने का आदेश जारी किया। बहुत कोशिश करने पर भी अपराधी नहीं मिले। राज्यपाल ने नया शिवलिंग मंगवाकर शास्त्र विधि से उसकी स्थापना करवा दी और इस प्रकार राजा और प्रजा का क्रोध शान्त किया। शंकराचार्य मन्दिर में स्थापित वही शिवलिंग आज भी शोभित है।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शंकराचार्य पर्वत का वर्णन काश्मीर में होने वाले युद्धों और वितस्ता में आने वाली बाद के प्रसंग में भी मिलता है। ईस्वी वर्ष 1360 में सुलतान शहाब्बुद्दीन के समय काश्मीर घाटी में भयंकर बाढ़ आई थी। उस समय सारा श्रीनगर जल में डूब गया था। नगर के लाखों लोगों ने इस पर्वत पर पहुंचकर अपने प्राण बचाए थे। सुल्तान स्वयं अपने परिवार समेत हरि पर्वत पर चला गया था। ईस्वी वर्ष 1877 में आश्विन मास में लगातार बीस दिन वर्षा होती रही। सारा नगर जलमग्न हो गया। उस समय में लाखों लोगों ने इस पर्वत पर शरण ली।

आजकल शंकराचार्य मन्दिर का महत्त्व धार्मिक दृष्टिकोण की अपेक्षा पर्यटन की दृष्टि से अधिक है। इस स्थान पर आने वाले अधिसंख्य लोग पर्यटक ही होते हैं। जब से इस मन्दिर में पास दूरदर्शन केन्द्र की स्थापना हुई है तब से इस इस स्थान पर आने वाले पर्यटकों की संख्या में काफी विस्तार हुआ है। दूरदर्शन केन्द्र तक सड़क बन जाने के कारण बच्चे, बूढ़े, औरतें और दुर्बल लोग भी कारों और यातायात के अन्य साधनों से इस मन्दिरतक पहुंचने लगे हैं। मन्दिर स्थान से काश्मीर घाटी का श्रीनगर शहर का डल झील का और विशेषकर वितस्ता नदी में प्रवाह मार्ग का जो दृश्य दिखाई देता है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हरी-पर्वत

काश्मीर की राजधानी श्रीनगर शहर के मध्यवर्ती भूभाग में एक ऊंची पहाड़ी है जिसे आजकल हरी-पर्वत के नाम से अभिहित किया जाता है। प्राचीनकाल में यह शैव प्रद्युम्न गिरि के नाम से अधिक प्रसिद्ध था। कल्हण ने अपनी राजतरंगिणी में इसका उल्लेख प्रद्युम्न गिरि प्रद्युम्न शिखर नाम से किया है।[1] विल्हण[2] और श्रीवर[3] ने भी इसे इसी नाम से संबोधित किया है।[4] 'योगवसिष्ठ रामायण' में भी प्रद्युम्न शिखर का वर्णन आया है। जोनराज ने इसे प्रद्युम्न गिरि और शारिका शैलराज की संज्ञा दी है।[5]

शारिका शैलराज नाम से भी संबोधित किया है।[6] काश्मीर में विरचित 'भृंगीश संहिता' नामक प्राचीन ग्रन्थ में इस पर्वत पर भगवती पार्वती के द्वारा शारिका रूप में अवतरण की कथा मिलती है। प्राचीनकाल में बक नाम का राक्षस काश्मीर की जनता को अपने दुराचार से आतंकित करने लगा। वह बक-

---

1. कल्हण, राजतरंगिणी : 7/1616
2. विल्हण, विक्रमांकदेव चरित
3. श्रीवर, जैन राजतरंगिणी : 1/631
3. योगवासिष्ठ रामायण: स्थिति प्रकरण
5. जोनराज, राजतरंगिणी : श्लोक, 589, 410
6. जोनराज, राजतरंगिणी : श्लोक, 410

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बगुले का रूप धारण कर स्थान-स्थान पर पहुंच जाता और जनता को पीड़ित कर पुनः उड़कर हरि पर्वत पर आ जाता। इस पर्वत पर पहुंचते ही वह अदृश्य हो जाता।

जब चारों ओर त्राहि-त्राहि मच गई तो मरीचि के नेतृत्व में कुछ तपस्वी ब्राह्मण भगवान् शिव के पास गए। भगवान् शिव की स्तुति की। दैत्य के अत्याचारों से सुरक्षित करने की प्रार्थना की। शिव प्रसन्न हुए। उन्होंने पार्वती को आदेश दिया कि वे शारिका—(मैना) के रूप में अवतरित होकर बक रूपी राक्षस का संहार करें। वह राक्षस हरिपर्वत के शिखर में बनाए गए द्वार अथवा—सुराख से निकलता है और प्राणियों की हत्या करके उसी मार्ग से पाताल लोक में चला जाता है। देवी सुमेर पर्वत के शिलाखण्ड से उस द्वार को बन्द कर दें।[1] हे देवी! जब आप शारिका का विशाल रूप धारण कर इस गिरि शिखर पर विराजमान होंगी तो अपने तेज से यह पर्वत अत्यन्त प्रकाशमान हो जाएगा और इस कारण से संसार में प्रधुम्नगिरि के नाम से भी विख्यात होगा।[2]

भगवान् शिव के आदेश से पार्वती ने एक विशाल आकार के शारिका पक्षी का रूप धारण किया और भगवान् शिव द्वारा बताए गए पर्वत पर आ गई। देवी ने उस सुराख अथवा द्वार को देखा जिससे धरती से बाहर आकर वह असुर उपद्रव करता था। शारिका रूप देवी ने मेरु पर्वत से एक बड़ा शिलाखण्ड अपनी चोंच से उठाया और उसे हरि पर्वत के शिखर पर बने उस सुराख

---

1. शारिका रूप मासाध सुमेरू शिखरेण हि।
रन्ध्रं पूरप कल्याणि। यत्पृष्ठं स्वयंमारूह ॥
भृंगीश संहिता, शारिका माहात्म्य पटल

2. तव तेजसा समाक्रान्तं प्रकर्षं धोतते ततः।
ततः प्रभृति देवेशि, प्रधुम्न शिखराधितम् ॥ वही, श्लोक-24

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर रख दिया जिससे होकर बक बाहर और भीतर जाता था। फिर देवी स्वयं उस शिलाखण्ड पर बैठ गई।

अपने नियत समय पर जब बक राक्षस वहां आया, तो द्वार को बन्द देखकर गर्जने लगा। देवी ने उसे कहा कि वह पाताल में जाकर आराम से रहे नहीं तो उसका विनाश होगा। यह सुनकर बक ने अपने सिर और भुजाओं की शक्ति से शिलाखण्ड को हटाकर द्वार खोल लिया। यह देखकर शारिका देवी क्रोध में आ गई और उन्होंने अपनी शक्ति से उस पर्वत और असुर के मार्ग को स्तंभित कर दिया।[1] विवश होकर असुर बक और उसके साथी पाताल लोक को चले गए।

जनता असुर के आतंक से मुक्त हुई। सबने मिलकर माता की स्तुति की। उनसे निवेदन किया कि वे उसी पर्वत शिखर पर निवास करें। देवी दुर्गा ने इस शैल शिखर पर निवास करने का निर्णय किया। उनके निवास के कारण पूरे पर्वत का नाम शारिका शैल अथवा हारी पर्वत पड़ गया।[2] हारी का अर्थ पक्षी है। शारिका शैल की अपेक्षा हारी पर्वत शब्द छोटा और बोलने में आसान था। अतः आम जनता इसे हारी पर्वत के नाम से अभिहित करने लगी। धीरे-धीरे भाषा विज्ञान के 'प्रयत्न लाघव' सिद्धान्त के अनुसार जनता हारी के स्थान पर हरी शब्द बोलने लगी और फिर धीरे-धीरे यही नाम रूढ़ हो गया।

श्री विद्या यन्त्र से युक्त यह स्थान देवी पीठ माना जाता है।[3]

---

1. गिरिम स्तंभपद् देवी द्वार दैत्यपते यदा।
   तदा प्रभृति देवेशि गतौ वै शारिका गिरिः॥

   भृंगीश संहिता, पटल 2

2. शारिका हि अन देवेशि तस्थौ च स्व विभूतिभिः। वही पटल 2

3. देवीपीठमिदं प्रोक्तं श्री विद्या यन्त्र मुत्तमम्॥

   भृंगीश संहिता पटल 2

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जिन स्थानों में प्राकृतिक रूप से देवी शक्ति का प्रकाश है अर्थात् जो स्थान प्रकृति-निर्मित हैं, किसी व्यक्ति के द्वारा जिनका निर्माण नहीं हुआ है, वे पीठ कहलाते हैं। संक्षेप में देवता के निवास स्थान को पीठ कहा जाता है। शारिका माहात्म्य नामक रचना के अनुसार प्रधुम्न शिखर पर माता शारिका देवी की पूजा करके मानव सब प्रकार की कामनाओं की पूर्ति कर सकता है।[1] इस पीठ की प्रदक्षिणा करने का बहुत माहात्म्य बताया गया है। इसी कारण दुर्गा पूजा उत्सव के दिनों कई श्रद्धालु आज भी इसकी प्रदक्षिणा करते हैं। यदि पूरे पर्वत की प्रदक्षिणा न हो सके तो केवल श्रृंग मात्र की प्रदक्षिणा करने का भी विधान है।[2]

इस स्थान पर एक शिला पर श्रीचक्र अंकित है। इस शिला पर इतना अधिक सिन्धूर लगाया गया है कि श्रीचक्र की रेखाएं स्पष्ट दिखाई नहीं देती। भृंगीश संहिता के अनुसार शारिका शैल के श्री यन्त्र की पूजा करके अगस्त्य, लोपामुद्रा, कुबेर, इन्द्र आदि ने सिद्धि प्राप्त की थी।[3] श्रीचक्र की पूजा से संसार के सुख और वैभव को प्राप्त किया जा सकता है।[4]

हरी पर्वत पर शारिका देवी की कोई खनित प्रतिमा नहीं है, वहां पर एक शिलाखण्ड है जो एक पक्षी के आकार जैसा लगता है। यदि इस शिलाखण्ड को दूर से ध्यान पूर्वक देखा जाए तो

---

1. सर्वान्कामान् अवान्पोति पूंजयित्वा महेश्वरीम्।
   प्रधुम्न शिखरे पुण्ये शीघ्र पुण्य प्रदे कलौ ।। वही पटल 2
2. वही पटल 5
3. भ्रंगीश संहिता: शारिका माहात्म्य पटल 5
4. पद पद विभवं लोके यद् यद् दिव्यं महासुखम्।
   तत्त[illegible] श्रीचक्रस्य च पूजनात् ।।
   वही पटल, 5 श्लोक, 78

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इसका रूप शारिका पक्षी जैसा प्रतीत होता है और उसकी चोंच तो साफ तौर पर दिखाई देती है।

इस स्थान पर माता शारिका देवी की पूजा अति प्राचीन-काल से होती आ रही थी। दुर्गा नवमी के पर्व पर इस पर्वत पर उत्सव मनाया जाता है। यह दिन देवी के जन्म दिन के रूप में माना जाता है। इस दिन हवन और यज्ञ होता है। यात्री पूरे शारिका पर्वत की परिक्रमा करते हैं। महाराजा गुलाब सिंह ने ईस्वी वर्ष 1846 में काश्मीर पर अधिकार प्राप्त करने के बाद इस स्थान पर शारिका देवी का मन्दिर भी बनवाया था। इस पर्वत पर गणेश, काली, चक्रेश्वर और शारिका देवी के पूजा स्थान हैं। पर्वत की चोटी पर देवी के स्थान तक पहुंचने के लिए जहां से सीढ़ियां बनाई गई हैं वहां एक और मन्दिर बना है। मन्दिर के भीतर देवी की मूर्ति और बाहर रुद्र की स्थापना की गई है।

शारिका देवो का पूजा स्थान पर्वत के उत्तर-पश्चिमी भाग में है। जबकि पर्वत शिखर के दक्षिणी कोने पर स्थित एक शिला-खण्ड भीमा स्वामी गणेश को मूर्ति कही जाती है। यह दोनों पूजा स्थान अत्यन्त प्राचीन हैं।

काश्मीर के राजा प्रवरसेन द्वितीय जब श्रीनगर शहर की स्थापना के लिए स्थान की खोज में था तो एक रात को एक निशाचर ने उससे कहा—

"हे राजन ! मैं जानता हूं तुम एक नया नगर बसाना चाहते हो। इसमें मैं तुम्हारी सहायता करूंगा। प्रात:काल मैं जिस स्थान पर सूत्र रख दूंगा, उस स्थान पर तुम नए नगर का निर्माण करना ऐसा करने से वह नगर सदियों तक बना रहेगा।"

राजा ने दूसरे दिन प्रात: काल शारीटिक गांव में निशाचर से गिराया गया सूत्र देखा। इस स्थान के पास शारिका देवी का

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मन्दिर था। उस मन्दिर के पास ही भगवान गणपति भी विराजमान थे। राजा की श्रद्धा और भक्ति से प्रसन्न होकर भीमा स्वामी नामक गणेश ने राजा के नगर से विपरीत न रहने की इच्छा से पश्चिम की ओर किए गए अपने मुख को तुरन्त पूर्व की ओर कर लिया। नगर बन जाने के बाद हारी पर्वत से इस नगर की शोभा में चार चांद लग गए। नगर के मध्य में यह एक ऐसा मनोहर स्थान था जहां पर जनता मनोरंजन और भ्रमण के लिए भी जाती थी तथा इसकी चोटी पर खड़े होकर नगर के सारे भवनों और वितस्ता के प्रवाह की अनुपम छटा भी देखती थी। राजा प्रवरसेन के पांच शताब्दियों बाद इस नगर का आंखों देखा वर्णन करते हुए महाकवि विल्हण ने लिखा है—"मेरु पर्वत के समान शारिका पर्वत श्रीनगर की शोभा है।" हारी पर्वत की पूर्वीय ढलान के बहुत बड़े क्षेत्र में जियारतें और मस्जिदें बनाई गई हैं। इनमें मुकद्दम शाह और आखून मुल्ला शाह की जियारतें बहुत प्रसिद्ध हैं। हरी पर्वत की उपत्यका में नगर बसाने की यह परंपरा आगे भी चलती रही। ईस्वी वर्ष 1360 में काश्मीर में जब भयानक जलप्लावन हुआ तो तत्कालीन शाहमीर वंशीय सुलतान शहाब्बुदीन ने शारिका पर्वत पर शरण ली। बाद में उसने इसी पर्वत पर एक नगर का निर्माण करवाकर अपनी पटरानी लक्ष्मी के नाम पर उसका नाम लक्ष्मी नगर रखा था।[1] जिस स्थान पर यह नगर आबाद किया गया था उस स्थान को आजकल देवियागन कहते हैं।[2] डा० सूफी के मत में—

"हरि पर्वत के मूल में जहां शारिका देवी का मन्दिर है उसी के आस-पास यह नगर था।"

---

1. जोनराज, राजतरंगिणी : 410
2. डाटर्स आफ वितस्ता : पृष्ठ 141

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इसके उपरान्त सुल्तान जैनुल आबदीन ने (1320-1470) हरी पर्वत से लेकर अमरेश पुर तक जैन नगरी नामक नगर बसाया था। इसके वर्षों बाद मुगल सम्राट अकबर ने ईस्वी वर्ष 1589 में हरी पर्वत की चोटी पर एक किले का निर्माण कराया तथा इसी पर्वत को ढलान पर 1 करोड़ 10 लाख मुद्राएं खर्च करके नगर-नागर नामक शहर बसाया था और मुगल सेना को उसमें निवास करने की आज्ञा दी। ईस्वी वर्ष 1594 में अकबर ने हरी पर्वत पर एक बाग लगवाया जो डल झील तक विस्तृत था। उसका नाम दर्शनी बाग था। वहां पर अकबर ने एक सुन्दर महल भी बनवाया था जहां से वह प्रजा को दर्शन देता था।[1]

अकबर के उपरान्त जहांगीर जिसने आठ बार काश्मीर की यात्रा की थी और अपने जीवन का महत्त्वपूर्ण भाग काश्मीर में बिताया था, इसी महल में निवास करता था। जहांगीर के बाद मुगल सम्राट शाहजहां चार बार काश्मीर में आकर इसी महल में ठहरा था। ईस्वी वर्ष 1663 में जब औरंगजेब अपनी प्रथम और अन्तिम काश्मीर यात्रा पर आया था तो वह अपने परदादा अकबर महान् द्वारा बनवाए गए किले, महल, नगर और दर्शनी बाग को देखकर आश्चर्यचकित रह गया था। सुरक्षा की दृष्टि से राजपरिवार के लिए तथा सम्राट के साथ चलने वाली मुगल सेना के शिवर के लिए नगर-नागर में विशेष व्यवस्था थी ताकि नागरिक सैनिकों के द्वारा पीड़ित न हों। औरंगजेब के साथ उसकी बहन रौशन आरा तथा रनिवास की अन्य स्त्रियां थी। साथ आई सेना में पैंतीस हजार घुड़सवार, दस हजार सैनिक तथा सत्तर तोपें थीं। सम्राट भिम्बर और राजौरी के रास्ते काश्मीर आया था। भिम्बर से पन्द्रह हजार

1. रघुनाथ सिंह, राजतरंगिणी : भाग 1, पृष्ठ 193

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मजदूर सम्राट की यात्रा का सामान ढोने के लिए लगाए गए थे। औरंगजेब लगातार तीन महीने तक हरी पर्वत से सम्पूर्ण देश का शासन चलाता रहा।

हरि पर्वत पर सम्राट अकबर द्वारा निर्मित किला समय गुजरने के साथ-साथ प्रशासन और सैनिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होता गया। मुगलकाल में मुगल सेना की यह प्रधान छावनी था।

ईस्वी वर्ष 1586 से 1753 तक इस किले के बुर्ज पर मुगल सम्राट का ध्वज फहराता रहा। ईस्वी वर्ष 1753 में काबुल के शाह अहमदशाह अब्दाली ने मुगलों से काश्मीर छीन लिया और 66 वर्ष तक हरी पर्वत के किले पर पठानों का विजय ध्वज फहराया जाता रहा।[1] ईस्वी वर्ष 1819 से ईस्वी वर्ष 1846 तक इस किले पर लाहौर दरबार का अधिकार रहा।

ईस्वी वर्ष 1845 में सिखों की पराजय के बाद लाहौर राज्य की ब्यास एवं सतलुज के मध्य की भूमि अंग्रेजों के अधिकार में चली गई। एक सन्धि के द्वारा काश्मीर राज्य राजा गुलाबसिंह को सौंप दिया गया। अंग्रेजों ने पचहत्तर लाख रुपये लेकर इस सन्धि के अनुसार राजा गुलाबसिंह के अधीन आने वाली भूमि का निर्धारण किया और उसे वचन दिया कि वे उसकी भूमि की रक्षा में सहायक होंगे।

इस सन्धि के अनुसार राजा गुलाबसिंह ने दीवान लखपतराय को आदेश दिया कि वह सेना के साथ श्रीनगर जाकर काश्मीर के शासन को अपने अधिकार में ले लेवे। दीवान लखपतराय सेना सहित हरि पर्वत पर पहुंचा और वहां के किले पर अधिकार कर लिया। उसने सिख शासन के राज्यपाल शेख

1. डा० रघुनाथ सिंह, राजतरंगिणी : तरंग 1, पृष्ठ 418

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इमामुद्दीन को संदेश भेजा कि लाहौर दरबार ने काश्मीर, राजा गुलाबसिंह को दे दिया है। उसका शासन तत्काल हस्तांतरित किया जाए।

राज्यपाल ने उत्तर दिया कि वह राजा गुलाबसिंह को अपना स्वामी मानने को तैयार है। यदि उसे ही राज्यपाल की पदवी पर रहने दिया जाए तो वह हर साल एक लाख रुपये दिया करेगा। लखपतराय ने फौरन एक लाख रुपये मांगे। राज्यपाल ने जब इस सम्बन्ध में लाहौर दरबार से सम्पर्क किया तो वहां के प्रधानमन्त्री लालसिंह ने, जो राजा गुलाबसिंह का शत्रु था, राज्यपाल को आदेश दिया कि किसी भी प्रकार काश्मीर, राजा गुलाबसिंह के अधिकार में न जाने पाए। इसके परिणामस्वरूप दोनों पक्षों में युद्ध छिड़ गया। दीवान लखपतराय और उसका सहायक रामसिंह अनेक अन्य सैनिकों के साथ मारे गए। बाकी सेना हरि पर्वत के किले में चली गई और वहां से अपनी सुरक्षा करने लगी। राज्यपाल ने किले को चालीस दिन तक घेर रखा।

जम्मू में जब राजा गुलाबसिंह को इस स्थिति का पता चला तो वह स्वयं बहुत बड़ी सेना और कुछ अंग्रेज अधिकारियों के साथ श्रीनगर पहुंचा। अंग्रेज अधिकारियों में कैप्टन ब्रूम और लैफ्टीनैन्ट निकोलसन मुख्य थे। राज्यपाल इमामुद्दीन हरिपर्वत का घेरा छोड़कर पीछे हट गया, परन्तु उसने पीछे से अचानक आक्रमण करके डोगरा सेना के लगभग एक सौ सैनिक मार दिए। राजा गुलाबसिंह जम्मू चले गए।

युद्ध होता रहा। डोगरा सेनापति वजीर रतनू अंग्रेज सेना के आने की प्रतीक्षा में हरि पर्वत पर डटा रहा। राज्यपाल ने राजौरी, लेह, गिलगित, खैबर तथा हजारा के शासकों और कबीलों से युद्ध में सहायता मांगी। उधर राजा गुलाबसिंह ने सन्धि के अनुसार लार्ड हार्डिंग से युद्ध में सहायता करने की

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रार्थना की। लार्ड हार्डिग ने मेजर लारैंन्स को आदेश दिया कि वह अपनी सेना लेकर श्रीनगर जाए और सिख शासन के राज्य-पाल को हटाने में राजा गुलाबसिंह की सहायता करे।

अंग्रेजों की सेना के साथ जम्मू से तीस हजार डोगरा सैनिक भी शामिल हो गए। जब यह सेना श्रीनगर पहुंची तो राज्यपाल ने आत्म समर्पण करके काश्मीर का प्रशासन वजीर रतनू को सौंप दिया। वजीर रतनू अप्रैल में श्रीनगर आया था। अक्तूबर के अन्तिम सप्ताह में उसे अपने मिशन में सफलता मिली। इस प्रकार एक नवम्बर ईस्वी वर्ष 1846 को काश्मीर राज्य लक्ष्मी ने सिक्खों को छोड़कर राजा गुलाबसिंह का वरण कर लिया। हरिपर्वत से तोप के गोले दागने के साथ-साथ शारिका शैल दुर्ग पर महाराजा गुलाबसिंह का ध्वज फहरा दिया गया।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चश्माशाही

काश्मीर-भूमि नदियों, सरोवरों, झरनों और चश्मों की भूमि है। इसमें वितस्ता और सिन्धु जैसी नदियां, डल और ऊलर जैसी झीलें, अहरवल जैसे झरने और कुक्करनाग एवं चश्माशाही जैसे चश्में हैं। इन चश्मों से प्रवाहित होने वाला शीतल, स्वच्छ और स्वास्थ्यवर्धक जल सामान्य जनता के अतिरिक्त सम्राटों, राजा-महाराजाओं, सामन्तों और देशी-विदेशी पर्यटकों को भी आकर्षित करता रहा है। यद्यपि प्राचीनकाल में भी चश्माशाही की अपनी महत्ता रही है, किन्तु उस काल में विशिष्ट व्यक्ति ही इस स्थान पर आया करते थे।

ईस्वी वर्ष 1947 के उपरान्त काश्मीर में पर्यटन उद्योग के विकास का जो क्रम आरम्भ हुआ उसके फलस्वरूप चश्माशाही और इसके समान अन्य प्राकृतिक स्थानों के गौरव में वृद्धि हुई। इनका विकास भी हुआ और इनके रख-रखाव तथा सौन्दर्य वृद्धि की ओर भी सरकार का ध्यान गया। इन स्थानों की ओर जाने वाले राजमार्गों का सुधार और पुर्ननिर्माण किया गया। पर्यटकों के सुख और सुविधा को ध्यान में रखकर अन्य आवश्यक प्रबन्ध भी किए गए।

इतिहास ग्रन्थों के अनुसार चश्माशाही उद्यान का निर्माण मुगल सम्राट शाहजहां के आदेश से ईस्वी वर्ष 1642 में काश्मीर के तत्कालीन राज्यपाल अलीमर्दान खान ने करवाया था।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शाहजहां जहांगीर का तीसरा पुत्र था। उसका जन्म ईस्वी वर्ष 1593 में जनवरी की पांच तारीख को लाहौर में हुआ था। वह बचपन में मिर्जा खुर्रम के नाम से पुकारा जाता था, पर उसका वास्तविक नाम शहाबुद्दीन मुहम्मद साहिब किरान सानी था। इसकी माता का नाम बालमती था जो राजा उदयसिंह की लड़की तथा जोधपुर के महाराजा मालदेव की पोती थी।

शाहजहां ने तीस वर्ष राज्य किया। ईस्वी वर्ष 1658 में बीमार पड़ने पर उसके पुत्र औरंगजेब ने उसे आगरा के किले में कैद कर दिया। सात वर्ष छह महीने कारागार में वास करने के बाद ईस्वी वर्ष 1666 के जनवरी मास की 23 तारीख को सोमवार की रात 76 वर्ष की अवस्था में शाहजहां का निधन हुआ। इनके चार पुत्र और चार पुत्रियां थीं। पुत्रों में दाराशिकोह, शाहशुजा, आलमगीर और मुरादवक्श तथा कन्याओं में अन्जुम आरा, गैति आरा, जहान आरा और रोशन आरा थीं।

शाहजहां के आदेश से निर्मित होने के कारण इस उद्यान का नाम चश्माशाही पड़ा। ईस्वी वर्ष 1586 से लेकर 1753 ईस्वी वर्ष पर्यन्त काश्मीर में मुगलों का शासन था। अकबर और जहांगीर काश्मीर में अनेक उद्यानों की रचना करवा चुके थे। शाहजहां के पिता सम्राट जहांगीर को काश्मीर के प्रति इतना लगाव था कि इतने बड़े देश का सम्राट होने पर भी उसने काश्मीर की आठ बार यात्रा की और काश्मीर के प्राकृतिक वातावरण में उसने वर्षों व्यतीत किए।

अकबर ने भी चार बार काश्मीर की यात्रा की थी। उसने ईस्वी वर्ष 1594 में की गई यात्रा के दिनों में हरी पर्वत से लेकर डल झील तक एक विशाल उद्यान का निर्माण करवाकर उसका नाम दर्शनी बाग रखा था। जहांगीर ने वेरीनाग के कुण्ड को रमणीक बनाया और फिर शालीमार उद्यान के निर्माण में

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विशेष रुचि ली। इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए शाहजहां ने चश्माशाही, निशात और अच्छाबल जैसे उद्यानों की रचना करवाई थी।

ईस्वी वर्ष (1641-1642) में अलीमर्दान खां काश्मीर का राज्यपाल था। वह सम्राट शाहजहां का विश्वासपात्र था। उसने पंजाब का राज्यपाल रहते समय लाहौर में शालीमार बाग का निर्माण करवाया था। यह राज्यपाल इतना धनी था कि इसने अपनी जेब से पैसा खर्च करके लाहौर व काश्मीर के मार्ग में अनेक सरायों को बनवाया था। ईस्वी वर्ष 1631 में चश्माशाही बाग के निर्माण की जो योजना बनाई गई थी उसे पूर्णता प्रदान करने का आदेश अलीमर्दान खान को दिया गया। सम्राट के आदेश के अनुसार चश्माशाही बाग को एक सौ तेरह गज लम्बा तथा बयालीस गज चौड़ा किया गया। उद्यान की सुरक्षा के लिए उसे सब ओर से सात गज ऊंची विशाल दीवार से घेरा गया।

सम्राट शाहजहां के शासनकाल ईस्वी वर्ष 1658 तक चश्माशाही उद्यान की विशेष व्यवस्था होती रही। काश्मीर की अपनी चारों यात्राओं के काल में सम्राट जितने दिन भी श्रीनगर शहर में रहा, इसी चश्मे का जल सेवन करता रहा। इस चश्मे के जल के सम्बन्ध में कहा जाता था कि यह विश्व में सर्वश्रेष्ठ जल है। बाद के वर्षों में जब चश्माशाही का जल जांच के लिए फ्रांस भेजा गया तो परीक्षण के बाद पता चला कि यह शुद्ध जल है। फ्रांस का विशीवाटर इससे बेहतर प्रमाणित हुआ था। आज भी चश्माशाही का जल अत्यन्त शीतल, मधुर और पारदर्शी है। आगंतुक और पर्यटक इसे बड़े चाव से पीते हैं। भारत के पूर्व प्रधानमन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू भी इस चश्मे का जल मंगाकर पिया करते थे। जम्मू-काश्मीर के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री स्वर्गीय बख्शी गुलाममुहम्मद श्री नेहरू को चश्माशाही का जल भेजते रहते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पूर्वकाल में चश्माशाही के इर्द-गिर्द के क्षेत्र में निर्माण नहीं किए गए थे। शाहजहां के सबसे बड़े पुत्र दाराशिकोह ने इस चश्मे के निकट श्री पर्वत की ढलान पर परीमहल का निर्माण अवश्य करवाया था, किन्तु सामान्य रूप में चश्मे के इर्द-गिर्द का भू-भाग पूर्णरूप से खाली था।

पठान शासन काल (1753-1819 ई०) में इस मनोरम स्थान का कोई विकास नहीं हुआ परन्तु सिख शासन के दसवें राज्यपाल गुलाम महीयुद्दीन (1841-1686) ने जो राज्यपाल के रूप में काश्मीर घाटी में छह वर्ष तक रहा था। इस स्थान पर निर्माण करवाया था। इसने गर्मियों के मौसम में अपने निवास के लिए एक अत्यन्त सुन्दर महल यहां पर बनवाया था। शेख इमामुद्दीन राज्यपाल का सहायक या जो अपने पिता शेख गुलाम महीयुद्दीन के मृत्यु के बाद ईस्वी वर्ष 1846 में अल्पकाल के काश्मीर का राज्यपाल हुआ। इसने अपने पिता द्वारा बनवाए गए महल में चित्रकारी करवाकर सजाया था।

डोगरा महाराजा प्रतापसिंह के शासनकाल में (1885-1925 ई०) वायसराय ने महाराजा की इच्छा की उपेक्षा करके काश्मीर में अपना प्रतिनिधि (Resident) नियुक्त कर दिया था। ईस्वी वर्ष 1888 के मार्च में टी०सी० प्लाऊडन काश्मीर में प्रथम रेजिडैन्ट नियुक्त हुआ, पर जल्दी ही उसके स्थान पर कर्नल आर पैरी को भेजा गया। ये अंग्रेज, नगर के कोलाहल से दूर डल झील के शीतल, शान्त और मनोरम वातावरण में निवास को अधिमान देते थे। अत: चश्माशाही के पास उनके आवास का प्रबन्ध किया गया। स्वतन्त्रता के उपरान्त इस स्थान को राज-भवन के रूप में प्रयुक्त किया जाने लगा। आज भी प्रदेश के राज्यपाल यहीं पर निवास करते हैं।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

गत कुछ वर्षों से काश्मीर में भारी संख्या में पर्यटक आने लगे

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हैं। उन्हें आवास सुविधा प्रदान करने के लिए इस केन्द्रों में अनेक छोटे-उड़े आवासगृहों का निर्माण किया गया है। सुख और शांति से अवकाश का समय व्यतीत करने के लिए पर्यटकों को जिन वस्तुओं की अनिवार्य आवश्यकता होती है उन सब को इस स्थान पर उपलब्ध करवाने के प्रबन्ध किए गए हैं।

श्रीपर्वत की ऊंची-नीची ढलान पर निर्मित होने के कारण यह उद्यान अनेक भागों में बंटा हुआ है। श्रीनगर से डल झील के किनारे-किनारे निशात और शालीमार उद्यान की ओर ले जाने वाले राजमार्ग से एक सम्पर्क सड़क राजभवन की ओर चली गई है। यही सड़क चश्माशाही के द्वार तक ले जाती है। इस सड़क से चश्माशाही उद्यान का धरातल बहुत ऊंचा है। लगभग चालीस सीढ़ियां चढ़ने के उपरान्त प्रवेश द्वार को पार करके उद्यान का प्रथम भाग दिखाई देता है। प्रवेश द्वार तक ले जाने वाली इन सीढ़ियों के दोनों तरफ की ढलान पर क्यारियां बनाकर चार-चार पंक्तियों में रंग-बिरंगे फूलों के पौधे लगाए गए हैं। प्रवेश द्वार के दोनों तरफ की दीवार पर बिजली के बड़े-बड़े बारह बल्ब लगाए गए हैं, जो रात के समय उद्यान के इस भाग पर चांदनी की तरह सफेद रोशनी बिखेरते हैं। उद्यान के प्रथम भाग के मध्य में एक जलकुण्ड है जिसमें चश्मे का जल एक छोटी-सी नहर के द्वारा प्रवेश करता है। जलकुण्ड में फव्वारे लगे हैं तथा इसके चारों कोनों पर गुलमोहर का एक-एक पेड़ लगा है। जलकुण्ड के दोनों तरफ की उद्यान भूमिमखमली घास से सुशोभित है।

उद्यान के दूसरे भाग का धरातल पहले भाग से लगभग पच्चीस-तीस फुट ऊंचा है। इसमें पहुंचने के लिए पुनः पच्चीस सीढ़ियां चढ़नी पड़ती हैं। जिस मार्ग से चश्मे का जल तीन फुट चौड़ी नहर के द्वारा नीचे गिराया गया है, उस स्थान के दोनों

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तरफ सीढ़ियां बनाई गई हैं। सीढ़ियों के मध्य भाग में स्थापित खनित शिलाखण्ड पर प्रवाहित जल की धारा बड़ी आकर्षक लगती है। जलधारा के वाम और दक्षिण भाग की दीवार हरित लताओं से आवृत है। उद्यान का शेष भाग रंग-बिरंगे और विविध आकार के फूलों और कोमल हरे घास से सुशोभित है। फूलों की छोटी-बड़ी क्यारियों के साथ-साथ लगाए गए बिजली के बहुरंगी बल्ब रात के अंधेरे में अलौकिक दृश्य उपस्थित करते हैं।

गत कुछ वर्षों में उद्यान के इस भाग की सीमा को पर्वत की खुदाई करके बढ़ाया गया है। इसके मध्य में बनाए गए जलकुण्ड में केवल एक फव्वारा लगा है। जलकुण्ड के इर्द-गिर्द केवल नीले रंग के फूल ही आरोपित किए गए हैं।

इस कुण्ड के चारों कोनों में भी एक-एक गुलमोहर का पेड़ स्थापित है। जलकुण्ड के दोनों तरफ की उद्यान-भूमि में चार अम्बरेला के वृक्ष शोभायमान हैं जो पूर्ण रूप से छाते की आकृति लिए हुए हैं। उद्यान का यह भाग पर्यटकों अथवा अन्य दर्शकों के विश्राम के लिए पर्याप्त स्थान प्रदान करता है। फूलों की क्यारियां जलकुण्ड के इर्द-गिर्द और उद्यान के सीमा क्षेत्र में बनाई गई है। बीच का हरियाली से आपूर्ण भाग पूरी तरह खाली रखा गया है।

इस उद्यान का तीसरा भाग दूसरे भाग से केवल सात फुट ऊंचा है। यह लगभग चालीस फुट चौड़ा और एक सौ फुट लम्बा है। उद्यान का यही भाग सबसे महत्त्वपर्ण है। इसी के मध्य भाग में पर्वत से शीतल मधुर और पारदर्शी जल का वह स्रोत प्रवाहित है जिसके कारण सम्राट शाहजहां ने इस स्थान को एक रमणीक उद्यान के रूप में परिवर्तित करने की कल्पना की थी। स्रोत के इर्द-गिर्द काले रंग के संगेमरमर के शिलाखण्ड लगाए गए हैं। कमल के फूल की आकृति से शोभित इन शिलाखण्डों के मध्य

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाग से प्रवाहित इस चश्मे के अग्रभाग में छोटे आकार का जल-कुण्ड बना हुआ है। चश्मे का जल इसमें एकत्रित होकर एक छोटी-सी नहर के द्वारा उद्यान के प्रत्येक भाग में पहुंचता है। अब इस स्रोत को सुरक्षा प्रदान करने के लिए इसके इर्द-गिर्द चार फुट ऊंची चारदीवारी करके उस पर छत डाल दी गई है। चारदीवारी और छत में सुराख रखे गए हैं। स्रोत के इर्द-गिर्द किया गया महलनुमा निर्माण काफी पुराना लगता है।

चश्माशाही से दो पाइपों के माध्यम से जल की धाराएं प्रवाहित हैं। उद्यान में आने वाला प्राय: प्रत्येक पर्यटक और स्थानीय दर्शक इस चश्मे का जल पीने के लिए उत्सुक रहता है। सड़क से सीढ़ियां चढ़कर इस स्थान तक पहुंचते-पहुंचते प्यास की अनुभूति होने लगती है। थका हुआ यात्री चश्मे पर पहुंचकर जब इसका जल पीता है तो उसे अलौकिक तृप्ति मिलती है। आम पर्यटक जितनी देर तक इस उद्यान में विश्राम करते हैं, बार-बार चश्मे का जल पीते दिखाई देते हैं। पूर्वकाल में इस चश्मे से जल की विशाल धारा प्रवाहित होती थी, किन्तु अब उसके परिमाण में कमी आ गई है।

जलकुण्ड के आगे का लगभग बीस फुट चौड़ा और चालीस फुट लम्बा भू-भाग पत्थर लगाकर पक्का कर दिया गया है। जल कुण्ड से निकलती हुई नहर की धारा का यही आरम्भिक स्थान है। इस नहर के भीतर थोड़ी-थोड़ी दूरी पर रंग-बिरंगे बिजली के बल्ब फिट किए गए गए हैं। नहर के साथ-साथ उद्यान की सभी क्यारियों में लाल, नीले, सब्ज, सफेद और पीले रंग की बिजली की बत्तियां स्थापित की गई हैं जो अंधेरा होते हो पूरे उद्यान को बहुरंगी प्रकाश से जगमगा देती है।

गत कुछ वर्षों से चश्माशाही उद्यान के एरिए को बढ़ाने के प्रयास किए गए हैं। दाएं भाग में पर्वत की ऊंची-नीची ढलान को

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

समतल करके उसे इस उद्यान के अंग के रूप में विकसित किया जा रहा है। उद्यान का वामभाग जो नीचे राजभवन की सीमा से मिलता है, अब वर्षों की मेहनत के फलस्वरूप उद्यान का रूप ले चुका है। उद्यान के इस भाग में आम पर्यटक नहीं जाते। रविवार के अवकाश के दिन बहुत से स्थानीय परिवार जो घर से भोजन और चाय का सामान अपने साथ लेकर आते हैं, उद्यान के कोलाहल और भीड़ से मुक्त इस भाग में विश्राम करना पसन्द करते हैं। उद्यान के इस क्षेत्र में एक तरफ केवल गुलाब के फूल लगाए हैं और शेष भूमि को हरित और कोमल घास से पूर्ण करके उसे इसलिए खाली छोड़ दिया गया है ताकि उद्यान में आने वाले लोगों को बैठने के लिए पर्याप्त स्थान मिल सके।

काश्मीर घाटी के उद्यानों की शोभा बढ़ाने में बहुरंगी फूलों, जल की धाराओं और चिनार के वृक्षों ने विशेष भूमिका निभाई है। इस उद्यान में जाफरी, जीनिया, पंजीन, पिटोनिया, शेरदान, गुण्डी, हलीमियां, गिलोडिया सूरजमुखी और गुलाब के फूल हैं। जल की धारा भी है, परन्तु चिनारों का अभाव है। पूरे उद्यान में चिनार के केवल दो पेड़ हैं। चिनार का पेड़ अपनी शीतल और घनी छाया के लिए प्रसिद्ध है।

जहांगीर ने शालीमार बाग में लगभग एक सौ तथा आसफखां ने निशात में दो सौ पच्चीस चिनार के पेड़ लगवाए थे। पता नहीं चश्माशाही बाग के निर्माण की योजना बनाते समय सम्राट शाहजहां का ध्यान इस ओर क्यों नहीं गया।

प्राकृतिक दृष्टि से चश्माशाही की स्थिति अत्यन्त रमणीक है। उसका अपना जल स्रोत उसे दूसरे उद्यानों से महत्त्वपूर्ण बना देता है। एक तरफ श्रीपर्वत, उत्तर में निशात, पश्चिम में डल झील और आसपास के क्षेत्र का शान्त और एकान्त वातावरण ये सब मिलकर इस उद्यान की रमणीयता में वृद्धि करते हैं।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

निशात

निशात काश्मीर भूमि का सबसे मनोहर उद्यान है जिसकी रचना मलिका नूरजहां के भाई आसफ खान ने करवाई थी। आसफखां के पिता एतमाद-उद-दौला गयासवेग, सम्राट जहांगीर के मन्त्री थे जिनकी मृत्यु के उपरान्त जहांगीर ने इन्हें अपना मन्त्री बनाया था। इनका असली नाम अब्दुलहसन था। आसफखां इनकी उपाधि थी। इनके शाईस्ता खान, मिर्जा मसीह, मिर्जा हुसेन और शाहनवाज खान नामक चार पुत्र और मुमताज महल नाम की एक कन्या थी। मुमताज महल का विवाह शहजादा खुर्रम के साथ हुआ था जो सम्राट जहांगीर की मृत्यु के उपरान्त ईस्वी वर्ष 1628 के फरवरी मास की 24 तारीख को राजसिंहासन पर बैठा।

मलिका नूरजहां की शेर अफगान से उत्पन्न कन्या का विवाह जहांगीर के सबसे छोटे पुत्र शहरयार से हुआ था। नूरजहां ने उसे ही मुगल सम्राट बनाने का यत्न किया। परन्तु उसका भाई आसफखान अपने जामाता शहजादा खुर्रम को सिंहासन पर बिठाना चाहता था। वह मुगल शासन का शक्तिशाली मन्त्री था। उसकी सहायता प्राप्त कर शहजादा खुर्रम शाहजहां के नाम से सिंहासन पर आरूढ़ हो गया। कुछ ही दिनों में उसने अपने प्रतिद्वन्द्वियों का नाश कर दिया।

आसफखां के पिता गयासवेग ने सम्राट अकबर और सम्राट जहांगीर की सेवा की थी। स्वयं आसफखां ने अपना पूरा जीवन मुगल साम्राज्य की सेवा में व्यतीत किया था। इसके साथ-साथ सम्राट जहांगीर के साथ उसकी बहन नूरजहां का तथा सम्राट शाहजहां के साथ उसकी एकमात्र बेटी मुमताज महल का विवाह हुआ था। उसकी सामयिक सहायता पाकर ही शाहजहां मुगल सिंहासन पाने में सफल हुआ था। अतः सम्राट के दिल और दरबार में इनका बहुत बड़ा मान था।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजनैतिक दृष्टि से आसफखां को बहुत ही भाग्यशाली समझा जाएगा। उसका पिता गयासवेग अकबर महान का परम विश्वासपात्र था। जहांगीर उसकी बहन नूरजहां के हाथ को कठपुतली था और शाहजहां उसकी बेटी मुमताज महल का दीवाना था। इस बात पर विश्वास करना बड़ा कठिन लगता है कि निशात जैसा सुन्दर उद्यान केवल आसफखां की देन है।

अपने पिता जहांगीर की तरह शाहजहां भी काश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य का दीवाना था। उसने चार बार काश्मीर की यात्रा की थी और अपनी प्रत्येक यात्रा में कोई-न-कोई निर्माण अवश्य करवाया था। ईस्वी वर्ष 1631 में शाहजहां के आदेश से चश्माशाही उद्यान तथा ईस्वी वर्ष 1632 में निशात उद्यान के निर्माण की योजना बनाई गई। ईस्वी वर्ष 1640 की काश्मीर यात्रा में उसने अच्छावल में एक उद्यान बनवाकर उसमें फव्वारे लगाने का निर्देश दिया। ईस्वी वर्ष 1645 में उसने लगातार छह महीने तक काश्मीर के रमणीक स्थानों का भ्रमण किया। ईस्वी वर्ष 1651 में शाहजहां ने दो महीने काश्मीर घाटी में निवास किया। शाहजहां और उसके परिवार के सदस्य भी काश्मीर में आए और उन्होंने भी अनेक छोटे-बड़े बागों का निर्माण करवाया जिनमें चारचिनारी और परीमहल विशेष हैं।

सम्राट शाहजहां अत्यन्त सुन्दर और आकर्षक निर्माणों के प्रति विशेष रूप से उन्मुख था। उसकी इस रुचि के प्रतीक हैं, दिल्ली का लालकिला और जामा मस्जिद, आगरे का ताजमहल, काश्मीर की हजरतवल मस्जिद और निशात बाग। यह तो हो सकता है कि जिस प्रकार जहांगीर के आदेश से आसफखां ने मटन में चिनारों का एक उद्यान लगवाया था, उसी प्रकार निशात बाग के निर्माण की जिम्मेदारी शाहजहां ने आसफखां को दी होगी। आसफखां को चिनार के पेड़ बहुत बहुत भाते थे शायद इसी कारण से उसने निशात बाग का आरम्भ उसके प्रथम भाग में केवल चिनार के पेड़ लगाकर ही किया था।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

निशात बाग चश्माशाही और शालीमार उद्यान के मध्य भाग में शोभायमान है। पृष्ठ भाग में सटा हुआ श्रीपर्वत, अग्र-भाग में उद्यान के द्वार का स्पर्श करती डल झील बिल्कुल सामने झील के पार खड़ा हरि पर्वत और दक्षिण में शंकराचार्य की पहाड़ी—ये सब मिलकर इस उद्यान के प्राकृतिक आकर्षण में वृद्धि करते हैं। निशात में आने के लिए दो मार्ग हैं। आप डल झील के मार्ग से नेहरू पार्क, सोनलंका और चार चिनारी के दर्शन करते हुए इस उद्यान के मुख्य प्रवेश द्वार तक पहुंच सकते हैं, बस या कार से होटलों की लम्बी कतार के सामने गुजरती हुई डल झील के किनारे-किनारे बनाई गई सड़क के द्वारा भी।

डल झील और निशात के प्रवेश द्वार के बीच सड़क है। सड़क के कुछ ऊपर दो द्वार हैं। एक प्रवेश के लिए और दूसरा निकास के लिए। इसके अन्दर प्रवेश करते ही अत्यन्त लाल रंग के फूलों की कतारें और पांच फव्वारे आपका स्वागत करते हैं। इस स्थान के बीस फुट ऊपर बने धरातल से सम्पर्ण उद्यान दिखाई देता है।

निशात उद्यान श्रीपर्वत की ढलान पर निर्मित होने के कारण लगभग चौदह भागों में विभाजित है। पर्वत की ओर से यदि हम नीचे आना शुरू करें तो इसके प्रथम भाग में केवल चिनार के ही पेड़ लगाए गए हैं। इसी भाग से नहर का आरम्भ होता है। नहर के दोनों ओर की भूमि में सिवाय चिनार के पेड़ों के और कोई भी फूल या फल का पौधा नहीं लगाया गया है। उद्यान का यह प्रथम भाग दूसरे भाग से तीस फुट ऊंचा है। तीस फुट ऊंचाई से गिरती हुई जल की धारा एक विशाल चौकोर जलकुण्ड में गिरती है जिसमें लगे सोलह फव्वारे एक दूसरे से होड़ करते हुए प्रतीत होते हैं।

उद्यान के दूसरे भाग से चिनारों के पेड़ उद्यान की वाम और दक्षिण सीमाओं पर एक ही पंक्ति में लगाए गए हैं और ये पंक्तियां उद्यान की दीवारों की तरह प्रतीत होती है। आगे

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बढ़ती हुई नहर के जल की धारा तीव्र गति से उद्यान के तीसरे भाग में प्रवेश करती है। इस भाग की नहर में थोड़ी-थोड़ी दूर बीस फव्वारे स्थापित किए गए हैं। फव्वारों के पास की भूमि में एक-एक रंग के फूल कतारों में लगाकर उनमें लाल, पीले, नीले और सफेद रंग के बिजली के बल्व लगाए गए हैं।

उद्यान के चौथे भाग का धरातल तीसरे से लगभग बीस फुट नीचे है। इसमें बने जलकुण्ड से आगे बढ़ती ई नहर के जल की धारा उद्यान के दूसरे भागों में प्रवेश करती है जिनका धरातल क्रम से नीचा होता गया है। उद्यान का अन्तिम भाग जहां से नीचे उतर कर दर्शक उद्यान के बाहर आते हैं बिल्कुल झील के तट का स्पर्श करता है। इस स्थान से झील का पूरा क्षेत्र दिखाई देता है। सायंकाल के समय अस्त होते हुए सूर्य का और रात के समय चांद और सितारों के प्रतिबिंबों का दृश्य इस स्थान से देखते ही बनता है।

यद्यपि निशात शालीमार की तुलना में लम्बाई और चौड़ाई में छोटा है। इस नहर की चौड़ाई भी कम है, इसमें हजारों की संख्या में बिजली के रंग-बिरंगे बल्व भी नहीं लगाए गए, इसमें मुगल रोमांस का कोई वृत्तचित्र भी नहीं दिखाया जाता, फिर भी इसका रूप और सौन्दर्य शालीमार से अधिक है। चिनारों के झुण्डों और डल झील की समीपता ने इसके आकर्षण में वृद्धि की है। इस उद्यान की दाईं तरफ की सीमा पर चिनार के अस्सी पेड़ हैं और तकरीबन इतने ही चिनार बाईं तरफ की सीमा पर भी हैं। इसके अतिरिक्त नहर के तटवर्ती क्षेत्र में भी ये वृक्ष लगाए गए हैं। डल झील की लहरें प्रतिक्षण इसके चरणों का स्पर्श करती हुई इस उद्यान में आने वालों का स्वागत करती प्रतीत होती है। इसके अतिरिक्त निशात में सेव, नाशपाती, लुकाठ, खुमानी, सिंघाड़ा और अखरोट के वृक्ष भी पाए जाते हैं।

निशात अपने बहुरंगी फूलों की विविधता के कारण काश्मीर के लोकगीतों में बहुत चर्चित रहा है। इसमें गुलाब, सूरजमुखी,

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
कापरकिंग, वैलो, सालविया, रायल डी० बी०, गिलोडिया, वाइटस, मैरीगोल्ड, आस्टल, जीनिया, पिटोनिया आदि फूल लगाए गए हैं, परन्तु इनके लगाने के नए-नए ढंग निकाले जाते हैं। सितम्बर 1989 में जब मैं इस उद्यान में गया था तो फूलों को विभाजित करके लगाया गया था। कहीं केवल लाल, कहीं पीले, कहीं नीले, कहीं सूरजमुखी और कहीं केवल गुलाब-ही-गुलाब था। मखमल और रेशम से भी कोमल, हरीतिमा से आपूर्ण उद्यान की भूमि में नहर के दोनों तटों पर लहराते हुए इन फूलों की कतारों और झुण्डों को देखकर पर्यटक अलौकिक आनन्द की अनुभूति करते हैं। कहा जाता है कि जब निशाह बाग बनकर पूर्णरूप से तैयार हो गया तो आसफखां इसके सौन्दर्य पर मोहित हो गया। उसके मन में यह भाव जाग्रत हुआ कि किसी-न-किसी तरह इस बाग के साथ उसका नाम भी उसी तरह जुड़ा रहे, जिस प्रकार शालीमार बाग के साथ उसकी बहन नूरजहां का नाम जुड़ा हुआ था। जब सम्राट शाहजहां काश्मीर की यात्रा पर आया और उसने निशात को देखा तो दंग रह गया। उसने बार-बार आसफखां से कहा कि निशात का सौन्दर्य अनुपम है। सम्राट ने सोचा था कि आसफखां बाग उसे समर्पित कर देगा, पर वह चुप रहा। उसने कोई उत्तर न दिया।

आसफखां सम्राट शाहजहां का ससुर था। आसफखां की पुत्री मुमताज महल उसकी प्यारी महारानी थी और शाहजहां आसफखां की सहायता से ही राजत्व पाने में सफल हुआ था, अतः वह प्रकट रूप में उसे कुछ न कह सका। पर कुछ दिनों के बाद जब उसने देखा कि जल की कमी के कारण शालीमार बाग की हालत खराब हो रही है तो उसने शालीमार से आगे निशात में जाने वाली नहर के पानी को रोक लिया। दोनों बागों में एक ही नहर से पानी जाता था जो हारवन से लाई गई थी। पहले यह नहर केवल शालीमार तक ही बनाई गई थी, पर जब निशात का निर्माण हुआ तो इस नहर को इस बाग की सिंचाई आदि के

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए वहां तक लाया गया।

जल के अभाव में निशात बाग सूखने लगा। सम्राट के रुख से आसफखां बड़ा दु:खी हुआ। वह बाग में बने महल में ही ठहरा हुआ था। उसकी उदासी और परेशानी को देखकर उसका एक सेवक रात के समय उस स्थान पर गया जहां पर पानी रोका गया था। उसने पानी खोल दिया। प्रातःकाल आसफखां ने निशा त में जल की धारा बहती देखी। पूछताछ करने पर जब उसे अपने सेवक द्वारा की गई कारवाई का पता चला तो वह डर गया। जब बात सम्राट तक पहुंची तो उसने सेवक को बुलाकर पूछा कि उसकी आज्ञा का उल्लंघन क्यों किया गया। सेवक ने कहा कि निशात बाग को सूखते देखकर उसका स्वामी बीमार हो रहा था। वह उसके दु:ख को नहीं देख सका। अब वह किसी भी प्रकार की सजा भोगने को तैयार था।

सम्राट शाहजहां उस सेवक की स्वामिभक्ति से बड़ा खुश हुआ और उसे इनाम देकर विदा किया। फिर उसने मन-ही-मन विचार किया कि सम्राट होने के कारण उसका नाम तो इतिहास और ऐतिहासिक स्थानों तथा उसके द्वारा निर्मित निर्माणों से जुड़ा रहेगा। यदि निशात के साथ आसफखां का नाम भी जुड़ा रहे तो क्या। यह सोचकर उसने एक सनद लिखकर आसफखां को दे दी कि भविष्य में वह शालीमार उद्यान को जल प्रदान करने वाली नहर से निशात बाग के लिए जल प्राप्त कर सकेगा।

इस घटना को हुए साढ़े तीन सौ वर्ष गुजर गए। इस अन्त-राल में काश्मीर ने बहुत उतार-चढ़ाव देखे। मुगलों के बाद काश्मीर में पठानों (1753-1819) सिखों (1819-1846) और डोगरों (1846-1947) का शासन रहा, पर निशात के सौन्दर्य और आकर्षण में कोई अन्तर नहीं आया। वह सबको प्यारा लगा। वह सबका दुलारा रहा। मौसमे सरमा के बाद हर वर्ष वह अपने उसी रूप को लेकर सामने आता है जिस रूप ने सौंदर्य पारखी शाहजहां को मोहित किया था।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शालीमार

चश्माशाही के कुछ ही दूर उत्तर-पूर्व में श्रीपर्वत की उपत्यका में काश्मीर घाटी के दो सबसे रमणीय उद्यान हैं—निशात और शालीमार। इनका निर्माण मुगल बादशाहों द्वारा करवाया गया था, अतः इन्हें मुगल बागात की संज्ञा दी गई है। इस क्षेत्र का अन्तिम बाग हारवन है। हारवन झील से श्रीनगर शहर को पीने के पानी की अपूर्ति की जाती है। हारवन में साधारण किस्म के इस उद्यान के एक भाग से एक छोटी-सी नहर गुजरती है। इसी नहर के कारण कुछ लोग यहां पिकनिक के लिए चले आते आते हैं। तेज गति से प्रवाहित होने वाली इस नहर के किनारे कुछ देर के लिए विश्राम करना, प्रत्येक पर्यटक को अच्छा लगता है, किन्तु जहां तक भांति-भांति के रंगों के फूलों, शाखाओं पर सुशोभित फलों, मखमली घास, अठखेलियां करते फव्वारों और रौनक की बात है, निशात और शालीमार बाग हारवन से बहुत आगे हैं।

शालीमार बाग के निर्माण की कल्पना ईस्वी वर्ष 1619 में मुगल सम्राट जहांगीर द्वारा की गई थी। जहांगीर को काश्मीर भूमि से बहुत लगाव था। काश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य को देख-देखकर कभी भी उसका मन नहीं भरा। अपने जीवन की अन्तिम काश्मीर यात्रा में जबकि उसका स्वास्थ्य अश्वारोहण के योग्य नहीं था, उसने पालकी में बैठकर काश्मीर के दर्शनीय स्थानों की यात्रा की थी। इस यात्रा में साम्राज्ञी नूरजहां और उसका भाई आसफखां भी साथ थे।

शालीमार बाग के सम्बन्ध में कहा जाता है कि प्राचीनकाल में काश्मीर के महाप्रतापी राजा प्रवरसेन द्वितीय जिसने श्रीनगर शहर की स्थापना की थी, एक बार डल झील के किनारे-किनारे अश्वारोहण से उस स्थान पर पहुंचा, जहां पर आजकल शाली-

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मार बाग बना हुआ है। राजा प्रवरसेन अत्यन्त प्रकृति प्रेमी था। अपने प्रकृति-प्रेम के कारण ही उसने वितस्ता नदी के तट पर श्रीनगर नामक शहर आबाद किया था। कल्हण ने लिखा है कि उस नगर में आकाश को छूने वाले महल बने थे। उनके अति ऊंचे शिखरों पर चढ़कर निदाध के अन्तिम दिनों में वर्षा से शीतल और हरे घास से पूर्ण तथा रंग-बिरंगे फूलों से शोभित मैदानों की शोभा देखी जाती थी। इस नगर के अतिरिक्त और कहीं भी बाजार तथा उद्यानों के मार्ग पर दोनों ओर निर्मल और शीतल जल से पूर्ण बहती हुई नहरें नहीं देखी गईं।[1]

राजतंरगिणी में कल्हण के इस वर्णन से प्रमाणित होता है कि राजा प्रवरसेन ने श्रीनगर में अनेक उद्यानों और नहरों का निर्माण कराया था। जब भ्रमण करता-करता राजा प्रवरसेन इस स्थान पर पहुंचा तो वहां के प्राकृतिक परिवेश को देखकर आनन्दमग्न हो गया। एक तरफ श्रीपर्वत, दूसरी तरफ मीलों तक विस्तृत, झिलमिलाती तरंगों वाली डल झील तथा तीसरी ओर गिरि शिखरों की लम्बी कतार और इसके साथ ही श्रीपर्वत के पादमूल से झर-झर ध्वनि से बहुता हुआ झरना। राजा ने इस स्थान पर एक अत्यन्त रमणीय उद्यान और उसमें एक सुन्दर महल बनाने का निर्णय किया। वह निर्जन स्थान जनाकीर्ण हो जाए इसके लिए वहां पर एक गांव बसाने की आज्ञा दी।

श्रीपर्वत के पादमूल से प्रवाहित झरने को बांधकर एक नहर का रूप दिया गया और उसके इर्द-गिर्द के क्षेत्र में एक रमणीक उद्यान की स्थापना करवाकर उसके मध्य में एक प्रासाद का निर्माण करवाया गया। नये-नये निर्माण करवाने के रसिक राजा प्रवरसेन ने साठ वर्ष तक राज्य किया। इसके उपरान्त भी यह उद्यान नगर के सम्भ्रान्त लोगों के आकर्षण का केन्द्र बना रहा। समय गुजरता गया। फिर राजनीतक परिस्थितियों के प्रभाववश इस उद्यान की अपेक्षा होती रही, किन्तु उद्यान के मध्य

1. कल्हण : राजतरंगिणी

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

से प्रवाहित होने वाली नहर के आकर्षण और सौन्दर्य में कोई कमी नहीं आई।

सदियां बीत गईं। ईस्वी वर्ष 1586 में प्रकृति प्रेमी मुगल काश्मीर के शासक बनें। जहांगीर अपने पिता सम्राट अकबर महान् के साथ दो बार काश्मीर आया था। युवराज काल में ही काश्मीर के कुदरती नजारों ने उसका दिल जीत लिया था। सम्राट बनते ही उसने सबसे पहले वेरीनाग का उद्धार किया। इस कुण्ड के इर्द-गिर्द अत्यन्त सुन्दर गोलाकार रुपहला चबूतरा बनवाया। परिपंचाल पर्वत के चरणों में एक अत्यन्त रमणीय स्थान से निःसृत यह स्रोत वितस्ता नदी का उद्गम स्थान था। काश्मीर घाटी को मनमोहक बनाने में इस नदी ने बड़ा योगदान दिया है। इसके उद्गम स्थान नीलकुण्ड। वेरीनाग को सम्राट जहांगीर ने निर्माण के द्वारा जो मनोरम रूप प्रदान किया था, वह भी विद्यमान है।

ईस्वी वर्ष 1586 में काश्मीर पर सम्राट अकबर ने अधिकार कर लिया था। ईस्वी वर्ष 1605 के अक्तूबर मास में अकबर दिवंगत हुआ। अपनी मृत्यु निकट जानकर अकबर ने स्वयं हुमायूं का मुकुट और तलवार अपने शहजादे सलीम को देकर प्राण त्याग किया। इसी वर्ष नवम्बर में 32 वर्ष की अवस्था में सलीम का राज्याभिषेक जहांगीर नाम से आगरा में किया गया। जहांगीर ने आठ बार काश्मीर की यात्रा की थी। दो बार अपने पिता के साथ और छः बार अपने शासन काल में। ईस्वी वर्ष 1592 में जब जहांगीर अपने पिता के साथ काश्मीर आया था तो सम्राट अकबर ने काश्मीर के सरदार मुबारक खां तथा हुसेनचक्र की कन्याओं से उसका विवाह करवा दिया था। प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति अनुराग रखने वाले जहांगीर को काश्मीर इतना प्यारा लगा कि वह उसी का होकर रह गया। सम्राट बनने के उपरान्त उसने अपने जीवन का अधिकांश भाग काश्मीर में ही व्यतीत किया और अन्त में उसकी मृत्यु भी

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काश्मीर यात्रा से लौटते समय ही हुई।

जिस नूरजहां के लिए जहांगीर को शालीमार उद्यान का निर्माण करवाया था उसका पूर्ण नाम मेहरुन्निसा था। सम्राट अकबर के मनसबदार गयासबेग उसके पिता थे। शेरशाह सूरी से पराजित हुमायूं जब पारसदेश में भाग गया था तब गयासबेग के पिता मुहम्मद शरीफ ने उसकी बहुत सहायता की थी। इस उपकार के बदले अकबर ने गयासबेग को अनेक सरकारी उच्च पद प्रदान किये।

मेहरुन्निसा अत्यन्त रूपवती तथा नृत्य, गीत आदि में निपुण थी। एक बार गयासबेग ने संभ्रान्त लोगों को निमन्त्रण दिया। शहजादा सलीम भी आया। उत्सव के उपरान्त सब चले गए। उस काल में ऐसा नियम था कि सम्राट अथवा राजकुमारों के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए निमन्त्रण देने वाले के परिवार की रमणियों को उनके सामदे आना पड़ता था। मेहरुन्निसा और दूसरी रमणियों ने आकर शहजादा के प्रति सम्मान प्रकट किया तो सलीम मेहरुन्निसा के रूप-सौन्दर्य पर मोहित हो गया।

सलीम और मेहरुन्निसा एक दूसरे से प्यार करने लगे। जब सलीम ने अपने पिता से इस सम्बन्ध में बात की तो अकबर ने उसका तिरस्कार करके उसे खूब डांट-डपट की। अकबर के आदेश से गयासबेग ने मेहरुन्निसा का विवाह अलीकुलीबेग से कर दिया जो अपनी वीरता के कारण अकबर से (शेर अफगान) की उपाधि पा चुका था। अकबर ने शेर अफगान को पद देकर बंगाल भेज दिया।

ईस्वी वर्ष 1605 में शहजादा सलीम जहांगीर 'पृथ्वीजयी' की उपाधि धारण कर सिंहासन पर बैठा और षड्यन्त्र करके 'शेर अफगान' को मरवाकर मेहरुन्निसा को बन्दी बनाकर राज-महल में ले आया। शेर अफगान के मरने से पहले अपने हत्यारे जहांगीर के धातृपुत्र कुतुबुद्दीन को मार गिराया था, अतः जहांगीर इतना दुःखी हुआ कि उसने मेहरुन्निसा की घोर उपेक्षा

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की। जिसे पाने के लिए जहांगीर ने आजीवन यत्न, कौशल और खून-खराबी की, राजमहल में आने पर उसने उसकी कोई खोज-खबर न ली। इसके बाद जहांगीर ने उसकी और अवज्ञा की, उसे भोजन के खर्च के लिए केवल 4 आने प्रतिदिन के दिए जाने लगे।

मेहरुन्निसा ने हिम्मत नहीं हारी। सिलाई और कढ़ाई का काम करके बहुत नाम और धन कमाया। इस तरह चार वर्ष बीत गए। मेहरुन्निसा के शिल्प की प्रशंसा सम्राट के महल से लेकर दिल्ली और आगरा तक फैल गई। सम्राट जहांगीर को जब इसकी खबर लगी तो वह एक दिन अचानक मेहरुन्निसा के कक्ष में गया और वहां की शोभा देखकर विस्मित रह गया। मेहरुन्निसा के रूप और मधुर वाणी ने जहांगीर के मन में पूर्वानुराग जगा दिया। जहांगीर ने स्वयं लिखा है—

"अन्त में मैंने काजी को बुला मंगाया और उससे विवाह कर लिया, विवाह के समय मैंने उसे मेहर के रूप में 7 करोड़ 20 लाख रुपये नकद तथा 16 लाख रु० मूल्य का मोतियों का हार दिया।"

मेहरुन्निसा उस समय 32 वर्ष की थी और जहांगीर 42 वर्ष का। विवाह के बाद जहांगीर ने उसका नाम 'नूरमहल' रखा, फिर उसे बदलकर अपने नाम के अनुसार नूर जहान रखा।

नूरजहान ने इतनी क्षमता पाई थी पर भूलकर भी कभी इसका दुरुपयोग नहीं किया। वह परम दयावती थी। हजारों गरीब कन्याओं के पालन की व्यवस्था के साथ-साथ उसने लगभग पांच सौ गरीब कन्याओं का विवाह करवाया। जहांगीर की मृत्यु के बाद उसने राजनीति का परित्याग करके ईश्वर की अराधना में मन लगाया। 72 वर्ष की अवस्था में लाहौर में नूरजहां का देहावसान हुआ। अपने पति की बगल में निज निर्मित कब्र में उनकी देह समाहित हुई।

सम्राट जहांगीर को नूरजहां से अत्यन्त प्यार था। अपने इस प्यार की स्मृति में उसने एक उद्यान का निर्माण कराया, अपनी इस कामना की पूर्ति के लिए जहांगीर ने इस रमणीय

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उद्यान की रचना करवाई थी।

शालीमार शब्द का अर्थ प्रेम स्थान है अर्थात् जहांगीर और नूरजहां के पारस्परिक प्रेम के आदान-प्रदान का स्थान। इस उद्यान में बैठकर सम्राट और मलिका ने प्यार की कमी भी समाप्त न होने वाली भावना का प्रकाशन किया था। जहांगीर और नूर-जहां अपने काश्मीर प्रवास का अधिकतम समय इसी उद्यान में बिताते थे। अत: प्राचीनकाल में राजा प्रवरसेन ने जिस स्थान पर शालीमार बाग और नहर का निर्माण करवाया था, जहांगीर ने उसे नये सिरे से बनवाकर उसका नाम शालीमार ही रहने दिया। शालीमार उद्यान से श्रीपर्वत और डल झील दोनों ही कुछ दूर चले गए हैं। जब शालीमार उद्यान का निर्माण हुआ था, उस काल में डल झील उसी प्रकार शालीमार के प्रवेश द्वार तक विस्तृत थी, जिस प्रकार वह आज निशात के प्रवेश द्वार तक विद्यमान है। समय के साथ झील का क्षेत्र कम होता गया। पर्वत श्रृंखला से वर्षा ऋतु में बहकर आने वाला मलवा इसमें गिरता गया। इस तरफ से झील की सीमा दूर होती गई। झील की भूमि पर लोगों ने शालो लगाना शुरू किया। डल झील का उत्तरी क्षेत्र धीरे-धीरे इस प्रकार के शाली के खेतों से भरता गया।

पूर्वकाल में स्थानीय लोग और पर्यटक शिकारों से द्वारा ही इन बागों तक पहुंचते थे। उस काल में न कोई सड़क थी और न कोई वाहन। बड़े लोग घोड़ों, हाथियों और पालकियों का प्रयोग करते थे। शिकारे पूर्वकाल की तरह शालीमार के द्वार तक पहुंच सकें, इसके लिए डल झील के तट से लेकर बाग के द्वार तक एक नहर बनवाई गई जो आज भी विद्यमान है। पहले इस नहर के किनारों पर ही रविवार के दिन बाजार लगता था। इसमें सवारियां लाने वाले शिकारों की भीड़ लगी रहती थी। काश्मीर आने वाले अकसर सभी पर्यटक डल गेट से लेकर चार चिनारी, सोन लंका, निशात और शालीमार तक की यात्रा शिकारों पर ही किया करते थे।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजमार्गों का निर्माण, यातायात के साधनों में विकास और समय की कमी के कारण आज प्रत्येक पर्यटक बसों व टैक्सियों के द्वारा ही इन स्थानों पर पहुंचाता है। यद्यपि आजकल लगभग छह लाख पर्यटक प्रतिवर्ष काश्मीर में आने लगे हैं, पर शिकारों का इस्तेमाल करने वाले पर्यटकों की संख्या में कमी होती गई है। इसी कारणवश डल झील और शालीमार को जोड़ने के लिए जो सम्पर्क नहर बनाई गई थी उसको दिन-प्रतिदिन उपेक्षा होती गई और आज वह सूखी वीरान और टूटी-फूटी अवस्था में है।

पूर्वकाल में शालीमार उद्यान में निरन्तर जल की धारा प्रवाहित होती रहती थी। हारवन से जो नहर निशात बाग तक जाती थी, उसी से इन दोनों उद्यानों को लगातार जल आपूर्ति की जाती थी। पर बाद में जब श्रीनगर शहर की आबादी बढ़ती गई तो जनता को पीने का पानी सुलभ करवाने के लिए बड़े-बड़े रिजरवायर बनवाकर नहर का पानी उनमें डाल दिया गया और डल झील का पानी पम्पों के माध्यम से इन उद्यानों में पहुंचाया गया पर इससे इन उद्यानों के प्राकृतिक सौन्दर्य में कमी आ गई। कहां वह साफ-सुथरा और शीतल जल और कहां झील का गन्दा और गर्म जल। अगर इन उद्यानों में किसी को प्यास लगे तो उसे पानी का नल ढूंढ़ना पड़ता है। नहर का मलीन जल किसी पर्यटक की प्यास नहीं बुझा सकता।

श्रीपर्वत की ढलान पर निर्मित होने के कारण शालीमार उद्यान को पांच भागों में बनाया गया है। पर्वत की ओर से झील के तट तक विस्तृत उस उद्यान की शोभा को चिनार के वृक्षों, आकाश को छूने की चेष्टा करते फव्वारों, मैरीगोल्ड, जीनिया, आस्टल, सूरजमुखी और गलैडिया के बहुरंगी फूलों तथा मखमली घास ने चार चांद लगाए हैं। इस उद्यान के दाएं भाग में चिनार के अड़तीस एवं बाएं भाग में पचपन वृक्ष हैं जो गर्मी के मौसम में भी उद्यान के पर्यावरण को शीतल बनाए रखते हैं। उद्यान के आरम्भ से लगभग 20-25 फुट चौड़ी और एक फुट गहरी नहर

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उद्यान के मध्य भाग से प्रवाहित है। नहर के दोनों तट चिनार के विशाल वृक्षों और रंग-बिरंगे फलों की कतारों से शोभायमान हैं। उद्यान के मध्यवर्ती भू-भाग को सजाने और संवारने की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। इस भाग में नहर के ऊपर बनाई गई बारहदरी और उसके इर्द-गिर्द बने जलकुण्ड में स्थापित सैकड़ों फव्वारों को रंग-बिरंगी बिजली की रोशनियों से सजाया गया है। फूलों की घनी क्यारियों और लताकुंजों में भी बिजली के बहुरंगी बल्ब लगाए गए हैं। वातावरण को रोमांटिक रूप प्रदान करने के उद्देश्य से जहांगीर और नूरजहां के प्रणय-प्रसंग को लेकर 'Light and sownd' नामक एक वृत्तचित्र प्रति सायं-काल प्रदर्शित किया जाता है। चेतन आनन्द द्वारा निर्देशित इस लघु फिल्म में मीनाकुमारी, कबीरवेदी, प्रिया, राजमेहरा और अचीत ने अभिनय किया है। 'मुगल रोमांस' का चित्रण करने वाली इस फिल्म के संगीतकार जयदेव हैं।

उद्यान के पांच भाग हैं और इन पांचों में जल की धारा को दस-दस फुट के अन्तर से जलकुण्डों में गिराया गया है। जल-कुण्डों और नहर में सैकड़ों की संख्या में फव्वारे लगे हैं। मुगल काल में इस उद्यान में बहुरंगी गुलाब के फूल लगाने की विशेष परम्परा थी जो अब समाप्त प्राय है। अब गुलाब के फूल उद्यान के किसी-किसी भाग में ही दिखाई देते हैं।

शालीमार उद्यान के सड़क के साथ जुड़े दो प्रवेश द्वार हैं। प्रवेश द्वारों के साथ लगा उद्यान का यह भाग सबसे छोटा होने पर भी लाल रंग के फूलों की लम्बी-लम्बी क्यारियां और हरी मखमली घास से आपूर्ण विस्तृत भूमि के कारण पर्यटकों का ध्यान बरबस अपनी ओर खींच लेता है और इसके बाद पर्यटक ज्यूं-ज्यूं आगे बढ़ता जाता है उसे प्रकृति का वह अपूर्ण सौन्दर्य से आपूर्ण रूप दिखाई देता है। जिसे देख-देखकर उसकी आत्मा तृप्त नहीं होती।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जामामस्जिद और हजरतवल

काश्मीर प्रदेश को राजधानो श्रीनगर शहर की प्रसिद्ध जामामस्जिद का निर्माण सुलतान सिकन्दर ने करवाया था। सिकन्दर शाहमीर के वंश का छठा सुलतान था। शाहमीर विदेश से काश्मीर के राज-दरबार में एक सेवक के रूप में प्रविष्ट हुआ था, पर मौका पाकर वह काश्मीर का प्रथम मुस्लिम सुलतान बन गया। उसने ईस्वी वर्ष (1339-1342) तक शासन किया।

शाहमीर के उपरान्त उसकी वंश परम्परा में क्रम से जमशेद (1342-1344) अलाऊद्दीन (1344-1355,) शहाबुद्दीन (1355-1373) और कुतुबुद्दीन काश्मीर के सुलतान हुए। सुलतान कुतुबुद्दीन के कोई पुत्र नहीं था। वह इससे परेशान रहता था। उन्हीं दिनों काश्मीर में योगी ब्रह्मनाथ श्री अमरनाथ यात्रा पर आए। सुलतान ने उनका बड़ा आदर और मान किया। उनके आशीर्वाद से सुलतान के घर जो पुत्र उत्पन्न हुआ वही आगे चलकर सिकन्दर नाम से काश्मीर का छठा सुलतान बना। इसी के शासनकाल (1389-1413) में मीर सैयद मुहम्मद हमदानी ने काश्मीर में आकर मुस्लिम धर्म का प्रचार किया। सिकन्दर उनका शिष्य बन गया और इस्लाम के प्रचार में महत्त्व-पूर्ण भूमिका निभाई।

जुमा अर्थात् शुक्रवार के दिन की नमाज जामामस्जिद में पढ़ी जाती है। शुक्रवार का दिन मुस्लिम धर्म में शुभ माना

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाता है। आमतौर पर जो स्थानीय मुसलमान प्रति दिन अलग-अलग छोटी-छोटी मस्जिदों में नमाज अदा करते हैं, सप्ताह में एक दिन जामामस्जिद में सामूहिक नमाज पढ़ते हैं। मिलकर बैठते हैं। विचार विनिमय करते हैं। जो अनुशासन या आदेश वहां पर दिया जाता है, वह चुपचाप समस्त स्थानीय लोगों को मालूम हो जाता है।

सुलतान सिकन्दर ने हरीपर्वत के मूल में सिकन्दरपुरी नामक उपनगर बसाया था। उसने अपने इस नये नगर में निवास के लिए एक खूबसूरत महल तथा जामामस्जिद का निर्माण करवाया। श्रीनगर के इस स्थान को आजकल नौहट्टा कहा जाता है जो अब श्रीनगर शहर का एक भाग हो गया है।

इस मस्जिद का वास्तुकार ख्वाजा वदरुद्दीन खुरासानी था, जिसने अपने बहुत से सहायकों के साथ मस्जिद निर्माण का नेतृत्व किया था। इस मस्जिद के चारों तरफ दीवार है। दीवार के अन्दर लकड़ी के विशाल खम्भों पर मस्जिद को बनाया गया है। आरम्भ में इसमें तीन सौ बहत्तर लकड़ी के खम्भे लगाए गए थे। जिनमें प्रत्येक खम्भे की लम्बाई चालीस गज और चौड़ाई छः गज थी। इसके चार मिहराव थे। हर एक मिहराव में बत्तीस लकड़ी के खम्भे लगे थे[1]। दीवारों में झरोखे बनाए गए हैं। बड़े-बड़े शहतीर जैसे खम्भों पर छाजन टिकी है। प्राचीन काल से लेकर आज तक श्रीनगर शहर की मस्जिदों में यह सबसे अधिक सुन्दर और विशाल मस्जिद है।

इसी क्षेत्र में सुलतान सिकन्दर ने अपने मजहबी गुरु सैयद अली हमदानी के लिए एक खानकाह का भी निर्माण करवाया था। फारस में हमदान नाम का नगर है। यहां के निवासी सैयद

---

1. वहारिस्तान शाही : पाण्डुलिपि, 35-A

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

अली मुहम्मद हमदानी थे। उनके पिता सैयद शहाब्बुदीन हमदान के सूबेदार थे। अली हमदानी को बचपन से ही राजनीति और प्रशासन में रुचि न थी। उन्होंने अनेक विद्वानों से शिक्षा ग्रहण करने के उपरान्त मक्का मुअज्जमा की कई बार यात्रा की। कालान्तर में काश्मीर में आकर मुस्लिम धर्म का प्रचार और प्रसार किया।

काश्मीर का तत्कालीन सुलतान सिकन्दर उनका शिष्य था। उसने हमदानी के लिए ईस्वी वर्ष (1396-97) में खानकाह का निर्माण करवाया। अली हमदानी ने पूर्वकाल में इस खानकाह में नमाज पढ़ने के लिए एक ऊंचा चबूतरा बनवाया था। यह स्थान बाद के वर्षों में 'खानकाह मौला' के नाम से विश्रुत हुआ। सुलतान सिकन्दर ने इस खानकाह का खर्चा चलाने के लिए तीन गांव लाची, सौरा और ननावानी वक्फ़ किए थे।

कुछ वर्षों के बाद जब काश्मीर का सुलतान मुहम्मदशाह था, तो उसकी बालावस्था का लाभ उठाकर सैयद वंश के लोगों ने शासन पर पूर्ण अधिकार कर लिया और काश्मीरियों पर मनमाने अत्याचार करने लगे। स्थानीय काश्मीरी जनता विदेशी सैयदों के अन्याय और अत्याचार का विरोध करने पर उतारू हो गई। सामन्त और सैनिक एकत्रित हुए। कई दिन तक चले इस युद्ध में बहुत से लोग मारे गए। अन्त में सैयदों ने रुद्र विहार में आग लगाकर जब बहुत से काश्मीरियों की हत्या कर दी तो काश्मीर के सेनापति ने इसके बदले में अलाऊद्दीनपुर को आग लगवा दी[1] या इस आग ने अलाऊद्दीन नगर को जलाकर राख करने के साथ-साथ सैयद अली हमदानी की खानकाह तथा

1. श्रीवर जैन राजतरंगिणी : 4/316

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हजारों लोगों को नष्ट कर दिया[1]। इस विषय में एक इतिहासकार ने लिखा है—

"नगर में आग लगा दी गई। जिसमें मीर सैयद अली हमदानी की खानकाह जल गई। उस दिन मरे हुए लोगों की संख्या दस हजार थी[2]।"

ईस्वी वर्ष 1479 में हुए इस भयंकर अग्निदाह की चर्चा करते हुए पीरहसन लिखता है—

"हिजरी 885 में सिकन्दरपुर और अलाऊद्दीन पुर में कहर खुदा की आग लगकर इकतीस मुहल्ले और तखमीनन दस हजार घरजल गए। मस्जिद जामा और खानकाह मुअल्ला दोनों मशऊल नूर हो गए। सुलतान ने इन दोनों मुतबरक मुकामों की दोबारा तामीर पर हिम्मत का हाथ बढ़ाकर पहले से भी ज्यादा नकश व नगारी और दीवारों के खतूत और किताब के जरिए रौनक और जीनत बढ़ाई[3]।"

इसके बाद के समय में भी आवश्यकता पड़ने पर इन दोनों पवित्र स्थानों की मुरम्मत और पुनर्निर्माण किया जाता रहा। ईस्वी वर्ष 1616 में भी श्रीनगर में लगी आग के कारण तीन हजार से अधिक मकान तथा जामामस्जिद जलकर राख हो गए थे। इस सम्बन्ध में 'तारीखे काश्मीर' के लेखक तथा सम्राट जहांगीर की सेवा में रहने वाले हैदरमलिक चादुरा ने लिखा है कि सुन्नीमत के अनुयायी मुगलों को शक था कि उसने तथा उसके पिता ने जामामस्जिद को नष्ट करवाया था। इसका कारण यह था कि जिन दिनों काश्मीर में बाबर के मौसरे भाई मिर्जा हैदर दुघलात (1540-1551) का शासन था उस समय सुन्नी

1. वही : 4/318
2. तबकाते अकबरी : पृष्ठ 453
3. पीरहसन, तारीखे काश्मीर :

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लोगों ने ईस्वी वर्ष 1545 में खानकाह शम्सुद्दीन को नष्ट कर दिया था। सुन्नियों ने जब इस विषय में सम्राट जहांगीर से शिकायत की तो उसने आदेश दिया कि मलिक मुहम्मद हाजी तथा उसके पुत्र अपना पैसा खर्च करके जामामस्जिद को पहले की तरह बनवाकर दें[1]।''

मुगल सम्राट औरंगजेब के राजत्वकाल में ईस्वी वर्ष 1673 में श्रीनगर में एक भयानक अग्निकाण्ड हुआ था। उसमें जामा-मस्जिद समेत नगर के तेरह हजार मकान जल गए थे। सम्राट औरंगजेब के आदेश से जामामस्जिद का पुनः निर्माण किया गया। इस प्रकार पता चलता है कि जामामस्जिद का आरम्भ में जो रूप और आकार था, वह समय के साथ-साथ बदलता गया है। ईस्वी वर्ष 1753 में काश्मीर में पठान शासन का आरंभ हुआ जो ईस्वी वर्ष 1819 में समाप्त हुआ। पठान शासनकाल में राजा सुखजीवन के समय जामामस्जिद में विशेष रौनक हुआ करती थी। राजा सुखजीवन काश्मीर का स्वतन्त्र शासक बन गया और उसने लगभग दस वर्ष तक काश्मीर पर आदर्श शासन किया। वह प्रति शुक्रवार को मुस्लिम जनता के साथ जामा मस्जिद में नमाज पढ़ता था। वह मन्दिरों में भी जाता था और मस्जिदों में भी। उसके शासन और व्यवहार से प्रजा अत्यन्त सन्तुष्ट थी।

ईस्वी वर्ष 1819 में काश्मीर पर लाहौर दरबार का अधिकार हो गया और हरी पर्वत के किले पर पंजाब केसरी महाराजा रणजीतसिंह का ध्वज फहराने लगा। जब सिख शासन के विरोध में जामा मस्जिद में जलसे किए जाने लगे तो राज्यपाल ने इसे बन्द करवा दिया और इस मस्जिद में नमाज पढ़ने पर प्रतिबन्ध

---

1. शिलालेख : जामामस्जिद, श्रीनगर।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लगा दिया गया। ई० वर्ष 1841 में शेख गुलाम मुहीऊद्दीन सिख शासन का दसवां राज्यपाल नियुक्त हुआ। मुसलमान होने के कारण उसने जामामस्जिद को खुलवाकर उसमें सफाई करवाई और जलधारा का प्रबन्ध किया। इस घटना के लगभग तीस वर्ष पश्चात् जब जामामस्जिद को मुरम्मत दरकार थी तो जम्मू-काश्मीर के तत्कालीन महाराजा रणवीरसिंह ने इस काम के लिए बाईस सौ रुपये प्रदान किए थे।

हर शुक्रवार के दिन जामामस्जिद में नमाज पढ़ने की परंपरा है। नमाज के पहले अजां दी जाती है। दोनों कानों में उंगली डालकर मस्जिद का मुअज्जिन अजां देता है। अजां नमाज पढ़ने के लिए लोगों को बुलावा या आह्वान होता है। वह नमाज के समय की सूचना है। अजां के लगभग पन्द्रह मिनट बाद लोग मस्जिद में इकट्ठे होकर नीयत बांधते हैं। नीयत बांधने से मतलब है कि वे जमात में खड़े हो जाते हैं। इमाम सबके आगे खड़ा होता है। सबका मुख पश्चिम दिशा की ओर रहता है। 'अल्ला हो अकबर' कहकर दोनों हाथों को कानों तक उठाकर, छाती पर नाभि के पास हाथ बांध लेते हैं (शिया मुसलमान खुले हाथ नमाज पढ़ते हैं)।

नमाज में एक कयाम (खड़े होकर पढ़ना) एक रुकअ (झुक कर पढ़ना) तथा दो सिजदा किया जाता है। सिजदा में माथा जमीन पर टेक दिया जाता है। कुछ देर के बाद घुटनों के बल बैठा जाता है। फिर सिजदा में माथा टेकते हैं। खड़े होते हैं। एक रुकअस नमाज एक बार खड़े होकर बैठने तक होती है।

एक रकअत में दो सिजदे और एक रुकअ, एक रकअत में एक कयाम एक रुकअ और दो सिजदा होते हैं। सिजदों के बाद घुटनों के बल बैठ जाते हैं। पहले दाईं ओर, और फिर बाईं ओर मुख फेरते हैं। इसके बाद दोनों हाथ उठाकर अल्ला से दुआ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मांगते हैं। इस प्रकार नमाज की दो रकअत पूरी होती है।

जुमा की नमाज के पहले इमाम जो भाषण देता है, उसे खुतवा कहते हैं। शिया मुसलमानों के यहां उपदेश या खुतवा नमाज के बाद होता है। जुमा की नमाज सूरज ढलने के बाद पढ़ी जाती है। यह दोपहर बारह बजे, तथा एक बजे के बीच होती है। जुमा के दिन कारोबार आधा दिन बन्द रखा जाता है। पैगम्बर साहब का उपदेश है कि जुमा की नमाज के बाद रोजी के लिए निकले।

ईद के पर्व पर अदा की जाने वाली नमाज में कुछ अन्तर होता है। 'ईद' शब्द का अर्थ है—हर्ष, आनन्द अथवा खुशी। यह अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ हर साल आने वाला होता है। ईद दो पर्वों का नाम है। एक 'ईदुल फित्र' अर्थात् बकरा ईद है। यह जो हिज्जा की दसवीं तारीख को पड़ती है। दूसरी ईद का नाम 'ईदुल अज्हा' है। यह रमजान के रोजा रखने के बाद प्रथम शब्वाल को मनाई जाती है। इसमें सेवियां पकाने और खिलाने की प्रथा है।

दोनों ईदों के पर्वों पर की जाने वाले प्रार्थनाओं में दो रुकअत नमाज तथा वाज अर्थात् धर्मोपदेश होता है। यह नमाज आमतौर पर शहर के बाहर खुले मैदान में बनी मस्जिद ईदगाह में पढ़ी जाती है।

शिया मुसलमान एक तीसरी ईद भी मनाते हैं। इसे 'ईद-गदीर' कहते हैं। यह नाम मक्का मुअज्जमा तथा मदीना मुनवरा के मध्य एक तालाब के नाम पर आधारित है।

ईद की नमाज सूरज ढलने के पहले अर्थात् दिन के बारह बजे से पहले पढ़ी जाती है। इस नमाज में केवल दो रुकअ और चार सिजदा होता है। प्रत्येक सिजदे के पहले घुटने के बल बैठकर भूमि पर माथा टेकते हैं। दोनों हाथों की हथेली जमीन पर लगी रहती

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है। प्रतिदिन पांच बार नमाज पढ़ने की हिदायत है। फजर, सुबह की नमाज में दो रुकअत, जहर में चार रुकअत, असर में चार रुकअत, मगरिब में तीन रुकअत और ईशा में चार रुकअत नमाज फर्ज पढ़ी जाती है।

जुमा की नमाज के पढ़ने के लिए मुगल बादशाहों ने काश्मीर में कई और आलीशान मस्जिदों का निर्माण करवाया था। इनमें सम्राट जहांगीर की प्रिय मलिका नूरजहां द्वारा ईस्वी वर्ष 1622 में बनवाई गई पत्थर मस्जिद तथा सम्राट शाहजहां के आदेश से निर्मित हजरतवल मस्जिद विशेष प्रसिद्ध हैं। नूरजहां ने पत्थर मस्जिद के निर्माण कार्य का निरीक्षण करने के लिए प्रसिद्ध इतिहासकार मलिकमुहम्मद चादुरा को नियुक्त किया था। इस मस्जिद में सम्पूर्ण निर्माण पत्थरों से किया गया था, अत: इसका नाम पत्थर-मस्जिद पड़ गया। सब प्रकार से सुन्दर होने पर भी यह मस्जिद श्रीनगर की जनता में लोकप्रिय नहीं हुई और इसे नमाज पढ़ने के काबिल नहीं समझा गया। इसका कारण यह बताया जाता है कि इस मस्जिद के निर्माण में खर्च किए गए धन के विषय में पूछे जाने पर मलिका नूरजहां ने अत्यन्त गर्व से अपनी रत्नों से जड़ी हुई जूती दिखाकर कहा था कि—"मेरी इस जूती का जितना मूल्य है, उतना ही धन, पत्थर मस्जिद के निर्माण में खर्च हुआ है।"

मलिका नूरजहां सम्राट जहांगीर की सबसे प्यारी साम्राज्ञी थी। कोई भी उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता था, परन्तु काश्मीर में धार्मिक दृष्टि से इस बात को बहुत बुरा समझा गया और इस मस्जिद में नमाज अदा करने की मनाही कर दी गई। आज भी इस मस्जिद में नमाज नहीं पढ़ी जाती।

इसके विपरीत हजरतवल मस्जिद का बहुत बड़ा महत्त्व है। मूयेमुबारक के कारण सारी काश्मीर घाटी में यह मस्जिद बहुत

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ही लोकप्रिय है। इतिहास-ग्रन्थों से पता चलता है कि ईस्वी वर्ष 1634 में सैयद अब्दुल्ला मदीना में पैगम्बर मु० साहब की समाधि का संरक्षक था। अपने परिवार के साथ ईस्वी वर्ष 1636 में वर्तमान महाराष्ट्र प्रदेश की बीजापुर नामक रियासत में आया और एक छोटी-सी जागीर प्राप्त करके जहानाबाद में रहने लगा। वह अपने साथ पैगम्बर साहब का बाल लाया था, जिसे मूये मुबारक कहते हैं। जब सैयद अब्दुल्ला अपनी मृत्यु के निकट था तो उसने मरने से पहले वह पवित्र बाल अपने पुत्र हामिद को गुप्त रूप से प्रदान किया और साथ ही ताकीद कर दी कि वह उस बाल की अपनी जान से भी बढ़कर हिफायत करे।

हामिद ईस्वी वर्ष 1692 तक बीजापुर में ही रहा। उस काल में काश्मीर का एक प्रसिद्ध व्यापारी ख्वाजा नूरूद्दीन ईशावरी अपने व्यापार के सिलसिले में जहानाबाद गया हुआ था। वहां पर हामिद के साथ उसकी भेंट हुई। जब हामिद ने उसे बताया कि उसके पास पैगम्बर साहब का पवित्र बाल रखा हुआ है तो नूरूद्दीन ने उससे वह पवित्र बाल खरीद लिया।

जब ख्वाजा नूरूद्दीन बाल लेकर काश्मीर लौट रहा था तो सम्राट औरंगजेब ने उसे रोककर आदेश दिया कि वह पवित्र बाल को अजमेर की मस्जिद में रखे। सम्राट के आदेश को सुनकर ख्वाजा नूरूद्दीन की सारी खुशी खत्म हो गई। वह बहुत दुःखी हो गया। उसकी हालत खराब होने लगी। जब औरंगजेब को उसकी हालत के बारे में बताया गया तो सम्राट ने वह पवित्र बाल काश्मीर में ले जाकर रखने की आज्ञा दे दी।

मूये मुबारक को काश्मीर में लाकर सबसे पहले खानकाह नक्शबन्द में रखा गया। जनता की भीड़ कई दिनों तक इसके दर्शन के लिए आती रही। बहुत खुशियां मनाई गईं। पर्व के मौके पर मूये मुबारिक के दर्शन के लिए आने वाले लोगों की बहुत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भीड़ होती थी। खानकाह् का स्थान छोटा पड़ता था। इसलिए कुछ समय के बाद ही मूये मुबारक को सम्राट शाहजहां द्वारा बनवाई गई हजरतबल मस्जिद में रख दिया गया। तब से लेकर मूये मुबारक उसी स्थान पर शोभायमान है।

ईस्वी वर्ष 1963 की शीतऋतु में जब प्रदेश में अनन्तनाग के ख्वाजा शमसुद्दीन प्रधानमन्त्री थे, तो किसी शरारती आदमी ने काश्मीर भूमि में गड़बड़ फैलाने की नीयत से मूये मुबारिक को मस्जिद से उठा लिया। वह उस बोतल को उठा ले गया जिसमें मूये मुबारक को रखा हुआ था। इस घटना का पता चलते ही लाखों काश्मीरी शोक के समुद्र में डूब गए। पूरी काश्मीर घाटी से लोगों के झुंड के झुंड रोते हुए हजरतबल पहुंचने लगे।

इस असाधारण स्थिति को देखकर भारत के तत्कालीन प्रधानमन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने श्री लालबहादुर शास्त्री को इस समस्या के समाधान के लिए काश्मीर में भेजा। श्री शास्त्री ने काश्मीर में रहकर अपने निरीक्षण में इस घटना की जांच करवाई और खोजबीन करके मूये मुबारक को हासिल किया और उसे फिर हजरतबल मस्जिद में स्थापित कर दिया।

यद्यपि मूये मुबारक मिल गया और उसे अपने पूर्व स्थान पर शोभित कर दिया गया, पर इस घटना के दो महत्त्वपूर्ण और ऐतिहासिक परिणाम निकले। ख्वाजा शमसुद्दीन को जम्मू-काश्मीर राज्य के प्रधानमन्त्री पद से हटाकर उनके स्थान पर श्री गुलाम मुहम्मद सादिक को प्रदेश का प्रधानमन्त्री बना दिया दिया गया। श्री लालबहादुर शास्त्री जिन्होंने मूये मुबारक की खोज में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, भारत के प्रधानमन्त्री बने।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वूलर झील

वूलर झील भारतवर्ष ही नहीं सम्पूर्ण एशिया में मीठे जल की सबसे बड़ी झील है। काश्मीर में इसे झीलों की रानी कहा जाता है। पूर्वकाल में इसे पद्मसर की संज्ञा दी गई थी[1]। श्रीवर इस झील का वर्णन पद्मनागसर के नाम से करता है[2]। जोनराज ने अपनी राजतरंगिणी में सबसे पहले इसे उल्लोलसर के नाम से अभिहित किया है[3]। एक धार्मिक पुस्तक में इसे उल्लोलसर नाम दिया गया है[4]। नीलमत पुराण और योगवासिष्ठ रामायण में यह झील महापद्मसर व पद्मसर के नाम से वर्णित है[5]।

श्रीनगर शहर से दक्षिण में तीस मील की दूरी पर वाण्डीपुर, और सोपुर के समीप स्थित इस झील के सम्बन्ध में काश्मीर में रचित नीलमत पुराण में कहा गया है कि महापद्मसर का देवता महापद्मनाग है। ऋषि कश्यप ने सतीसर नाम से विख्यात् घाटी को निवास-योग्य बनाकर इसका नाम काश्मीर रखा और अपने पुत्र नीलनाग को इसका राजा बना दिया।

---

1. श्रीकण्ठ चरित : 3/97
2. श्रीवर, राजतरंगिणी : 1/3/31
3. जोनराज, राजतरंगिणी : श्लोक, 939
4. ध्यानेश्वर माहात्म्य : 3/33
5. योगवासिष्ठ रामायण : स्थिति प्रकरण, 32/510

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुराण साहित्य में इस प्रकार की अनेक कथाओं का वर्णन हुआ है जिनमें नागों द्वारा मानव रूप धारण करने की चर्चा हुई है। कई प्राचीन ग्रन्थों में नागों को अमर माना गया है। इनके शरीर से बार-बार जो कैंचुली छूटती है और नया विष उत्पन्न होता है,उससे यह अनुमान लगाया जाता है कि सर्प चिरयुवा और चिरजीवी होता है। एक निश्चित आयु सीमा के उपरान्त वह इच्छाधारी होकर अपनी इच्छा के अनुकूल रूप धारण करने में समर्थ हो जाता है। नागपंचमी के व्रत के अवसर पर जो कथा सुनाई जाती है, वह इसी तथ्य को प्रमाणित करती है कि नाग शाप और वरदान देने में समर्थ होते हैं[1]।

सबसे पहले उल्लोलसर में षड्गुंल नामक नाग को रहने की आज्ञा दी गई थी। कुछ काल के उपरान्त वह आचार-विचार से हीन हो गया और मानव रूप धारण कर लोगों की युवा और सुन्दर स्त्रियों को जबर्दस्ती उठा-उठाकर ले जाने लगा। जब राजा नीलनाग को इसके अत्याचार की सूचना मिली तो उसने उसे काश्मीर देश से निकल जाने की आज्ञा दी। उसे जम्मू प्रदेश के उशीरक नामक पर्वत पर निवास का आदेश दिया गया[2]।

सर का देवता जब वहां से चला गया तो सर सूख गया। कुछ काल के उपरान्त विश्वगाश्व नामक राजा ने उस भूमि पर चन्द्र-नामक नगर बसाया। एक बार दुर्वासा नामक ऋषि यात्रा-प्रसंग में उस नगर में आए। उनका उचित स्वागत और आदर-मान न हुआ तो उन्होंने शाप दिया जिससे वह नगर जल के आविर्भाव से नष्ट हो गया।

---

1. डा० बी० के० शास्त्री, माता महाकाली, किलाबाहु : पृष्ठ 143

2. मया निर्वासितो नागः तस्माद् देशात् षड्गुंलः।
मानुषाणां स दाराणि हरत्यत्र रहः पुरा ।। नीलमत: VV 965

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कुछ काल के उपरान्त महापद्म नामक नाग राजा नीलनाग के पास गया और काश्मीर भूमि में निवास की आज्ञा मांगी। नीलनाग ने उसकी प्रार्थना स्वीकार करते हुए उसे चन्द्रपुर नामक स्थान बता दिया। महापद्म नाग एक ब्राह्मण के वेश में चन्द्रपुर के राजा विश्वगाश्व के पास पहुंचा। राजा से प्रार्थना की कि उसे चन्द्रपुर में रहने दिया जाए। आज्ञा पाते ही महापद्म नाग ने ब्राह्मण रूप त्याग कर अपना वास्तविक रूप धारण कर लिया। फिर राजा से कहा कि कुछ ही काल में चन्द्रपुर जल में डूब जाएगा। इस प्रकार नाग द्वारा सावधान करने पर राजा विश्व-काश्व ने चन्द्रपुर त्याग कर, इस नगर से दो योजन पश्चिम में अपने नाम पर विश्वगाश्वपुर नामक नगर की स्थापना की।

नगर के खाली हो जाने पर नाग ने उसे एक विशाल सरोवर में परिणत कर दिया और फिर अपने परिवार के साथ वहां निवास करने लगा। उसे इस सरोवर का देवता माना गया और कालक्रम से जनता द्वारा उसकी पूजा होने लगी।

कुछ इतिहासकारों ने भी इसी घटना का उल्लेख किया है। पर राजा और नगर का नाम दूसरा दिया है। "सुन्दर सेन दुरा-चारी और अन्यायी राजा था। उसकी प्रजा भी आचारहीन थी। कवाल एक सन्त था। उसने राजा और प्रजा दोनों से दुराचार समाप्त करने के लिए कहा। उसकी बात पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। उसने सबको सावधान करते हुए कहा कि यदि दुराचार का अन्त नहीं होगा तो नगर जल में डूबकर एक सरोवर बन जाएगा। जब उसकी बात की उपेक्षा कर दी गई तो वह परेशान होकर नगर से चला गया। कुछ ही समय के बाद नगर जल में डूबकर उल्लोलसर बन गया[1]।

1. मुहम्मदद्दीन फाक़—मुकम्मल तवारीख काश्मीर : 2 : 41

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक अन्य इतिहासकार के अनुसार—"यह सरोवर पुराने समय में सुन्दर नगर था। इसके राजा का नाम सुन्दरसेन था। वह जनता पर अत्याचार करता था। उसके अन्याय से डरकर जनता नगर त्याग कर भागने लगी। नगर में एक कुम्हार को स्वप्न आया कि—"अहले मुल्क के जो लोग खराब हैं, तौबा नहीं करते हैं। उससे कहर इलाही आएगा' उसने हरचन्द नसीहत की, पर फल कुछ न हुआ। एक रोज इलहाम हुआ। इन लोगों ने तुम्हारी शर्ते नहीं मानी। इसलिए भूमि डूब जाएगी। तुम इस शहर से बाहर चले जाओ। वह खुद भागकर करालाशकर (कराल शिखर) नामक पहाड़ पर चला गया। सुबह देखा कि शहर दरया हो गया है[1]।"

काश्मीर में सरोवरों, झरनों आदि के देवता नाग माने जाते हैं। वे इनमें निवास करते हैं। ये नाग मानव रूप धारण कर बाहर भी निकलते हैं। वे हिमपात, तुषारपात, अतिवर्षा और शिलापात से जनता को भयभीत भी करते हैं। पूजित होने पर वरदान, सुख सौभाग्य, आरोग्य और ऐश्वर्य प्रदान करते हैं। नीलमत पुराण में नागपूजा का वर्णन मिलता है[2]। नागों के सम्बन्ध में काश्मीर की ग्रामीण जनता में पूर्वकाल की भांति आज भी यह धारणा पाई जाती है कि नाग मानवों, सुरों और असुरों की तरह आचरण करने वाले होते हैं। ऊलर झील के नाग देवता के सम्बन्ध में जो संस्कार हजारों वर्ष पूर्व थे उनका वर्णन काश्मीर के प्राचीन इतिहास में सत्य की तरह हुआ है[3]।

काश्मीर के महान् प्रतिभाशाली, पराक्रमी, दिग्विजयी राजा

---

1. हैदर मल्लिक, तारीखे काश्मीर : पाण्डु : 46
2. नीलमत पुराण : श्लोक, 226-227
3. शुक, राजतरंगिणी : 1 : 88

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ललितादित्य के पौत्र राजा जयापीड़ और महापद्मसर के महापद्मनाग से सम्बन्धित एक कथा का वर्णन हुआ है।

जयापीड़ ललिता दित्य के पुत्र राजा वज्रादित्य का चतुर्थ पुत्र था। अपने भाई संग्रामापोड़ के उपरान्त वह काश्मीर का राजा हुआ था। उसका राज्यकाल सन् 751 ईस्वी से 782 ईस्वी तक था। इस प्रकार उसने 31 वर्ष तक काश्मीर पर राज्य किया था। कल्हण ने जयापीड़ को महान् वीर, पराक्रमी योद्धा, उदार एवं चरित्रवान् शासक के रूप में वर्णित किया है। अपनी दिग्विजय यात्रा में इस राजा ने अनेक अन्य राज्यों के अतिरिक्त कन्नौज और नेपाल को भी विजित किया था। वूल्लर झील के देवता महापद्म नाग की सहायता से राजा को ताम्बे के पर्वत का पता चला था जिससे राज्य की आर्थिक दशा में बहुत प्रगति हुई थी।

एक बार दक्षिण देश का कोई तन्त्र-मन्त्र और यन्त्र विद्या का बहुत अच्छा जानकार काश्मीर भूमि में आया। उसे इस बात का ज्ञान था कि काश्मीर के सरोवरों में ऐसे-ऐसे नाग निवास करते हैं जिनकी उपस्थिति से सूखी धरती भी सरोवरमय हो जाती है। है। वह तान्त्रिक महापद्म नाग को पकड़ना चाहता था। जिसके कारण कभी चन्द्रपुर वूलर झील में परिणत हो गया था। किसी सूखे प्रदेश में जहां पानी की बड़ी तंगी हो, उस नाग को बेचकर धन प्राप्त करने की योजना उसने बनाई थी। वह वूलर झील के किनारे पर आ पहुंचा और अपने शिकार को पकड़ने की कोशिश करने लगा।

तान्त्रिक की शक्ति को जानकर महापद्मनाग ने राजा जयापीड़ कोस्वप्न में दर्शन दिए और उससे निवेदन किया—"महाराज! मैं महापद्मनाग हूं। आपके राज्य में परिवार और बान्धवों के साथ निवास करता हूं, उल्लोलसर को मैंने ही बनाया

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था और मैं उसी में रहता हूं। एक तंत्र विद्या का जानकार अपने स्वार्थ के लिए मुझे पकड़कर ले जाने के लिए झील परडेरा लगाए बैठा है। यदि आप उससे मेरी रक्षा करेंगे तो मैं आपको आपके ही राज्य में वर्तमान सोने का पर्वत बता दूंगा।

स्वप्न से प्रभावित और प्रेरित राजा जयापीड़ ने दूसरे दिन ही तान्त्रिक को बुला भेजा और उससे जानना चाहा कि वह अत्यन्त शक्तिशाली नाग को, जो इतने गंभीर जल में रहता है, किस प्रकार काबू कर सकता है। इस पर तान्त्रिक राजा को अपने साथ झील पर ले गया। उसने एक बाण को धनुष पर चढ़ाया, उसे मन्त्रों से अभिषिक्त किया और उसे झील के जल में छोड़ दिया। देखते ही देखते झील का अथाह जल सूख गया। राजा ने देखा कि मानव के मस्तक से युक्त एक नाग कीचड़ में उछल रहा था। उसके साथ अनेक छोटे-बड़े नाग भी थे। ज्योंही तान्त्रिक नाग को पकड़ने के लिए तत्पर होने लगा राजा ने उसे रोक दिया और पुन: झील को जल से पूर्ण करने का आदेश दिया।

तान्त्रिक ने पुन: मन्त्रशक्ति से झील को जल पूरित कर दिया। राजा उसकी साधना शक्ति से बहुत प्रसन्न और प्रभावित हुआ। उसे इच्छित धन देकर तथा साथ ही काश्मीर भूमि में किसी भी नाग को वश में न करने की आज्ञा देकर विदा कर दिया।

राजा कई दिन तक इन्तजार करता रहा पर नाग ने अपने वचन के अनुसार उसे सोने का पर्वत नहीं दिखाया। जब राजा इस सम्बन्ध में कुछ चिन्तित रहने लगा तो महापद्मनाग गे राजा को स्वप्न में आकर पूछा—"आपकी कौन-सी कृपा के लिए मैं आपको सोने के पर्वत का पता दूं। मैं उस तान्त्रिक की मन्त्र शक्ति से घबराकर आपकी शरण में आया था। पर आपने मेरी

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रक्षा नहीं की। मेरी निर्बलता अब प्रमाणित हो चुकी है। मैं अपनी स्त्रियों को अब मुख दिखाने योग्य नहीं रह गया हूं। मेरा स्वाभिमान भी अब समाप्त हो गया है। फिर भी आपने जो कुछ मेरे लिए किया है उसके प्रत्युपकार के रूप में सोने के पर्वत के स्थान पर तांबे के पर्वत का पता बता देता हूं[1]।" यह कहकर नाग ने राजा को क्रमराज्य (बारह मूला क्षेत्र) में विद्यमान तांबे के पर्वत का पता बता दिया। राजा ने वहां से तांबे के भण्डार प्राप्त कर उससे सौ करोड़ दीनार बनवाए और बहुत से दूसरी वस्तुएं बनाने में भी उसका उपयोग किया।

सबसे पहले श्री जोनराज ने अपनी राजतरंगिणी (1149-1459ई०) में महापद्मसर को उल्लोलसर के नाम से अभिहित किया है[2]। उल्लोल का अर्थ है—बड़ी लहर। वही शब्द अपभ्रंश होकर ऊलर हो गया और फिर उच्चारण की सुविधा मी वूलर के रूप में बोला जाने लगा।

वूलर झील समुद्र की तरह विशाल है और हवा चलने पर इसमें बड़ी-बड़ी ऊंची-ऊंची लहरें उठती हैं। इस कारण से इसमें अनेक छोटी-बड़ी नौकाएं डूबती देखी गई हैं। एक बार पंजाब केसरी महाराजा रणजीत सिंह की सामान से लदी तीन सौ नौकाएं डूब गई थी। आजकल काश्मीर के लोग इसमें नाव चलाना खतरे से खाली नहीं मानते। खासकर उस समय जब हवा वाण्डीपुर की ओर से चलती है। उस काल में झील का शान्त जल समुद्री लहरों का रूप धारण कर लेता है।

समुद्र की सतह से 5180 फुट की ऊंचाई पर स्थित इस झील की लम्बाई तेरह मील और चौड़ाई छह से आठ मील है। सामान्य रूप में इसकी गहराई 14 फुट है। उसकी पूरी सीमा परिधि

---

1. कल्हण, राजतरंगिणी : तरंग 4 : 592-616
2. जोनराज, राजतरंगिणी : श्लोक 939

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अथवा घेरा लगभग बीस मील है। गर्मी के मौसम में इसकी सीमा परिधि में वृद्धि हो जाती है। सूर्य के ताप से गिरि शिखरों पर पड़ी बर्फ, जब पिघलने लगती है तो इसमें भी जल की अधिकता हो जाती है। सर्दी के मौसम में पानी कम हो जाने से तट की भूमि निकल आती है। इस भूमि पर खेती-बाड़ी होती है। काश्मीर की दूसरी झीलों की अपेक्षा इसकी गहराई कम है। डलझील, कौंसरनागझील व मानसवल आदि झीलें आकार में इससे छोटी होने पर भी अधिक गहरी हैं। इस झील का काश्मीर घाटी में विशेष महत्त्व है। बाढ़ के समय विस्तता नदी के जल को ग्रहण करके यह घाटी को बाढ़ से बचाने में सहायक होती है। बाढ़ के समय इसकी लम्बाई एक मील और चौड़ाई दो मील बढ़ जाती है।

इसका तल नरम कीचड़ वाला है। जहां पर जल की मात्रा उथली है, वह स्थान जल में उत्पन्न होने वाले पौधों से भरा है। आमतौर पर झील के किनारे हरियाली से आपूर्ण है। कहीं-कहीं वृक्षों की पंक्तियां हैं और कहीं-कहीं नहीं। झील के आस-पास की पहाड़ियों की उपत्यका से झील का जल, कहीं-कहीं सौ गज की दूरी पर है तो अन्यत्र यह दूरी मील भर की भी है।

झील के उत्तरी भाग में पूर्वी भाग की अपेक्षा जलस्तर हमेशा अधिक रहता है। जेहलम नदी, जो वेरीनाग से निकलती है, अनंतनाग, बीज बिहाड़ा, अवन्तीपुर, पामपुर और श्रीनगर आदि शहरों से होती हुई इस झील में आकर गिरती है। वूलर का तल जेहलम नदी के तल से नीचा है। मगर जेहलम नदी लगातार इसमें रेत और मिट्टी बहाकर लाती रहती है। इस कारण से पूर्वकाल की अपेक्षा यह कम गहरी होती जा रही है। नितस्ता नदी एक तरफ से इसमें गिरकर दूसरी तरफ से निकल जाती है।

झील में वितस्ता और झील का जल साफ तौर पर भिन्न-

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भिन्न दिखाई देता है। झील के अन्दर भी बहुत से झरने हैं। जब भी जल का स्तर कम होता है, तो इसके तल में फूटने वाले झरने साफ दिखाई देते हैं। झील का जल साफ है तथा झील के मध्य भाग में यह हरे रंग का दिखाई देता है। प्रदेश की दूसरी झीलों की तरह यह झील भी पहाड़ियों से घिरी हुई है। चारों ओर छोटी-बडी पहाड़ियां और बीच में दूर-दूर तक विस्तृत जल की चादर और उसमें आवागमन करती छोटी-बड़ी नौकाएं एक अद्‌भुत दृश्य उपस्थित करती हैं। दोपहर बाद से सायंकाल तक वूलर लेक में तेज हवा चलती है। उसे काश्मीरी भाषा में नागकूं कहते हैं। उस समय कोई भी नाविक या शिकारे वाला झील में नौकाचालन की हिम्मत नहीं करता।

झील के इर्द-गिर्द पक्की सडक है। भारत और विदेशों से आने वाले पर्यटक इस झील को देखने के लिए आते रहते हैं। सड़क के आस-पास झील के साथ-साथ बहुत से गांव बसे हैं जिनमें वाण्डीपुर सबसे प्रमुख है। इन गांवों के लोग झील से सिंघाड़ा, नदरू, मछली, जल में रहने बाले मुर्गे आदि प्राप्त कर उसका व्यापार करते हैं। श्रीनगर के बाजारों में बिकने बाली अधिकांश मछली इसी झील की होती है। प्रतिदिन सैकड़ों मछुआरे छोटी-छोटी नौकाओं पर प्रातःकाल और रात में मछलियां पकड़ते हैं। वूलर झील के कारण यह इलाका मछलियों के व्यापार के लिए विख्यात् है।

झील में नीले व सफेद रंग के कमल के फूल और जल में उत्पन्न होने वाले पौधे अधिक संख्या में दिखाई देते हैं। इस सम्बन्ध में योगवसिष्ठ रामायण में लिखा है कि पद्‌मसर सफेद कमलों की पंक्तियों से सुशोभित है। उसमें नीले कमलों की लताएं छायी रहती है[1]। वितस्ता के अतिरिक्त मधुमती (वाण्डी-

1. योगवासिष्ठ : स्थिति प्रकरण : 32/510

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुरनाला) भी वूलर में गिरती हैं। यह नदी हरमुख पर्वत तथा त्रागवल के स्थानों से जल ग्रहण कर उसे झील में पहुंचा देती है। उसके साथ ही झील में कंकर और पत्थर जमा करने में भी यह नदी अग्रणी है। सोपुर से दो मील ऊपर दक्षिण-पश्चिम कोने से वितस्ता इस झील से निकलकर बारहमूला की ओर अग्रसर हो जाती है।

झील पर प्राचीनकाल में दो निर्माण हुए थे। एक ऊंचे थड़े पर निर्मित बाबा शुकरुद्दीन की जियारत है जिसका प्रतिबिम्ब झील के जल में झिलमिलाता रहता है तथा दूसरा झील के पूर्वी दिशा में जल के अन्दर 'जैनलंका' नामक द्वीप है, जिसे काश्मीर के बादशाह जैनुल आबदीन ने सन् 1443-44 में बनवाया था।कहते हैं कि वूलर झील में अकस्मात् तूफान आदि आ जाने से अनेक नौकाएं डूब जाती थीं। अनेक लोग अकाल मृत्यु का शिकार होते रहते थे। अनेक बारातें इस झील में डूब चुकी थीं। जनता को इस मुसीबत से छुटकारा दिलाने के लिए बादशाह ने झील के दक्षिण-पश्चिम कोने में जैनलंका का निर्माण करवाया, ताकि तूफान में नाविक यहां शरण ले सकें। कहा जाता है कि उस स्थान पर एक बड़ा मन्दिर था। उसी मन्दिर पर बड़शाह ने जैनलंका का निर्माण करवाया था। आजकल जैनलंका वूलर झील के मध्य नहीं है। कछार में है। बाढ़ आने पर जजीरे का रूप ले लेती है।

जेहलम नदी जिस स्थान पर वूलर झील में गिरती है, इसके ठीक दूसरी दिशा में यह लंका है। जिस समय इसका निर्माण हुआ था,जल गहरा था। जेहलम द्वारा मिट्टी, रेत लाने के कारण, उनके जम जाने पर भूमि निकल आई है। जैन लंका के खण्डरात देखकर पता चलता है कि अपने निर्माण काल में यह एक अत्यन्त रमणीक स्थान था। जैनुल आबदीन वलर झील में सैर करने

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

का शौकीन था। उसके समय अशाम तथा सम्बल क्षेत्र के दक्षिण तक जल पहुंच जाया करता था। वूलर झील से सोने को दो मूर्तियां मिली थीं। उनसे सोना बनाया गया। उस सोने को बेचकर जो धन मिला उससे जैनलंका का निर्माण हुआ था। शायद ये दोनों मूर्तियां उन मन्दिरों की थीं, जो प्राचीनकाल में इस झील में बनाए गए थे।

जैनलंका पर बड़शाह ने एक मस्जिद और एक महल भी बनवाया था[1]। जैन लंका पर बना महल चार मंजिला था। पहली मंजिल पत्थर की, दूसरी ईंटों की, तीसरी व चौथी मंजिल लकड़ी की थी[2]। जिन हाजियों, नाविकों और दूसरे कामगरों व मजदूरों ने इसके निर्माण में सहायता की थी उन्हें परगना खुय्य होम की आमदन हमेशा के लिए दे दी गई[3]। सन् 1533 ई० में यह जजीरा दो सौ वर्ग गज का था। जल की सतह से दस गज ऊंचा था।[4] मुगल सम्राट जहांगीर ने भी इस स्थान की यात्रा की थी। उसके समय यह जजीरा सौ वर्ग गज का था[5]। वेटस के समय इसका आकार वर्गाकार नहीं रह गया था। उस समय पचानवें गज लम्बा तथा पचहत्तर गज चौड़ा था[6]। जल के आघात और बे-मुरम्मत होने के कारण यह जजीरा क्षीण होता चला गया है। इसके सम्बन्ध में इतिहासकारों के अलग-अलग वर्णन मिलते हैं। पीरहसन लिखता है—

---

1. मिर्जा हैदर, तारीखे रशीदी : पृष्ठ 429
2. सैयदअली, तारीखे काश्मीर : पृष्ठ 30
3. हसन, तारीखे : काश्मीर : 117 पाण्डु
4. मिर्जा हैदर, तारीखे रशीदी : 48, 528-529
5. तुजुकरे जहांगीरी : 1/94
6. वेटस, ट्रैवल : पृष्ठ 254-55

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'सुलतान अक्सर औकात झील ऊलर की सैर में बसर करता था। इस तालाब के बीचोबीच सन्धिमत का मन्दिर था। यह मन्दिर पानी कम होने के मौका पर नजर आता था। सुलतान ने उसकी चोटी पर एक लम्बी-चौड़ी किश्ती नसब करके और उसे ईंटों और पत्थरों से पाटकर एक वसीह और ऊंचे जजीरा की बुनियाद डाली और उसका नाम 'जैनाडैनब' रखा। उस जजीरे के ऊपर एक तीन मंजिला झरोखा बनवाया। पहली मंजिल पत्थर, दूसरी ईंट और तीसरी लकड़ी की थी। इसके साथ एक छोटी-सी गुम्बदाकार मस्जिद भी। तामीर की जो अभी तक मौजूद है[1]।

एक दूसरे इतिहासकार मोहिबुल हसन ने लिखा है—

'करीम जमाने में ऊलर झील के दक्षिण-पूर्व कोने में एक जजीरा था जो जेरआब हो गया था। जैनुल आबदीन ने इस जजीरा को फिर से ऊंचा करके इसको तूफान के मौके पर किश्तियों के लिए पनाहगाह बनाने का इरादा किया। इसने झील में पत्थर डालकर बड़ी मुश्किल से इसकी सतह को पानी से बुलन्द किया और इस जजीरा का नाम 'जैनलाक' रखा और हिजरी 847—सन् 1443-44 ई० में यहां पर एक महल, एक मस्जिद, एक बाग बनवाया। महल में चार मंजिलें थीं। पहली मंजिल पत्थर की थी, दूसरी ईंट की, तीसरी और चौथी मंजिल लकड़ी की थी। मस्जिद पत्थर की थी। जिन हाजियों, बढ़इयों, राजगीरों और दूसरे लोगों ने इन इमारतों की तामीर में हिस्सा लिया था, इन्हें परगना खोया होम (खुरम होम) की आमदनी से हमेशा रकम मिलती रही[2]।

---

1. पीरहसन, तारीख काश्मीर : पृष्ठ 175-76
2. मोहिबुल हसन, उर्दू अनुवाद, पृष्ठ 135

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परन्तु सुलतान जैनुल आबदीन के समकालीन इतिहासकार जोनराज जो राज्य की घटनाओं का प्रत्यक्षदर्शी था, जैनलंका बनाने का दूसरा कारण देता है। सुलतान योगियों का भक्त था। स्वयं भी योगी था। संस्कृत[1] भाषा का अच्छा पंडित और छः दर्शनों का ज्ञाता था[2]। वह योगियों को ऐसा एकांत-शांत स्थान बनाकर देना चाहता था जहां वे साधना करके सिद्धि प्राप्त कर सकें। यह सोचकर उसने उल्लोलसर के मध्य में पवित्र और एकांत स्थान पर बड़े-बड़े पत्थर गिरवा कर उसे भर दिया और फिर उसके बाद जब स्थान द्वीप जैसा बन गया तो उस पर जैनलंका का निर्माण करवाया[3]।

योगि सम्प्रदाय की पुस्तकों से पता चलता है कि योग के द्वारा सिद्धि प्राप्त करके मानव आत्मिक और शारीरिक रूप से अद्भुत शक्तियों का स्वामी हो सकता है। योगि साम्प्रदाय के प्रथम और प्रमुख आचार्य गुरु गोरखनाथ अपने भ्रमण काल में काश्मीर में भी आए थे। गोरखनाथ जी के अमृतमय प्रवचनों से प्रभावित होकर उत्तर और पश्चिम के हजारों लोग उनके अनुयायी बन गए थे[4]।

---

1. श्रीवर, जैनराजतंगिणी : 1/1/28
2. वही : 1/5/64
3. उल्लोल सरसी मध्ये वर्तमाने महास्थले।
   पवित्रे विजने चात्र सिद्धिं यास्यन्ति साधकाः ।।
   चिन्तयित्वेति भूपालः शिला प्रवहणैर्दृढैः।
   उल्लोस सरसी मध्यमप्यमाधम पूरयत् :
   सरसस्तु ततस्तस्य स्थलीभूतेऽथ भूपतिः।
   मध्यदेशे महाराजो जैनलंकां विनिर्मिमे ।।
   जोनराज, राजतरंगिणी : श्लोक 939-941
4. नगेन्द्रनाथवसु, हिन्दी विश्वकोश

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक बार उन्होंने जनता को योगविद्या की ओर आकर्षित करने के लिए यौगिक चमत्कार दिखाने का निश्चय करके एक महोत्सव का आयोजन किया। इस कार्य के लिए अपने गुरु मत्स्येन्द्रनाथ जी से आज्ञा पाकर गोदावरी कुम्भ के पर्व पर तीन दिन का महोत्सव करने का निर्णय करके कुम्भ के मेले में इस इस सम्बन्ध में घोषणा करवा दी। इस आयोजन में योगियों के अतिरिक्त अपार जनसमूह सम्मिलित हुआ। जनता को सूचित किया गया कि अमुक-अमुक समय पर समीपवर्ती समुद्र के तट पर योगशक्ति के कुछ चमत्कार दिखाए जाएंगे।

घोषित कार्यक्रम के अनुसार महान योगी मत्स्येन्द्रनाथ जी, गोरखनाथ जी और ज्वालेन्द्रनाथ जी अपने-अपने शिष्यों सहित वहां आ गए। मत्स्येन्द्रनाथ जी का संकेत पाकर श्री ज्वालेन्द्र-नाथ समुद्र की ओर बढ़े तथा जैसे धरती पर चला जाता है उसी तरह काफी दूर तक जल के ऊपर चलकर वापस लौट आए। यह चमत्कार दिखाने के उपरान्त वे फिर जल की तरफ बढ़े तो जल उनके लिए रास्ता छोड़कर इधर-उधर हो गया। इसके बाद उन्होंने समुद्र तट पर खड़े होकर अपने तेज से समुद्र के जल को हजार कदम पीछे हटा दिया तथा फिर किनारे तक लाए। उसके बाद वे जल के अन्दर प्रविष्ट हुए, पर जब बाहर निकले तो ऐसा लगता था मानो जल ने उनका स्पर्श तक न किया हो।

दूसरे दिन श्री गोरखनाथ जी ने योगशक्ति के चमत्कार दिखाने आरम्भ किए। सबसे पहले उन्होंने अपना शरीर मच्छर की तरह सूक्ष्म बना लिया और उड़कर जनता की आंखों से ओझल हो गए। कुछ देर के बाद प्रकट होकर अपने शरीर को आग की तरह जलाया, फिर पहले की तरह बना दिया। इसके बाद एक मृत मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर गए और उसे जीवित कर दिया। इस प्रकार अपने शरीर को शव की भांति दिखाकर

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फिर अपने शरीर में आ गए। इसके बाद उन्होंने उस मृत मनुष्य के शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और फिर सब टुकड़े इकट्ठे करके संजीवनी विद्या द्वारा उसे जीवित कर दिया।

तीसरे दिन मत्स्येन्द्रनाथ जी ने मन्त्रशक्ति के प्रभाव से वर्षा, अग्नि और वायु को अपने वश में करके दिखाया। अपनी शक्ति से सूर्य के प्रकाश को भी मन्द करके दिखा दिया तथा इसी प्रकार के अन्य अद्भुत कर्म दिखलाकर अपना प्रदर्शन समाप्त किया।

अन्त में इस महोत्सव में आए हुए योगियों तथा साधारण जनता को सम्बोधित करते हुए गोरखनाथ जी ने कहा कि जनता को कुछ चमत्कार इसलिए दिखाए गए हैं ताकि वह जान ले कि शरीर में कैसी-कैसी शक्तियां छिपी हुई हैं। योगविद्या से उन शक्तियों के द्वारा मनुष्य जैसा भी चाहे बना सकता है[1]।

सुलतान जैनुल आबदीन योग ग्रहण कर चुका था। उसकी योगशक्ति की कुछ कथाएं कही जाती हैं। "एक दिन वह वूलर झीलमें अपनी बनाई हुई जैनलंका के महल में अकेला बैठा था। सुलतान का बेटा हाजीखां शैतानी व सीमिया से सुलतान को कतल करनेका ख्याल दिल में लाया। सुलतान ने उसकी तरफ देखकर फरमाया कि 'मेरी तसवीह मस्जिद में गिर पड़ी है। जल्दी से जाकर लाओ।" हाजीखां मस्जिद में गया। क्या देखता है कि सुलतानवहां हाथ में तसवीह लिए हुए वजीफा पढ़ता है। हैरत से वापस लौटा। सुलतान ने उससे तसवीह मांगी। हाजीखां शर्मिन्दा

---

1. (क) चन्द्रनाथ योगी, योगिसम्प्रदायाविस्कृतिः
   (ख) सुरेश मजूमदार, राजगुरु योगिवंश।
   (ग) डा० नगेन्द्रनाथ उपाध्याय, गोरक्षनाथ।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

होकर पैरों पर गिर पड़ा। वाज मोरखीन लिखते हैं कि सुलतान इल्म सीमिया और रीमिया में बखूबी माहिर था[1]।

तबकाते अकबरी में एक कथा इस प्रकार है—एक बार सुलतान बीमार हो गया। उसकी मृत्यु समीप थी। परिवार और जनता को उसके बचने की आशा न रही। इसी समय काश्मीर में एक योगी भ्रमण करता-करता आ पहुंचा। उसने कहा मैं सीमिया का इल्म जानता हूं। सुलतान को नीरोग करने का और दूसरा कोई इसके अतिरिक्त उपाय नहीं है कि अपनी आत्मा को उसके शरीर में डाल दूं। सुलतान के सेवकों ने योगी तथा उसके एक शिष्य को उसके सिरहाने ले जाकर अकेले छोड़ दिया। योगी ने अपने शिष्य से कहा—"जब मेरा शरीर आत्मा निकल जाने से बेकार हो जाए तो आसन की अवस्था में ले जाकर उसकी रक्षा करना।"

जब सुलतान की आत्मा उसके शरीर से निकल गई तो उसके अपनी आत्मा को अपने शरीर से निकालकर उसे सुलतान के शरीर में प्रविष्ट करा दिया। इससे सुलतान निरोग हो गया।

पीरहसन इस घटना का वर्णन इस प्रकार करता है—

"सुलतान जैनुल आबदीन बत्तीस बरस की हकूमत के बाद मर्जुल मौत में गिरफतार हो गया। करीब था कि मर जाता कि दो शख्स एक श्रीवट और दूसरा दोरीवट जो हमेशा सुलतान की खिदमत में रहते थे, अपने पास एक कामिल जोगी रखते थे। जोगी इल्म सीमिया में बड़ा माहिर था। जब बादशाह की मौत करीब आ पहुंची तो ये दोनों मुसाहिब निहायत हैरान और परेशान हुए और इस जोगी के सामने हाथ जोड़कर सुलतान की हसूल सेहत की अर्ज की। जोगी जो मजकूर दोनों आदमियों की

1. पीरहसन, तारीखे काश्मीर : पृष्ठ 180-181

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हुस्न खिदमात का निहायत ममनून था—कहा कि सुलतान की मौत लाजमी और बिल्कुल इलाजो-वजीर नहीं। अब मैं तुम दोनों की रियायत से अपनी रूह बादशाह के कालिब में उतार कर उसको जिन्दा कर दूंगा और अपने जिस्म को तुम्हारे हवाला कर दूंगा। तुम्हें चाहिए कि उसे पूरी हिफाजत से किसी अलग जगह रखकर ख्याल रखो। ऐसा न हो कि वह जाया हो जाए। फिर इन दोनों आदमियों को बड़ी चापलूसी और फरेब से सुलतान के सिरहाने परदे के पीछे छिपा दिया। ज्योंही बादशाह की रूह बादशाह के बदन से निकली, जोगी की रूह उस वक्त जोगी के कालिब से निकलकर बादशाह के जिस्म में दाखिल हो गई। बादशाह के मुसाहबों ने फौरन जोगी का जिस्म उठाकर श्मशान के हवाला कर दिया। सुलतान सही व सालिम विस्तर अलावत से उठकर हकूमत के कारोबार में मसरूफ हो गया। इस तरह जोगी ने अपने जिस्म से हाथ धोकर हकूमत और सल्तनत के प्याला से लज्जत उठाई[1]।"

इन प्रसंगों से स्पष्ट होता है कि सुलतान जैनुल आबदीन ने उल्लोलसर में जैनलंका का निर्माण योगी महात्माओं को साधना के लिए एक शान्त, निर्जन और पवित्र स्थान प्रदान करने के उद्देश्य से किया था।

पर अब वूलर झील का क्षेत्र सिकुड़ रहा है। उसके तटवर्ती तल में अवैध निर्माण किए गए हैं। उसके बहुत बड़े क्षेत्र में की जाने वाली शानी की बुआई इसकी सीमाओं को कम कर रही है। झील में उत्पन्न घास भी एक अभिशाप की तरह इसके सौन्दर्य को ग्रस रहा है। यदि समय रहते सरकार ने इस ओर ध्यान न दिया तो काश्मीर के कम राज क्षेत्र की सुन्दरता में बहुत कमी आ जाएगी।

---

1. पीरहसन, तारीखे काश्मीर : उर्दू अनुवाद, पृष्ठ 182

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुलामुला

उत्तर भारत के पर्वतीय प्रदेश में भगवती शक्ति के अनेक तीर्थ स्थान हैं। भारतीय शक्तिवाद ईश्वर की अपेक्षा, ईश्वर की शक्ति को महत्त्व देता है। ईश्वर की यह शक्ति स्त्रीरूपा है, इसलिए इसे माता के रूप में पुकारा जाता है[1]। जिस प्रकार परमात्मा धर्म की रक्षा और लोककल्याण के लिए अनेक रूपों में अवतार धारण करता है, इसी प्रकार उसकी शक्ति भी अनेक नाम और रूप धारण करके अवतरित होती है। भारतवर्ष में सदियों से चली आने शक्ति उपासना की इस परम्परा ने बाद में शक्ति संप्रदाय का रूप ले लिया जिसमें ईश्वर की शक्ति को महत्त्वपूर्ण मानकर उसे देवी माता के रूप में प्रतिष्ठित किया गया।

शक्ति-उपासना की यह परम्परा दो धाराओं में प्रवाहित हुई। एक शक्तिमान के साथ जैसे शिव-पार्वती, लक्ष्मी-नारायण, सीता-राम, राधा-कृष्ण और दूसरी स्वतन्त्र स्थिति में, जैसे—माता वैष्णो, माता ज्वालामुखी, माता खीर भवानी आदि अनेक नाम रूपों में। अपनी स्वतन्त्र स्थिति में भी शक्ति सब प्रकार की समृद्धि और लोकसिद्धि देने वाली है। माता खीर भवानी अर्थात् माता तुलामुला भी इस तीर्थ पर अपनी स्वतन्त्र स्थिति में है।

1. एस० जे० वुड़रफ, शक्ति और शाक्तः पृष्ठ, 9

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सतोदेश काश्मीर में माता खीर भवानी के 'प्रादुर्भाव के विषय में काश्मीर में विरचित एक प्राचीन ग्रन्थ भृंगीश संहिता' में लिखा गया है कि पुलस्त्य ऋषि के वंश में विश्रवा के घर पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम रावण था। उसकी माता का नाम कैकसी था। जब रावण कुछ बड़ा हुआ तो उसने अनुपम शक्ति प्राप्त करने के लिए भगवान् ब्रह्मा की कठिन तपस्या की। ब्रह्मा उसके समक्ष प्रकट हुए और वर मांगने को कहा।

रावण ने कहा —"हे प्रभु ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे सुखपूर्वक आवास के लिए भगवान् शंकर द्वारा सागर के मध्य में निर्मित लंका नामक नगरी दे दीजिए।

"भगवान् शिव की लंका तुम्हें प्रदान की। इसमें सुखपूर्वक निवास करो। जब तक महामाया माता सीता की उत्पत्ति नहीं हो जाती तब तक तुम देव, दानव, पशु, पक्षी, मानव आदि से अजेय रहोगे।"

रावण लंका में राज करने लगा। उसने अपने आचरण से देवताओं को दुःख और दानवों को बहुत सुख दिया। कुछ समय के बाद रावण फिर शिव की आराधना में लीन हुआ। शिव की पूजा में अपने सिर को बार-बार अर्पण करके भगवान् शिव के वरदान से वह दशग्रीव हो गया। रावण के मन में जब और शक्तिमान् बनने की कामना जाग्रत हुई तो भगवान् शिव ने उसे माता महाकाली की आराधना करने का परामर्श दिया। क्योंकि जो भी देवी माता की शरण में जाता है उसकी सभी प्रकार की कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं[1]।

भगवान् शिव के कहने पर रावण ने दीर्घकाल पर्यन्त देवी तामसी की उपासना की। जब प्रसन्न होकर देवी ने रावण को

1. आश्रिता सा महादेवी सर्वान् कामान् प्रदास्यति।
भृंगीश संहिताः श्रीराज्ञीप्रादुर्भाव, पटल-1

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वर मांगने के लिए कहा तो उसने माता से प्रार्थना की—

हे मातेश्वरी ! यदि आप मुझ पर इतनी ही प्रसन्न हैं तो आप मेरे घर में निवास करके सदा के लिए मेरे पास रहने की कृपा करें[1]।

रावण की भक्ति और श्रद्धा से प्रसन्न देवी ने रावण की प्रार्थना स्वीकार की और लंका नगर की ईशान कोण में स्थित हो गई। सभी लंकावासी अत्यन्त भक्ति-भाव से माता की पूजा-अर्चना करने लगे। लंका में देवी माता के वास से उस नगर की बहुत उन्नति हुई और कुछ ही समय में वह अत्यन्त वैभवशाली नगर के रूप में विश्रुत हो गया। रावण की शक्ति में भी वृद्धि हुई और वह एक अजेय वीर माना जाने लगा।

परन्तु रावण ने इस शक्ति का दुरुपयोग किया। वह आचारहीन हो गया। जनता पर अत्याचार करने लगा। जब वह आचार-विचार की सभी मर्यादाओं को लांघ गया तो माता महाकाली व्याकुल हो गई। उन्हें लंका में रहना अब अरुचिकर लगने लगा।

तभी धर्म की स्थापना, अधर्म के नाश और जनता को रक्षा के लिए श्रीराम का अवतरण हुआ। वह वनवास में आए तो रावण ने उनकी पत्नी सीता का हरण कर लिया। इसके परिणाम स्वरूप राम-रावण का युद्ध हुआ। तब कुम्भकर्ण, मेघनाथ आदि मारे गए तो रावण ने देवी के मन्दिर में हवन और पूजन करके राम का आह्वान किया ताकि वह उनकी बलि दे सके। मन्त्र-शक्ति के प्रभाववश श्रीराम पूजा-मण्डप के मध्य में प्रकट हो गए। रावण ने राम को कहा कि वह यथाशीघ्र सीता का ख्याल

---

1. यदि ते स्यान्महादेवी महान मयि हि अनुग्रहः।
तदा त्वं मद्गृहे संस्था नित्यं सन्निहिता भव ॥ श्री राज्ञीप्रादुर्भावः पटल, 1

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

छोड़कर लंका से भाग जाए नहीं तो उसकी मृत्यु निश्चित है। जब राम ने रावण से कहा कि वे तो सीता को लेकर ही लौटेंगे तो रावण ने तलवार से राम पर प्रहार करना चाहा।

उसी समय माता महाकाली ने मूर्ति से बाहर आकर रावण को धिक्कारा और कहा कि अब वे अन्यायी और अत्याचारी रावण की लंका में रहना उचित नहीं समझतीं। वे सतीदेश काश्मीर में जाकर वैष्णव व्रत धारण कर निवास करेंगी। वहां उनका रूप सात्विक होगा[1]। देवी की वाणी सुनकर श्रीराम ने हनुमान को आदेश दिया कि वे महामाया को काश्मीर में इच्छित स्थान पर पहुंचा दें।

श्रीहनुमान माता को लेकर काश्मीर में पहुंचे[2]। माता के निवास के लिए उचित स्थान की खोज की। सतीदेश में प्राकृतिक सौन्दर्य की अनुपम छटा थी। देवदार और चीड़ के मीलों तक विस्तृत गहन वन, बर्फ से आवृत गिरि श्रेणियां, गीत गाते हुए झरने, शान्त सरोवर, सागर की ओर तीव्रगति से प्रवहमान् नदियां, रंग-बिरंगे फूलों और हरयाली से भरी हुई घाटियां सब कुछ तो अनुपम था।

सभी स्थानों में एक स्थान बड़ा रमणीय था। सिन्धु और चन्द्रभागा नामक नदियों के मध्यवर्ती भू-भाग में स्थित यह

---

1. उवाच जगतां धात्री धिक्त्वां हे राक्षसधम।
अहं व्रजामि सद्देशे हिमालये वरे शुभे।।
सतीसरसि काश्मीरे वैष्णव व्रत धारिणी।।

भृंगीश संहिता, महाराज्ञी प्रादुर्भाव, पटल-2

2. सतीदेशमनुप्राप्ता नीता हनुमता स्वयम।
अनंतनाग संहिता…………………।।

वही, पटल, I

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्थान भगवान् स्वामी अमरनाथ जी के क्षेत्र के समीप था। रमणीक वनभूमि, शीतल और निर्मल जल का स्रोत, चीड़, चिनार और देवदार के वृक्ष, चन्द्रभागा नदी का पवित्र तट ये सब मिलकर इस स्थान को अमूल्य और अतुलनीय बनाते थे। अन्य स्थान इस स्थान के मूल्य और महत्त्व की तुलना में नगण्य थे। अतः इस तूलमूल्यक स्थान पर देवी ने निवास करने का निश्चय किया[1]।

इस स्थान पर स्थित होकर देवी शान्त हो गईं। तामसी से उनका रूप सात्विकी हो गया। मांस और मदिरा के स्थान पर उनकी पूजा, खीर, चीनी और चावलों से होने लगी[2]।

तब से लेकर माता रानी इसी स्थान पर विराजमान हैं। अमूल्य और अतुलनीय स्थान होने के कारण पूर्वकाल इसका नाम तूलमूल्यक हुआ। फिर कालक्रम से उच्चारण की सुविधा के लिए इसे तुलमुल और फिर तुलामुला कहा जाने लगा। जब लोग इस स्थान पर आकर रहने लगे तो इस गांव का नाम भी तुलामुला पड़ गया। जिस प्रकार जम्मू प्रदेश के सुकराल गांव में अवतरित होने के कारण देवी सुकराला नाम से विख्यात् हुईं थीं उसी प्रकार तुलामुला नामक स्थान पर निवास करने के कारण देवी तुलामुला नाम से भी पुकारी जाने लगीं।

माता खीर भवानी आदि शक्ति हैं। इनकी कृपा से मानव सब प्रकार की आपत्तियों से मुक्त होकर सर्वसुख सम्पन्न हो

---

1. तूलवत्तुल्यतान्यत्र स्थानान्यान्यनि सुन्दरि।
   लघुभूतानिमूल्येन तस्मात्तु तूलमूल्यकम्॥
   भृंगीशसंहिता : महाराज्ञी प्रादुर्भाव, पटल, I
2. अत्र स्थिताभूत्शान्तासा खीरखण्डाज्य भोजना।
   सात्विका सत्यरूपा सा………………॥
   वही, पटल-I

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाता है। राम ने इनकी पूजा करके ही रावण-वध में सफलता प्राप्त की थी। इन्हीं की कृपा से विभीषण ने लंका का राज्य प्राप्त किया था। श्रद्धा और भक्ति से इनकी आराधना करके पुत्रार्थी पुत्र को, धनार्थी धन को, विद्यार्थी विद्या को प्राप्त कर सकता है। इनकी कृपा होने पर व्यक्ति को किसी प्रकार का भय नहीं रहता। वह संकटमुक्त होकर जीवन के सभी क्षेत्रों :में सफलता प्राप्त करता है[1]।

प्राचीन काल में माता खीर भवानी के दर्शनों के लिए बहुत यात्री आते थे। इन यात्रियों में देव, दानव, गन्धर्व, राजा-महाराजा आदि सभी प्रकार के लोग होते थे। स्वामी अमरनाथ जी की यात्रा पर आने वाले हजारों श्रद्धालु भी माता रानी के दर्शन करते थे। श्री हनुमान जो माता रानी को लंका से काश्मीर में लाए थे, माता के द्वारपाल बनकर यहीं के हो गए[2]।

श्रीनगर से चौदह मील उत्तर तुलामुला नामक जलस्रोत है जो माता खीर भवानी का निवास स्थान है। खीर काअर्थ है—दूध। इस तीर्थ पर देवी का पूजन दूध के द्वाराकिया जाता है अतः देवी खीर भवानी के नाम से भी विश्रुत हो गई।

काश्मीर के प्रसिद्ध इतिहास लेखक महाकवि कल्हण ने इस तीर्थ का उल्लेख 'तूलमूल्य' नाम से किया है। इसके अनुसार काश्मीर की सिन्धु नदी जिन क्षेत्र में प्रवाहित होने के उपरान्त वितस्ता में मिलती है, उसी के समीप 'तूलमुल' स्थान है। एक जल स्रोत के मध्य में देवी का मन्दिर है। यहां पर देवी की पूजा के लिए 'रुद्रमाला तन्त्र' के कवच का पाठ किया जाता है तथा

---

1. श्रीराज्ञीप्रादुर्भाव : पटल-I
2. हनुमांस्तु सदैवात्र वर्तते द्वारपो बली।

वही, पटल 2

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देवी को दूध, चीनी और चावल अर्पित किए जाते हैं। नाग के जल में चावल और फूलों के अधिक मात्रा में जमा हो जाने के कारण जल पर सतह जम जाती है। चढ़ावे के कारण एक बार जब नाग का जल बन्द हो गया तो तत्कालीन डोगरा दीवान नरसिंह दयाल ने यहां की सफाई करवाई थी। पर इसके तत्काल बाद काश्मीर में हैजे की भयंकर बीमारी फैल गई थी। बहुत से लोग मारे गए। आम जनता कहने लगी कि देवी माता अप्रसन्न हो गई थी। इसका फल यह निकला कि भय के कारण पुनः इस नाग की सफाई नहीं करवाई गई।

हर वर्ष ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि को माता खीर भवानी का जन्मदिन और उत्सव मनाया जाता है। काश्मीर घाटी के विभिन्न क्षेत्रों से, विशेषकर श्रीनगर शहर से हजारों हिन्दू इस उत्सव में भाग लेते हैं। इस तीर्थ की मान्यता हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों में पाई जाती है। जम्मू-काश्मीर के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री बक्शी गुलाम मुहम्मद तथा उनकी पत्नी माता खीर भवानी की शक्ति में पूर्ण विश्वास रखते थे। काश्मीर में आज भी मान्यता है कि जब भी काश्मीर पर कोई मुसीबत आने वाली होती है तो इस तीर्थ के नाग और कुण्ड के जल का रंग बदल जाता है। ईस्वी वर्ष 1892 में काश्मीर घाटी में हैजे की बीमारी से ग्यारह हजार सात सौ बारह लोग मारे गए थे। उस समय इस तीर्थ के कुण्ड का जल काला हो गया था[1]। इस तीर्थ की सबसे विचित्र बात यह है कि इसके जल का रंग बदलता रहता है। कभी हरा तो कभी लाल हो जाता हैं।

---

1. नेत्रांकवसु चन्द्राब्दे काश्मीरेऽभूद विसूचिका।
   जलं क्षीर भवानीस्थं तदानीं कृष्णतां गतम ॥

रघुनाथसिंह, राजतरंगिणी : 4/465

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

माता खीर भवानी का मेला काश्मीर घाटी के तीन स्थानों पर मनाने की की परम्परा रही है। ये तीन स्थान हैं—शोपियान में समीप मंज गांव, गान्धरवल सम्बल के समीप तुलमुल गांव तथा टकठ नामक गांव। इन तीनों ही स्थानों पर नाग है।

काश्मीर के महाप्रतापी राजा ललितादित्य के राजत्वकाल में (ई० वर्ष 700 से 736 ई०) जगत् गुरु शंकराचार्य काश्मीर भूमि में आए थे। उस काल में काश्मोर में तन्त्र-मन्त्र और जादू-टोना करने का बहुत प्रचलन था। शकंर काश्मीर पहुंचे तो वहां के तांत्रिकों ने मन्त्र-शक्ति से उनके हाथ-पांव बांध दिए और उन्हें लाचार कर दिया। इस स्थिति में स्वामी शंकराचार्य जी ने 'देव्यापराध क्षमापन स्तोत्र' का पाठ करके माता क्षीर भवानी को प्रसन्न किया और माता की कृपा से उस प्रभाव से मुक्त हुए थे।

काश्मीर की साधारण जनता ने लेकर राजा तक माता के दर्शनों के लिए आया करते थे। राजाओं और उनकी महारानियों आदि ने इस तीर्थस्थान के साथ बहुत से अग्रहार लगाए थे ताकि तीर्थ स्थान का खर्चा चलता रहे। इस तीर्थ को बहुत से गांव और कृषि भूमि दान के रूप में दी गई थी जिससे इस तीर्थ के पुजारियों, यहां पर आने वाले यात्रियों, साधु-महात्माओं के आवास और भोजन का प्रबन्ध आसानी से चलता रहे। जिस प्रकार आजकल भी स्वामी अमरनाथ जी की यात्रा पर हजारों यात्री माता क्षीर भवानी तीर्थ पर जाते हैं, ठीक ऐसी ही स्थिति उस काल में भी थी। हजारों ब्राह्मण परिवार तीर्थ के आस-पास निवास करते थे और माता को भक्ति करके शक्ति सम्पन्न हो गए थे। इस तीर्थ से सम्बन्धित एक घटना की चर्चा कल्हण ने अपनी राजतरंगिणी नामक अमर रचना की है।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काश्मीर के महाप्रतापी राजा ललितादित्य का पौत्र राजा जयापीड अत्यन्त तेजस्वी, पराक्रमी और धर्म एवं न्यायप्रिय शासक था। उसके नेतृत्व में काश्मीर की सेना ने काश्मीर की सीमा से बाहर अन्तिम सैनिक अभियान करके भारत और नेपाल को विजित किया था। महायशस्वी और प्रजापालक राजा जयापीड के चरित्र में अचानक परिवर्तन आया और उसने अपने दादा ललितादित्य का आदर्श त्याग दिया।

राजा धर्म का त्याग करके अधर्मी हो गया। दैव के प्रभाव से कुछ लालची दरबारियोंके परामर्श पर उसने धन का संग्रह करना आरम्भ किया। धन प्राप्त करने के लिए वह प्रजा को सताने लगा। वह लोगों का धन हरण करने लगा। और तो और उसके पूर्वजों और उसने स्वयं मन्दिरों और मठों के साथ जो अग्रहार लगाए थे, उन्हें भी छीनकर राज्य के अधीन कर दिया। राजा लोग मन्दिरों, मठों और धर्मशालाओं का खर्च चलाने के लिए उनमें रहने वाले लोगों को भोजन-वस्त्रादि के लिए इनके साथ कृषि-भूमि और अन्य सम्पत्ति लगा दिया करते थे।

प्रजा के दुर्भाग्य से लोभ के वश में राजा जयापीड लगातार तीन वर्ष तक प्रजा के धन का अपहरण करता रहा। पर ब्राह्मण उसके आतंक से भयभीत नहीं हुए। उन्होंने जब राजा को इस अपकर्म के लिए धिक्कारा तो वह उनका शत्रु बन गया। बहुत से ब्राह्मणों ने उसके अत्याचार से पीड़ित होकर अपने प्राणों का त्याग कर दिया और बहुत से देश छोड़कर दूसरे राज्यों में चले गए। पर राजा ने प्रजापीड़न जारी रखा।

अब भी ब्राह्मण उसके आचरण की तीखी आलोचना कर रहे थे। एक दिन राजा जयापीड तुलामुला तीर्थ पर जा पहुंचा और तीर्थ के साथ बहने वाली चन्द्रभागा नामक नदी के तट पर अपना शिविर लगाया और तुलामुला तीर्थ के साथ लगे अग्रहारों का

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अपहरण कर लिया। राजा के इस अपकर्म से अत्यन्त दुखी होकर एक कम सौ ब्राह्मणों ने नदी में डूबकर अपने प्राण त्यागे।

इस घटना का राजा के मन पर बहुत प्रभाव पड़ा और उस दिन से लेकर उसने अपने अग्रहारों का अपहरण बन्द कर दिया। पर कितने ही ब्राह्मणों की छोनी गई सम्पत्ति और भूमि उसने वापस नहीं की[1]। इस पर तुलामुला तीर्थ के ब्राह्मण इकट्ठे होकर राजा से निवेदन करने के लिए उसके दरबार में गए। वहां राजा के सेवकों ने उनकी खूब पिटाई[2] की। इस पर भी जैसे-कैसे वे राजा के सामने जा पहुंचे और उससे निवेदन किया—"हे राजन्! इस धरती पर मनु, मान्धाता, राम आदि बड़े-बड़े राजा हो गए हैं, पर उनके राज्यकाल में भी ब्राह्मणों का कभी अपमान नहीं किया गया। आप भी पहले ऐसे नहीं थे, पर पिछले कुछ समय से आप ब्राह्मणों का अत्यन्त अनादर और अपमान कर रहे हैं। यदि ब्राह्मणों को क्रोध आ गया, तो आपका बड़ा अनिष्ट होगा। क्योंकि क्रोध आने पर तपस्वी ब्राह्मण इन्द्र समेत स्वर्ग को, पर्वतों समेत पृथ्वी को तथा नागराज समेत पाताल को एक क्षण में जलाकर भस्म कर सकते हैं।"

यह सुनकर जयापीड़ ने बड़े गर्व से कहा—"अरे भिक्षा मांग

---

1. तूलमूल्यापहर्ताच चन्द्रभागातटे स्थितः।
विप्राणां शतमेकोनम ऋणोक्तज्जलेमृतम्॥
ततोग्रहारहरणादेव प्रविरतोऽभवत।
वास्तव्यानां हृतां भूमिं न तु निश्शेषतो जहौ॥
कल्हण, राजतरंगिणी : 4/638-639

2. अथ विज्ञाप्ति समये तूलमूल्यौकसो द्विजाः।
चुक्रुशु जीतु तस्याग्ने प्रतिहार कराहताः॥
वही, 4/640

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कर अपनी भूख मिटाने वाले, तुम्हारे जैसे दुष्टों को इतनी मस्ती कहां से आ गई, जिससे तुम लोग अपने को बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों के समान समझने लगे[1] ?

राजा जयापीड के इस प्रकार के कठोर वचन को सुनकर इट्टिल नाम के एक महातपस्वी ब्राह्मण ने राजा से कहा—

"राजन् ! प्रत्येक युग में, युग और धर्म के अनुसार जिस प्रकार आपके समान राजा होते हैं, उसी प्रकार हमारे जैसे ऋषि भी होते हैं।"

इस पर राजा जयापीड से बड़े अहंकार के साथ उस ब्राह्मण से पूछा—

"क्या तू वशिष्ठ, विश्वामित्र अथवा अगत्स्य है ?"

राजा के इस प्रकार के अपमानजनक वचनों को सुनकर इट्टिल क्रोध से कांपने लगा। उस समय वह इतना तेजस्वी हो गया कि दरबार में किसी को भी उसकी ओर देखने का साहस नहीं हुआ। उसने क्रोध में आए भयंकर सर्प के समान निश्वास छोड़ते हुए कहा—

"यदि तू हरिश्चन्द्र, नहुष अथवा त्रिशंकु है तो मैं भी विश्वामित्र, अगत्स्य और वशिष्ठ इन तोनों में से एक अवश्य हूं।"

राजा ने हंसकर कहा—

"विश्वामित्र के कोप से राजा हरिश्चन्द्र की दुर्दशा हुई थी। अगत्स्य के कोप से राजा नहुष को अजगर होना पड़ा था और वशिष्ठ के शाप से त्रिशंकु की दुर्गति हुई थी। पर तेरे क्रोध से मेरा क्या होगा ?"

---

1. भिक्षाकण भुजां कोऽयं शठानां वो सद ज्वरः।
येनर्षय इव ब्रूथ प्रभावाक्षापकं वचः॥
कल्हण राजतरंगिणी : 4/644

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजा जयापीड की यह गर्व और व्यंग्य से भरी बात सुनकर इट्टिल ने जोर से माता खीरभवानी का नाम लिया और कहा कि :

"हे मातेश्वरी ! इस दुष्ट राजा को विवेक दो। इसे बचा लो। इसने तुम्हारे भक्तों का घोर अपमान किया है। उनके मरण का हेतु बना है। यदि अब भी इसका मोह भंग नहीं हुआ तो मां ! मुझे शक्ति दो। मेरे क्रोध से इस पर ब्रह्मदण्ड गिरे।"

इतना सुनकर राजा भी क्रोध में आ गया। उसने इट्टिल का उपहास करते हुए कहा—

"तो फिर विलंब क्यों कर रहा है? उस दण्ड को शीघ्र गिरने दे।"

राजा के ऐसा कहते ही उसके माथे पर सायावान से छूटकर दण्ड (डण्डा) गिरा। उसके आघात से राजा के माथे पर गहरा घाव हो गया। इस अलौकिक घटना से राजा स्तंभित रह गया। राज-दरबार में खलबली मच गई। सभी ब्राह्मण वहां से चले गए। राजा के घाव की तत्काल चिकित्सा की गई।

कुछ दिन व्यतीत हो जाने पर भी राजा का घाव ठीक होने के स्थान पर खराब होता गया। उसमें कीड़े पड़ गए। घाव को ठीक करने के उद्देश्य से राजा के घावयुक्त अंग को चिकित्सकों ने आरी से काटा। इससे राजा को असहनीय वेदना होने लगी। इसके बाद कई दिनों तक नारकीय क्लेश सहन करने के बाद राजा जयापीड उसी घाव से दिवंगत हुआ[1]। इस सम्बन्ध में पीर-हसन लिखता है—

"एक बरहमन ने हाथ उठाकर उस पर लानत कही। फिल-हाल खेमा का सतून लुढ़क गया जिससे वह जख्मी हो गया और जख्म नासूर तक पहुंच गया। कीड़े तकलीफ पहुंचाते थे। आखिर-

---

1. कल्हण, राजतरंगिणी : तरंग-4

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कार इसी तखलीफ के साथ जान से गुजर गया[1] ।"

ईस्वी वर्ष 1339 पर्यन्त इस तीर्थ पर यात्रियों का आवागमन होता रहा । काश्मीर के राजपरिवार के सदस्य, सामन्त और मन्त्री तक माता भवानी के दर्शनों को आते रहे पर ईस्वी वर्ष 1339 में काश्मीर में मुस्लिम शासन हो जाने के कारण इस तीर्थ की रौनक में कमी आने लगी और फिर ऐसा भी समय आया जब इस तीर्थ की यात्रा पूर्णरूप से बन्द हो गई। आज से कोई चार सौ वर्ष पहले पंडित श्रीकृष्ण तिपलू ने इस तीर्थ स्थान का फिर पता लगाया था । सम्भवतः यह सम्राट अकबर के काश्मीर में राजत्वकाल (1586-1605) की बात है। अकबर सभी धर्मों का समान रूप से आदर करता था। उस पर हिन्दुत्व का बहुत प्रभाव था । वह माथे पर तिलक लगाता था । ब्राह्मणों से राखी बंधवाता था और प्रतिदिन मन्त्र पढ़कर सूर्य को अर्घ्य देता था[2]। काश्मीर के अन्तिम सुलतान याकूबशाह ने अकबर से डरकर जो सन्धि की थी उसमें अकबर की पहली शर्त यही थी कि काश्मीर में सबको धार्मिक स्वन्त्रता होगी।

ईस्वी वर्ष 1589 में अपनी प्रथम काश्मीर यात्रा में अकबर ने ब्राह्मणों के बालकों को सोने की मोहरे दान में दी थी[3]। फिर वह मार्तण्ड मन्दिर देखने गया। वहां उसने हीरे और मोतियों की लड़ियों से सजाई गई बहुत-सी गौएं ब्राह्मणों को दान में दी[4]। कार्तिक अमावस्या को वितस्ता के तटों तथा तटवर्ती भवनों पर दीपमाला करवाई थी[5]। अकबर के इतिहास लेखक शेख अबुल-

1. पीरहसन, तारीखे काश्मीर : पृष्ठ, 92
2. भवानी भट्टाचार्य, गलिम्पसिज आफ इंडियन हिस्ट्री : पृष्ठ, 79
3. रघुनाथसिंह, राजतरंगिणी : प्रथम भाग, पृष्ठ, 178
4. वही पृष्ठ, 178
5. वही पृष्ठ, 190

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फजल ने माता खीरभवानी तथा उसकी कछार भूमि को यात्रा की थी[1]। इस प्रकार के राजनीतिक वातावरण में इस तीर्थ पर फिर यात्रा और दर्शनों की परंपरा आरम्भ हुई जो आज भी जारी है।

हमने पहले भी लिखा है कि इस तीर्थ पर देवी की पूजा चावल, चीनी और दूध से की जाती है। इन सभी द्रव्यों को यहां के नाग में डाल दिया जाता है। एक बार फिर जब नाग का जल कूड़ा-करकट इकट्ठा हो जाने के कारण बन्द हो गया तो पंडित विदलाल धर ने साहस करके कुण्ड की सफाई करवाई। सफाई करते समय नाग के बीच में से एक पुराना मन्दिर मिला। मन्दिर में संगेमरमर लगा था और उनमें कुछ शिलाएं तो काफी लम्बी और चौड़ी थी। कुछ देवी-देवताओं की मूर्तियां भी मिली थीं। वर्षों बाद जम्मू-काश्मीर के डोगरा महाराजा प्रतापसिंह (ईस्वी वर्ष 1885-1925) ने पुराने मन्दिर के स्थान पर नाग के मध्य भाग में संगेमरमर का ही एक नया मन्दिर बनवाया था।

गत कुछ वर्षों से इस तीर्थ पर धर्मशालाओं का निर्माण, स्त्री-पुरुषों के लिए स्नान की व्यवस्था, तीर्थ पर विश्राम करने वाले यात्रियों के लिए लंगर का प्रबन्ध किया गया है। अगर यात्री अधिक हो तो वे मन्दिर के विस्तृत प्रांगण में भी ठहर सकते हैं। विशाल आकार के चनार के वृक्षों की शीतल और कोमल छाया से आवृत, चन्द्रभागा नदी की कूल के तट पर सुशोभित मां भगवती का यह तीर्थ स्थान अत्यन्त पवित्र और शान्ति प्रदान करने वाला है।

---

1. अबुलफजल, आईने अकबरी

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अमरनाथ

भारतवर्ष के जम्मू व काश्मीर प्रदेश में शिव और शक्ति के जितने भी तीर्थ हैं उनमें श्री अमरनाथ और माता वैष्णोदेवी जी के तीर्थ बहुत ही महत्त्वपूर्ण माने गए हैं। माता वैष्णोदेवी जी की पवित्र गुफा तो यात्रियों के लिए वर्षभर चौबीस घण्टे खुली रहती है जबकि स्वामी अमरनाथ जी की पवित्र गुफा में भगवान् शिव के प्रतीक तुषारलिंग के दर्शन रक्षाबन्धन की पूर्णिमा के दिन होते हैं। इसी दिन हजारों यात्री लम्बा और जोखिम भरा मार्ग तय करके तीर्थ स्थान पहुंचते हैं।

स्वामी अमरनाथ जी के तीर्थ की यात्रा बड़ी कठिन है। मौसम और मार्ग दोनों ही कभी भी खतरनाक रूप धारण कर सकते हैं। गत कुछ वर्षों से इस तीर्थ पर पहुंचने के लिए भारतीय सेना के जवानों ने वालटाल की तरफ से भी एक मार्ग बनाया था जो अब काफी लोकप्रिय होता जा रहा है। यह मार्ग पहलगाम मार्ग से अपेक्षाकृत छोटा है और इस तरफ से तीर्थ पर जाने वाले यात्री एक ही दिन में यात्रा पूर्ण कर लेते हैं।

पीरपंचाल पर्वत माला में जवाहर सुरंग के उत्तर-पूर्व में कुछ ही दूरी पर नीलकुण्ड नाम का विशाल जलस्रोत है। इसे ही वेरीनाग कहते हैं। वेरीनाग से निसृत नदी को वितस्ता अथवा जेहलम कहा जाता है। वितस्ता नदी की ऊपरी घाटी ही काश्मीर नाम से विश्रुत है।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हिमालय पर्वत की अन्त:शृंखला से एक पर्वतमाला फूटकर वितस्ता और कृत्णगंगा का पानी अलग-अलग करती हुई पहले पूरब की ओर जाती है फिर पश्चिम की ओर मुड़ जाती है और इसके बाद दक्षिण को घूम जाती है—वही काश्मीर की हरमुक की पहाड़ी और काजनाग पर्वत कहलाती है। थोड़ा और पूरब से एक ओर पर्वत शृंखला दक्षिण की ओर जब मुड़ती है तो उसके उस मोड़ पर काश्मीर का अमरनाथ तीर्थ है[1]।

अमरनाथ भगवान् शिव का एक नाम है। जिस प्रकार आदि शक्ति मूलरूप से एक होने पर भी प्रयोजन वश भिन्न-भिन्न नाम और रूप धारण करती है उसी प्रकार भगवान् शिव ने भी अनेक लीलाएं कीं और वे भिन्न-भिन्न नाम-रूपों में विश्रुत हुए।

जिनमें समस्त मंगल विद्यमान हैं, वे शिव हैं। शिव का पूर्व नाम रुद्र था। रुद्र शब्द का अर्थ है—जो रुलाता है, वही रुद्र है। इस संसार में संकट और संहार का कारण यही रुद्र है[1]। अथर्ववेद में रुद्र का वर्णन सर्वनाशक के रूप में हुआ है। अधिकांश वैदिक मन्त्र इसी तथ्य की पुष्टि करते हैं[2]। इसके अतिरिक्त रुद्र का वर्णन अग्नि रूप में भी हुआ है[3]। अपने इसी प्रभाव से वे कामदेव को भस्म करते हुए दिखाई देते हैं[4]। उनके अग्नि के समान तेज से सम्बन्धित अनेक आख्यान मिलते हैं। रुद्र इतने शक्तिशालो हैं कि वे किसी भी समय अपनी इच्छामात्र से ही समस्त चराचर को भस्म करने में समर्थ हैं[5]।

---

1. नीलम अग्रवाल, कल्हण राजतरंगिणी भूमिका
2. ऋग्वेद : 1/114/4
3. अथर्ववेद : 6/90/1
4. अग्निरपि रुद्र उच्यते। सामवेद : 1/15
5. दग्धुं समर्थो मनसा क्षणेन सचरा चरम्। शिव पुराण : 24/29

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, सामवेद, ब्राह्मण ग्रन्थ और उपनिषद् साहित्य में रुद्र का व्यापक वर्णन हुआ है। ऋग्वेद और ब्राह्मण ग्रन्थों में जो रुद्र था, उसने कालक्रम से आगे चलकर उपनिषदों में शिव का रूप ले लिया। रुद्र का नाम शिव क्यों हुआ, इस सम्बन्ध में लिखा गया है कि रुद्र अपने भक्तों के प्रति हिंसा नहीं करते, उनके क्रोधित न होने से प्रजा का शिव (कल्याण) होता है. वे अपने सेवकों को सब प्रकार की विपदा से बचाते हैं, अतएव वे शिव हैं[1]।

इस प्रकार एक ही देवता के संहारक रूप को रुद्र और कल्याणकारी रूप को शिव कहा गया। समय पाकर उनको परम पवित्र आध्यात्मिक रूप प्राप्त हो गया। उनकी पूजा जो पहले मांस और मदिरा आदि से की जाती थी, अब फलों, फूलों और पत्तों से की जाने लगी। उनका रौद्र रूप सदा शान्त रहे, इसलिए उन पर निरन्तर जल का अभिषेक किया जाने लगा[2]।

लोकमंगल, लोकप्रियता, प्रत्यक्ष शक्ति और प्रकोप के आतंक के कारण वे महादेव की उपाधि से भी विभूषित किए गए[3]।

रुद्र वैदिक काल के सर्वप्रथम देवता थे जो बाद में कर्मानुसार गिरीश, पशुपति, शंकर, नीलकण्ठ, अमरनाथ आदि नामों से भी अलंकृत हुए। समय के साथ-साथ उनके सम्बन्ध में आर्य जाति द्वारा की गई अनेक कल्पनाएं लुप्त हो गईं। अन्तर पड़ता गया। रुद्र, भूतों के स्वामी, सर्पधारी और शमशान में रहने वाले देवता के रूप में परिणत हो गए। प्राचीनकाल में की जाने वाली शिव मूर्ति की पूजा की परम्परा समाप्त हो गई। उसका स्थान रुद्र

---

1. वाजसनेय संहिता।
2. कल्याण, शिव पुराण अंक
3. डा० यदुवंशी, शैवमत : पृष्ठ 9

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(शिवलिंग) की पूजा करने वाली नई परम्परा ने ले लिया और इस प्रकार शिव की पूजा मूर्ति की अपेक्षा, लिंग में अधिकता से की जाने लगी[1]।

सामान्य रूप में देवता की पूजा मूर्ति में ही की जाती है। शिव की पूजा मूर्ति और लिंग दोनों में किए जाने का कारण यह बताया गया है कि एकमात्र भगवान् शिव ही ब्रह्मरूप होने के कारण निराकार तथा रूपवान् होने के कारण साकार हैं। रुद्र उनके निराकार रूप का प्रतीक है और शिव साकार रूप का। इसी से लिंग और मूर्ति दोनों में शिव पूजा की परम्परा है[2]।

धीरे-धीरे शिव कोप और कल्याण करने में समर्थ होने के कारण प्रभाव प्राप्त करते-करते रामायण, महाभारत तथा पुराणों में लोकप्रियता के शिखर पर पहुंचते दिखाई देते हैं। अठारह पुराणों में से दस में शिवलीला का वर्णन है[3]। उनके बहुमुखी चरित्र पर प्रकाश डालने के लिए अनेक कथाओं की रचना की गई, जिनमें उनके लोकोपकारी रूप का वर्णन किया गया।

वे भोले भी हैं और वीरों के वरदाता भी। कितने ही वीरों ने शौर्य और विजय के लिए उनकी तपस्या करके वरदान प्राप्त किए। कितने ही वीर राजा और तपस्वी ऋषि-मुनि इन्हें प्रसन्न करके अमरता को प्राप्त हुए। रावण और वाणासुर जैसे महाबली राजा, दुर्वासा जैसे शक्तिमान् महर्षि भगवान् शिव के परम भक्त थे। आशुतोष होने के कारण साधारण जनता से लेकर सम्राटों

---

1. डा० रघुनाथ सिंह, कल्हण राजतरंगिणी भाष्य
2. कल्याण : शिव पुराण अंक
3. स्कन्द पुराण

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तक के प्रिय होने से उनकी महिमा का प्रचार और प्रसार होता गया। वे भारतवर्ष के प्रत्येक प्रदेश में समान भाव से पूजित होने लगे।

भगवान् शिव जैसा समदर्शी अन्य कोई देवता नहीं। उन्होंने बिना किसी भेद-भाव के दैत्यों और देवताओं की सहायता की। अपने इस भोले स्वभाव के कारण उन्हें अनेक बार विपत्तियों का सामना करना पड़ा, पर जो भी उनकी शरण में आया, निराश नहीं लौटा। लोककल्याण के लिए उन्होंने विषपान भी कर लिया। आकाश से धरती पर आने वाले गंगा को भी अपने सिर पर धारण किया। अपनी पत्नी सती एवं पार्वती के साथ मिलकर इस प्रकार की मनमोहक लीलाएं कीं जिनके कारण आज भारत के कोने-कोने में शक्ति-पूजा का प्रचार है[1]।

इस प्रकार अपनी प्रकृति और प्रभाव के कारण शिव आर्य जाति के प्रमुख और प्रधान देवता बन गए। उसी प्रभाव के परिणामस्वरूप आज समस्त भारत उनकी महिमा से मण्डित है। उनके ही सबसे अधिक पूजा स्थान हैं। भारत के एक सीमावर्ती प्रदेश में वे रामेश्वर रूप में पूजित हैं तो इसी प्रकार के दूसरे क्षेत्र काश्मीर में अमरनाथ के रूप में विराजमान हैं।

अमरनाथ तीर्थ की यात्रा सुदूर प्राचीनकाल से होती आई है। यात्रा मानव के आमोद-प्रमोदमय जीवन का साधन ही नहीं है अपितु उसके जीवन की, समाज की और देश की दिनचर्या का एक अनिवार्य अंग है। देश के साहित्य, उसकी कला, उसके विज्ञान, उसके आर्थिक और आध्यात्मिक सभी क्रिया-कलापों का इन यात्राओं से पारस्परिक सम्बन्ध है।

इस यात्रा को हमारे भारतवर्ष में तीर्थयात्रा का रूप देकर

---

1. डा० वी० के० शास्त्री, माता सुकराला : पृष्ठ 135

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसे उच्चतम बातों में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। रामायण, महाभारत, पुराण आदि में तीर्थयात्रा का व्यापक वर्णन हुआ है। यद्यपि शारीरिक और मानसिक पापों से मुक्ति, सन्तों और भक्तों के दर्शन, भगवान् का स्मरण और आत्मा का उद्धार तीर्थ यात्रा का फल बताया गया है, परन्तु इसका एक और भी उद्देश्य रहा है। समूचे भारतवर्ष को अखण्ड रखने का प्रयत्न। अनकता में एकता रखने की चेष्टा। भिन्न 2 प्रदेशों के निवासियों की अलग-अलग भाषाएं हैं, पृथक्-पृथक् रीति-रिवाज हैं, परन्तु ये सब लोग तीर्थयात्रा के कारण एक-दूसरे के अत्यन्त निकट आ जाते हैं।

तीर्थ-रचना के सम्बन्ध में महाभारत में कहा गया है कि जिस प्रकार शरीर के कुछ अंग' सिर, मुख आदि दूसरे अंगों से पवित्र माने जाते हैं उसी प्रकार पृथ्वी के कुछ भाग अपनी भूमि, जल, अग्नि अथवा अन्य प्राकृतिक विशेष प्रभावों के कारण अथवा ऋषि-मुनियों, देवी-देवताओं से सेवित होने के कारण पुण्यप्रद तीर्थस्थान बन जाते हैं[1]। इसी तरह जिस स्थान पर कोई अवतार हुआ हो, जहां किसी देवता ने प्रकट होकर किसी को दर्शन दिए हों, कोई वरदान दिया हो या किसी ऋषि-मुनि ने अपनी तपस्या से किसी स्थान को पवित्र किया हो वे सभी स्थान तीर्थ कहलाते हैं[2]।

तीर्थ सम्बन्धी एक अन्य ग्रन्थ के अनुसार जहां भगवान् का अवतार हुआ हो, जहां देवता ने प्रसन्न होकर किसी को वर दिया हो, जहां ऋषि-मुनियों ने तप किया हो ऐसा स्थान तीर्थता

1. महाभारत, भीष्म पर्व
2. प्रभावाद भुताद भूमेः सलिलस्य च तेजसा।
   परिग्रहान्मुनींनां च तीर्थानां पुण्यतास्मृता॥
   तीर्थप्रकाश : पृष्ठ, 10

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को प्राप्त हो जाता है[1]।

जिस स्थान पर भगवान् शिव ने माता पार्वती को अमर-कथा सुनाई थी और कुछ काल तक वहां निवास किया था, वहां पर वे अमरनाथ के रूप में विश्रुत हुए। जिस गुफा में बैठकर अमरकथा का प्रवचन किया गया था, उसके बाहर प्रवाहित नदी भी अमरगंगा कही गई। अमरनाथ तीर्थ की यात्रा के आरम्भ के सम्बन्ध में बताया गया है कि जब भगवान् शिव कुछ समय इस गुफा में बिताकर कैलाश पर्वत की ओर प्रस्थान करने लगे तो उन्होंने उस स्थान की महत्ता को स्थायी करने के लिए कश्यप ऋषि को एक छड़ी (बल्लम) देकर आदेश दिया कि वे प्रतिवर्ष श्रावण मास की पूर्णिमा को साधु-महात्माओं के साथ उनके उस स्थान पर आते रहें। वह छड़ी उनके तीर्थ पर आने वालों का नेतृत्व करेगी। उस गुफा में वे अपने भक्तों को तुषारलिंग के रूप में दर्शन दिया करेंगे इस तुषारलिंग की रजना प्राकृतिक रूप में होती रहेगी।

कश्यप ऋषि का वर्णन ऋग्वेद[2] अथर्ववेद[3], शतपथ[4] ब्राह्मण[5], जैमनीय उपनिषद[6] आदि में मिलता है।

यह कश्यप ही थे जिन्होंने काश्मीर घाटी को वर्तमान रूप

---

1. जन्मभूवासुदेवस्य देवानां च प्रसादभूः।
ऋषीणां च तपोभूमिस्तीर्थतामेति तत्क्षणात्॥
तीर्थकल्पद्रुम : पृष्ठ, 20

2. ऋग्वेद 1 : 114 : 2

3. सामवेद 1 : 12 : 4 : 10

4. अथर्ववेद 1 : 14 : 4 : 2

5. शतपथ ब्राह्मण 13 : 7 : 1 : 5

6. जैमनीय उपनिषद 4 : 3 : 1

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रदान किया था। भगवान शिव के आदेश से हजारों साल पूर्व कश्यप ऋषि ने अमरनाथ यात्रा का जो उपक्रम किया था। वह सदियों तक अवाध रूप से चलता रहा। उस काल में काश्मीर में केवल हिन्दू ही रहते थे। हिन्दु राजाओं ने भगवान् शिव के प्रति अपनी श्रद्धा और भक्ति प्रकट करने के लिए करोड़ों रुपये खर्च करके भगवान् शिव के मन्दिर बनवाए। काश्मीर के राजाओं के मन्त्री, सामन्त, सेनापति भी इस कार्य में पीछे नहीं रहे[1]। उस काल में स्वामी अमरनाथ जी की यात्रा बड़ी धूमधाम से होती थी और प्रायः प्रतिवर्ष यात्रा में राजपरिवार का कोई-न-कोई सदस्य अवश्यमेव यात्रा में शामिल होता था।

काश्मीर के अन्तिम हिन्दू राजा उदयनदेव के सम्बन्ध में लिखा गया है कि काश्मीर राज उदयनदेव तुषारलिंग की पूजा करने के लिए अमरनाथ तीर्थ पर जाया करता था[2]।

ईस्वी वर्ष 1339 में काश्मीर में मुस्लिम शासन की स्थापना हुई, पर प्रजा शत-प्रतिशत हिन्दू थी अतः इसके बाद भी लम्बे समय तक इस प्रकार की यात्राएं होती रही। काश्मीर में हिन्दू और मुसलमान में कोई जातिगत भेदभाव नहीं था। सब भाईयों की तरह इकट्ठे रहते थे। शाहमीर वंश के पांचवें सुलतान कुतबुद्दीन तक ईस्वी वर्ष (1373-1389) तक प्रजा को पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रा प्राप्त थी। परन्तु सुलतान सिकन्दर (1389-1413) और अलीशाह (1413-1419) के शासनकाल में इस प्रकार की धार्मिक यात्राएं बन्द हो गई।

---

1. डा० रघुनाथसिंह, राजतरंगिणी भाष्य।
2. तुषारलिंग पूजाभिः कृतार्थीकृत्यवासरान्।
   जोनराज, राजतरंगिणी : श्लोक, 240

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अगले कई वर्षों तक लगभग यही स्थिति रही, पर श्रावण मास की प्रत्येक पूर्णिमा तिथि को भगवान् शिव का प्रतीक तुषार लिंग, पूर्णता को प्राप्त होता रहा। गिने-चुने साधु-सन्यासी, योगी-महात्मा तीर्थ की यात्रा पर जाते रहे। सुलतान जैनुल आबदीन के राजतत्वकाल (1420-1470) में हिन्दू प्रजा को धर्म, उपासना और विश्वास की पूर्ण स्वतन्त्रता दी गई। सुलतान स्वयं हिन्दुओं के पर्वों, उत्सवों तथा मेलों में भाग लेता था। संगम त्रिपुरेश्वर और वराह क्षेत्र में गरीबों को भोजन कराता था। उसने पामपुर और बीजविहारा में अन्न सत्र खुलवाए थे[1]। नागयात्रा और गणचक्र उत्सव पर सुलतान भक्तों को पांच दिन तक भोजन कराता था। उन्हे द्वादशी के दिन रजाइयां, कम्बल, धन आदि देकर विदा करता था। वितस्ता के जन्मदिन के उत्सव पर दीपमाला करवाता था[2]। सुलतान स्वयं भी नौबन्धनतीर्थ, विजयेश्वर तथा शारदी की यात्रा करता था[3]।

सुलतान का योगियों पर बड़ा विश्वास था। योगी के आशीर्वाद से उसे पुत्र रत्न हुए थे। अतः योगियों के प्रति उसे बड़ी श्रद्धा थी[4]। सुलतान ने उनका केवल दान-पुण्य के द्वारा ही आदर नहीं किया,बल्कि उसने स्वयं भी योगियों से योग शिक्षा प्राप्त की। वह स्वयं संस्कृत जानता था और हिन्दू ग्रन्थों को पढ़ता था[5]। उसने ऊलर झील में योगियों के लिए जैनलंका का निर्माण करवाया था ताकि वे एकान्त में बैठकरअपनी साधना सफल कर सके[6]।

1. श्रीवर, राजतरंगिणी 1 : 5 : 15-21
2. वही 1 : 3 : 53-58
3. वही 1 : 5 : 88-108
4. वही : 1 : 3 : 46-52
5. वही, 1 : 5 : 79-88
6. जोनराज, राजतरंगिणी : श्लोक, 939

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सुलतान की इस नीति के कारण अन्य धार्मिक यात्राओं के साथ-साथ अमरनाथ यात्रा भी पुन: जोर-शोर से होने लगी और पचास वर्ष तक इसमें कोई अन्तर नहीं आया। योगी और संन्यासी इस यात्रा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे। ईस्वी वर्ष 1470 से 1586 तक पुन: राजनैतिक परिस्थितियों के कारण अमरनाथ यात्रा की गति मन्द हो गई। ईस्वी वर्ष 1586 में मुगल सम्राट अकबर ने काश्मीर पर अधिकार कर लिया। उसने भी हिन्दुओं को पूर्ण धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान की। यात्रा में फिर गति आई। पर कुछ ही वर्षों में पुन: इसमें अवरोध आ गया। सम्राट औरंगजेब के शासनकाल (1658-1707) में ऐसे धार्मिक उत्सव प्राय: बन्द हो गए। ईस्वी वर्ष 1707 से 1753 तक यही स्थिति रही और ईस्वी वर्ष 1753 में काश्मीर पर पठामों का शासन हो जाने के कारण इस स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ।

ईस्वी वर्ष 1819 में पंजाब केसरी महाराजा रणजीतसिंह ने काश्मीर पर अधिकार कर लिया। इनके शासनकाल में हिन्दु-मन्दिरों और हिन्दु तीर्थों की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा[1]। ईस्वी वर्ष 1846 में जम्मू के डोगरा राजा गुलाबसिंह ने काश्मीर को प्राप्त किया और वे जम्मू-काश्मीर राज्य के प्रथम महाराजा बने। आज हमें अमरनाथ की यात्रा का जो स्वरूप दिखाई देता है, उसका आरम्भ महाराजा गुलाबसिंह ने करवाया था[2]। इन्ही के राजत्वकाल में आदम मलिक नाम का चरवाहा अपनी भेड़-बकरियों को चराते समय तीर्थ भूमि के निकट जा पहुंचा। तभी अचानक वारिश होने लगी। सरदी और बरफ-वारी से बचने के लिए आश्रय की खोज में उसने एक विशाल गुफा

---

1. विक्रमाजीत हसरत, लाईफ एण्ड टाइम आफ रणजीत सिंह
2. हिन्दी विश्वकोश

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में आश्रय लिया। पक्के पत्थर की विशाल चट्टान में प्रकृति निर्मित गुफा में उसने अजीब नजारा देखा। बर्फ का बना हुआ विशाल शिवलिंग। उसके आसपास बर्फ से निर्मित गणेश और पार्वती की आकृतियां। समुद्रतल से सोलह हजार फुट से अधिक ऊंचाई पर स्थित इस गुफा के इर्द-गिर्द के क्षेत्र में बर्फ-ही-बर्फ दिखाई देती थी। गुफा के पास ही प्रवाहित नदी का जल इतना शी ल था कि उसे हाथ तक लगाना मुश्किल लगता था।

आदिम मलिक निश्चित समय तक अपने मवेशियों और सहायकों के संग इस क्षेत्र में घूमता रहा और समय-समय पर गुफा में बैठकर प्रकृति के इस अलौकिक खेल को देखता रहा। आदम-मलिक पहलगांव के समोप वकतोर नामक गांव का रहने वाला था। कुछ समय याद जब वह अपने मवेशियों के साथ वापस अपने गांए वापस आया तो उसने पहलगाम के पास गणेशवल में रहने वाले काश्मीरी हिन्दुओं से इस वात की चर्चा की। बात महाराजा गुलाबसिंह तक पहुंची तो उन्होंने फौरन पंडितों और विद्वानों से तीर्थस्थान के सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञान हासिल करने के उपरान्त तीर्थस्थान की ओर जाने वाले पहाड़ी मार्ग में सुधार के आदेश दिए। तीर्थस्थान पर प्राचीनकाल में की जाने वाली यात्राओं के सम्बन्ध में शास्त्र सम्मत जानकारी प्राप्त करके उन्होंने स्वयं तीर्थस्थान पर जाने का निर्णय किया और आने वाले श्रावण मास की पूर्णिमा तिथि से पूर्व आवश्यक प्रबन्ध करने के निर्देश जारी किए।

श्रावण पूर्णिमा से पन्द्रह दिन पहले श्रीनगर के रामबाग में झण्डा फहरा दिया गया ताकि उसे देखकर यात्रा के इच्छुक लोग वहां आकर एकत्रित हो जाएं। फिर पूर्णिमा से आठ दिन पहले श्रीनगर से सब यात्री इकट्ठे रवाना हुए और योगी-साधुओं के नेतृत्व में अनंतनाग पहुंचने पर पुनः झण्डा लहरा दिया गया,

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ताकि पिछड़े हुए यात्री विश्राम स्थान के बारे में जान जाएं। अनंतनाग से अमरनाथ का तीर्थ अट्ठाईस कोस की दूरी पर था और उसके आगे कोई भी हाट या बाजार नहीं था। रास्ता भी बड़ा तंग और भयानक था। अनंतनाग से ही यात्रियों को आवश्यक सामग्री खदीदने के आदेश दिए गए। दूसरे दिन राज पताका आगे-आगे और यात्रियों का समूह इसके पीछे-पीछे रवाना हुआ। महाराजा गुलाबसिंह का आदेश था कि योगियों, साधुओं, दरिद्रों आदि की यात्रा का खर्चा वे स्वयं देगें। शास्त्र के अनुसार अमरनाथ यात्रा के मार्ग में तेईस तीर्थों में स्नान करने का विधान था[1]। इनमें छः स्थान वितस्ता नदी में तथा सत्रह स्नान मार्ग के झरनों और जलकुण्डों पर किए जाते थे[1]। इनमें पद्मपुर, चक्रेश, देवक, हरिश्चन्द्र, लम्बीदरी, सरलक, गणेशवल मामलक, नीलगंगा और पंचतरणी विशेष प्रसिद्ध थे। जिस झरने से पंचतरणी का उद्गम हुआ है उसकी पांच शाखाएं अथवा पांच तरंगे हैं। इसी कारण इसका पूर्वनाम पंचतरंगिणी था। अब काल क्रम से पंचतरणी हो गया है। पंचतरणी से अमरनाथ की गुफा तीन कोस दूर थी। इस स्थान से आगे यात्रियों के निवास और विश्राम के लिए उपयुक्त स्थान न था। अतः यात्रा में पंचतरणी को अन्तिम पड़ाव मान लिया गया। यहां पर यात्री स्नान करने के उपरान्त अपने पहनने के वस्त्रों का परित्याग करके भोजपत्र के वस्त्र पहन लेते थे। अपना सारा सामान यहीं पर छोड़कर भगवान् अमरनाथ के दर्शन करके इसी स्थान पर लौट आने का नियम

---

1. षट् स्नानानि वितस्तायां प्रोक्तानि जगदम्बिके।
सप्तदशस्थल स्थानि स्थानानि स्नानान्यवन्यानि सुन्दरी।।
भृगीश संहिता : अमरनाथ माहात्म्यम् श्लोक-24

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बनाया गया[1]।

ई० वर्ष 1850 के आसपास महाराजा गुलाबसिंह ने स्वामी अमरनाथ तीर्थ के दर्शन करने के उपरान्त यात्रा का जो क्रम निश्चित किया था, आज तक उसी क्रम से यात्रा हो रही है।

महाराजा गुलाबसिंह ने माता वैष्णोदेवी जी के पवित्र तीर्थ पर उचित प्रबन्ध करने के लिए तथा पूजा और सुरक्षा के लिए स्थानीय ब्राह्मणों और राजपूतों को नियत किया था और उसके बदले में उन्हें चढ़ावे की राशि बांट लेने की आज्ञा प्रदान की थी[2]। इसी प्रकार उन्होंने आदम मलिक और उसके वंशजों को तीर्थस्थान की सुरक्षा और गणेशवल के पण्डितों को पूजा के लिए अधिकृत कर दिया। उन्होंने यह भी आदेश दिया कि इसके बदले में तीर्थ पर होने वाले चढ़ावे का एक हिस्सा आदम मलिक व उसके वंशज प्राप्त करेंगे, दूसरा हिस्सा पूजा करने वाले गणेशवल के पंडित तथा तीसरा हिस्सा तीर्थ पर आने वाले साधु-महात्माओं की सेवा में खर्च होगा। आज भी इसी नियम के आधार पर तीर्थ कीं आय का विभाजन होता है।

महाराजा गुलाबसिंह के शासनकाल के समय जम्मू से काश्मीर जाने वाले लोग पैदल ही जाया करते थे। अतः उस काल में अमरनाथ यात्रा में शामिल होने वाले यात्रियों की संख्या बहुत कम हुआ करती थी। इनके भोजन आदि का प्रबन्ध महाराजा गुलाबसिंह ने अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति से पांच लाख रुपये देकर रघुनाथ निधि नाम से एक कोष की राशि से प्राप्त सूद से धर्म-कार्य करने के आदेश दिए। धर्म सम्बन्धी इन कार्यों की देखरेख के लिए महाराजा ने युवराज रणवीरसिंह को एकमात्र ट्रस्टी

---

1. नगेन्द्रनाथवसु, हिन्दी विश्वकोश

2. डा० बी० के० शास्त्री, माता वैष्णो : इतिहास और कथा

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नियुक्त कर दिया[1]।

धर्मार्थ ट्रस्ट नाम से स्थापित इस संस्था ने श्री अमरनाथ तीर्थ की यात्रा के सम्बन्ध में विशेष प्रबन्ध करने आरम्भ किए। उस काल में धर्मार्थ विभाग भी सरकार का अंग था, अतः उसके द्वारा की गई कारवाई को सरकारी माना जाता था। यात्रा वर्ष में केवल एक बार होती थी, अतः सरकार उसमें पूरे तन, मन और धन से सहयोग देने लगी। धीरे-धीरे तीर्थ की ओर जाने वाले मार्ग में सुधार होने लगा। महाराजा रणवीर सिंह के राजत्वकाल (1856-1885) में यात्रा-प्रबन्ध में और अधिक सुविधाएं प्रदान करने के लिए धर्मार्थ ट्रस्ट को यात्रियों के लिए अधिक-से-अधिक सुविधाएं जटाने के आदेश दिए गए। कुलियों, खच्चरों और सवारी के लिए पालकी और घोड़ों के रेट नियत कर दिए गए। अस्पताल, पोलीस और तम्बू आदि के प्रवन्ध के साथ-साथ जंगलात विभाग को आदेश दिए गए कि वह यात्रा काल में मार्ग में आने वाले सभी पड़ावों पर जलाने वाली लकड़ी बिना मूल्य उपलब्ध करवाए।

वर्षों तक यात्रा का यह क्रम चलता रहा, योगी, साधु, संन्यासी और नागे महात्मा ही इस यात्रा में शामिल होते थे। यात्रा बड़ी कठिन थी। सरदी के प्रकोप से अनेक यात्री और घोड़े हर वर्ष मर जाते थे और जब कभी यात्रा के दरम्यान बर्फवारी और आंधी का प्रकोप होता तो मरने वालों की संख्या बहुत बड़ी होती। पर ऐसा बार-बार होने पर भी यात्रियों की आस्था में कमी नहीं आई। उनकी संख्या में विस्तार होता गया। वे अधिक उत्साह और अधिक साहस के साथ इसमें भाग लेने लगे। सम्भवतः इसके पीछे यही भावना थी कि "तीर्थ यात्रा एक

1. दी धर्मार्थ ट्रस्ट जम्मू व काश्मीर ए ब्रीफ इन्ट्रोड़क्शन : पृष्ठ 3,

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रकार से आत्मा की अपने चरम लक्ष्य की दिशा में लम्बी यात्रा का प्रतीक है। भारत के लगभग सभी महत्त्वपूर्ण तीर्थ-स्थल ऐसे हैं जिनकी यात्रा में भक्तों को जोखिम भरे संकटपूर्ण रास्तों से गुजरना पड़ता है, जिसमें उनकी आस्था की परीक्षा होती है। यदि भक्त अटक जाए तो उसके लिए ध्येय तक पहुंच पाना शायद ही कभी सम्भव होता है किन्तु यदि वह हिम्मत, आत्मविश्वास और ईश्वर में आस्था के साथ बढ़ता जाए तो उसकी सफलता सुनिश्चित है[1]।

महाराजा रणवीर सिंह ने अमरनाथ यात्रा को सुखद बनाने का बहुत उद्योग किया और उसके बाद उनके पुत्र महाराजा प्रतापसिंह (1885-1925) ने भी इस ओर प्रयास जारी रखे। महाराजा प्रतापसिंह श्रीनगर से यात्रियों को विदा करने के लिए स्वयं उपस्थित होते थे, अतः अमरनाथ यात्रा को और अधिक सरकारी महत्त्व और सहायता प्राप्त होती गई। ईस्वी वर्ष 1900 के उपरान्त काश्मीर में अंग्रेज पर्यटक अधिक संख्या में आने लगे थे। 1888 ई० में अंग्रेज काश्मीर में अपना प्रतिनिधि नियुक्त करने में सफल हो चुके थे। उसकी सहायता से काश्मीर में उन्हें विशेष सुविधाएं प्राप्त होती थीं। प्रकृति और पर्यटन के शौकीन जब कुछ अंग्रेज भी अमरनाथ के स्वयंभू तुषारलिंग को देखने के लिए यात्रा में शामिल होने लगे तो यात्रा के मार्ग में सुधार के लिए विशेष योजना बनाई गई।

काश्मीर में हिन्दू शासन होने के फलस्वरूप भारत से अनेक लोग भी अमरनाथ यात्रा में सम्मिलित होने लगे और आने वाले वर्षों में इसमें विस्तार होता गया। पहले-पहले यात्रियों की संख्या सैकड़ों में हुआ करती थी ईस्वी वर्ष 1917 में यह संख्या दो

1. डा० कर्णसिंह, युगांत के क्षितिज पर : पृष्ठ 39,

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हजार के करीब थी[1]। ईस्वी वर्ष 1922 में जम्मू-श्रीनगर राजमार्ग बन गया तो इससे यात्रियों को बड़ी सुविधा हुई[2]।लगभग डेढ़ सौ मील पैदल चलने का मार्ग कम हो गया। अब यात्री गाड़ियों के द्वारा सीधे श्रीगर पहुंचने लगे। अगले बीस-पच्चीस वर्षों में पहलगाम अमरनाथ यात्रा का मुख्य आरम्भ स्थल बन गया। इसी काल में अनंतनाग से पहलगाम तक सड़क का निर्माण हुआ। अब कुछ यात्री जो पहलगाम में ही प्रतीक्षा करते और जब यात्रा की छड़ी श्रीनगर से चलकर वहां पहुंचती तो वे भी उसमें शामिल हो जाते। ईस्वी वर्ष 1945 तक मार्गवर्ती तीर्थों में रुक-रुककर स्नान करने की परम्परा समाप्त होती गई। केवल अनंतनाग, मटन आदि मुख्य तीर्थों पर ही यात्रा-स्नान किए जाने लगे। जो लोग श्रीनगर अथवा जम्मू से सीधे पहलगाम पहुंचते थे, उनके लिए यह भी असम्भव था।

ईस्वी वर्ष सन् 1947 में भारत स्वतन्त्र हुआ। जम्मू-काश्मीर में लोकराज की स्थापना हुई। महाराजा की जगह अब प्रदेश सरकार अमरनाथ यात्रा का दायित्व निभाने लगी। तब से लेकर हर वर्ष यात्रियों की संख्या में बराबर वृद्धि होती गई है। विदेशी यात्रियों संख्या भी बढ़ी है। अमरनाथ यात्रा में जितने यात्री शामिल होते हैं उनकी सहायता करने वाले कुलियों, घोड़ेवालों, पालकीवालों की संख्या भी उसी क्रम से बढ़ती जाती है। ईस्वी वर्ष 1917 में दो हजार से बढ़कर 1989 तक यात्रियों की संख्या साठ हजार तक जा पहुंची है। 1989 की यात्रा में साठ हजार देशी और दो हजार विदेशी यात्री शामिल थे[3]।

राज्य सरकार द्वारा इस यात्रा के लिए व्यापक प्रबन्ध किए

1. नगेन्द्र नाथ वसु, हिन्दी विश्व कोष
2. डा० वी० के० शास्त्री, माता वैष्णो : पृष्ठ 22
3. दैनिक एक्ससैलसियर, अंक 24, सितम्बर 1989

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाने के बावजूद कभी-कभी प्राकृतिक परिस्थितियां इसमें रुकावट उत्पन्न करती हैं। इस यात्रा में मौसम का कोई पता नहीं कि वह कब कौन-सा रूप धारण कर ले। खराब मौसम में अमरनाथ यात्रा बहुत ही कष्टदायक और भयकारक बन जाती है।

अगस्त 1970 में अमरनाथ की यात्रा करने वाले आठ हजार छ: सौ यात्रियों तथा दूसरे सहायक लोगों को शेषनाग से वापस लौटने के आदेश दिए गए थे। असामयिक वर्षा, बरफबारी और तापमान के शून्य स्तर पर आ जाने से अनेक यात्री मृत्यु को प्राप्त हो गए थे। जम्मू से यात्रा में शामिल व्यक्तियों में जो लोग इस हादसे का शिकार हुए थे उनमें कच्ची छावनी जम्मू की सूबादेवी, रेहाड़ी कालोनी की विशनोदेवी तथा काश्मीर से पहलगाम का घोड़ेवाला रहीम खाण्डे था[1]।

यात्रियों का दल पहलगाम से 14 अगस्त 1970 के दिन साफ मौसम में तेरह किलोमीटर की दूरी तय करके चन्दन बाड़ी पहुंचा था। इसके तत्काल बाद वर्षा होने के कारण कड़ाके की सरदी पड़ने लगी। पर अगली प्रात: मौसम पूरी तरह से साफ हो गया। यात्री उत्साहपूर्वक खिलखिलाती धूप में तेरह किलोमीटर चलकर शेषनाग पहुंचे। यात्री-दल के शेषनाग पहुंचते ही मौसम भयानक रूप धारण करने लगा और फिर कुछ ही देर में भारी वर्षा और हिमपात होने लगा। जब तापमान शून्य से नीचे जाने लगा तो मेला अधिकारियों ने यात्रियों से अनुरोध किया कि वे वापस लौट जाएं। परन्तु इस चेतावनी के बावजूद लगभग एक सौ साधु-महात्मा इतने भयानक मौसम में भी छड़ी मुबारक के समुद्र तल से चौदह हजार फुट की ऊंचाई वाले महागुनस (महागनेश) पर्वत को पार करके पंचतरंगिणी जा पहुंचे। भगवान् की लीला

---

1. हिन्दुस्तान टाईम्ज, अंक 20, अगस्त 1970

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कि उनमें से कोई भी हताहत नहीं हुआ। 17 अगस्त, 1970 को अत्यन्त निराशा व थकावट से चकनाचूर यात्री वापस पहलगाम पहुंचने लगे। 15 अगस्त की रात उन्होंने भयानक सरदी और बारिश में केवल आसमान के नीचे गुजारी थी। यात्री-दल दोपहर बाद शेषनाग पहुंचा था किन्तु आवश्यक सामान और बिस्तर ढोने वाले खच्चर आधी रात के बाद पहुंचे थे। इस प्रकार के वातावरण में प्राईवेट होटल वाले, मिट्टी का तेल और ब्राण्डी बेचने वालों ने खूब लूट मचाई। आग के पास बैठने के लिए प्रति व्यक्ति पचास रुपये वसूल किए गए। यात्रियों की दुःखद स्थिति पर अपने विचार प्रकट करते हुए एक भुक्त-भोगी यात्री हिन्दुस्तान स्टील के अधिकारी एन० पालग्रे के अनुसार खच्चरों वालों के असहयोग के कारण हजारों लोगों को बिना बिस्तरों के शेषनाग में रहना पड़ा[1]।

गत कुछ वर्षों से अनेक उत्साही यात्री सोनमर्ग के रास्ते से भी यात्रा करने लगे हैं। पर इस तरफ से जाने वाले यात्री रक्षा-बन्धन की पूर्णिमा से पूर्व ही तुषालिंग के दर्शन कर आते हैं। सोनमर्ग श्रीनगर से 86 किलोमीटर उत्तर-पूर्व में सिन्धु नदी पर स्थित है। समुद्र-तल से 9000फुट की ऊंचाई पर स्थित सोनमर्ग से 9 मील की दूरी पर वालटाल नामक स्थान है। यहां से अमरनाथ गुफा तक जाने वाला मार्ग चौदह किलोमीटर लम्बा है और उसके अनेक भाग बर्फ से ढके हुए तथा दुर्गम हैं। परन्तु फिर भी यात्री वालटाल से जाकर एक ही दिन में लौट आते हैं।

गत कुछ वर्षों से इस मार्ग से जाने वाले यात्रियों की संख्या में भी वृद्धि हुई है और वालटाल में धर्मशाला और लंगर की स्थापना भी की गई है। वालटाल के समीप, सिन्धु नदी के तट पर

---

1. नवभारत टाईम्स : अंक 19 अगस्त, 1970

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यात्रा के कुछ दिनों तक निःशुल्क भोजन और आवास की व्यवस्था है। सिन्धु नदी ने सोनमर्ग और बालटाल की शोभा और आकर्षण में महत्त्वपूर्ण वृद्धि की है। इस नदी के कारण यात्रियों को सोनमर्ग जाने वाले राजमार्ग पर तथा बालटाल में जल-आपूर्ति की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता। श्रीनगर से सोनमर्ग जाने वाली सड़क मीलों तक सिन्धु नदी के साथ-साथ चलती है जिससे वातावरण बड़ा ही रमणीय लगता है। सोनमर्ग से पश्चिम की तरफ बहने वाली यह नदी शादीपुर के समीप वितस्ता में मिल जाती है।

यद्यपि सोनमर्ग से अमरनाथ तीर्थ पर जाने वाला रास्ता छोटा है पर आज भी तीर्थ की मुख्य यात्रा पहलगाम की तरफ से और नियत पर्व पर ही होती है। श्रीनगर से चलने वाली छड़ी अब रामबाग की अपेक्षा दशनामी अखाड़े से प्रस्थान करती है। अखाड़े से सम्बन्धित योगी/संन्यासी हाथ में छड़ी लेकर यात्रियों के समूह का नेतृत्व करते हैं। ऐसा लगता है कि पूर्वकाल में जो राजकीय पताका यात्रियों का नेतृत्व प्रदान करती थी, वही कालक्रम से छड़ी के रूप में परिवर्तित हो गई। मुख्य रूप से योगी और संन्यासी ही अमरनाथ स्वामी जी के भक्तों में गिने जाते थे, अतः उन्हें यात्रा का नेतृत्व करने की जिम्मेदारी सौंप दी गई। दशनामी अखाड़े से तात्पर्य संन्यासियों के एक वर्ग से है। आदि शंकराचार्य ने अपने शिष्यों को सागर, भारती, सरस्वती आदि दश नाम दिए थे। उन्होंने श्रृंगेरीमठ, शारदामठ, गोवर्धनमठ और जोशीमठ—ये चार मठ स्थापित किए थे। प्रत्येक दशनामी संन्यासी इन्हीं चार मठों में से किसी एक के अन्तर्गत होता है। वेदान्त के तत्त्व का अनुशीलन ही इनका प्रधान धर्म है। दशनामी संन्यासियों में माधवाचार्य आनन्दगिरि जैसे प्रसिद्ध विद्वान् भी हुए हैं। ये लोग कौपीन पहनते हैं। मृत्यु के बाद इनके शव को

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जलाया नहीं जाता। उसे या तो नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है अथवा पृथ्वी में गर्त निकालकर उसमें गाड़ देते हैं[1]।

श्रीनगर के दशनामी अखाड़े से कोई विशिष्ट व्यक्ति छड़ी को विदा करता है। मार्ग में पाम्पुर, अवन्तीपुर, अनन्तनाग, मटन आदि प्रसिद्ध स्थानों पर विश्राम करते हुए छड़ी के साथ चलने वाले यात्री जब प्रहलगाम पहुंचते हैं तो उसमें हजारों दूसरे यात्री शामिल हो जाते हैं। पहलगाम के मैदान में एक-दो दिन के लिए तम्बुओं का नगर बन जाता है। लिदर नदी की घाटी में बसा हुआ यह जनपद अमरनाथ यात्रा से लौटने वाले यात्रियों के लिए मार्ग में सबसे पहले आने वाला गांव था। अतः इसका नाम पहलगांव पड़ गया। आज पहलगांव काश्मीर भूमि का सबसे सुन्दर और आकर्षक पर्यटन स्थल है जहां लाखों पर्यटक भ्रमण और निवास के लिए जाते हैं। लिदर नदी की चांदी के समान उज्वल धारा ने इस स्थान की रमणीयता में बहुत वृद्धि की है। इसी लिदर नदी के कारण पहलगाम, गुलमर्ग से अधिक प्यारा लगता है।

लिदर का पूर्वनाम लम्बोदरी था। लम्बोदर नाम से विश्रुत गणपति गणेश के द्वारा सृजित होने के कारण इसका यह नाम पड़ा जो कालक्रम से लिदर हो गया[2]। लिदर वितस्ता की सहायक नदी है। ऊर्ध्व सिन्ध उपत्यका के दक्षिण क्षेत्र का जल ग्रहण करती है। जम्मू-श्रीनगर राजमार्ग पर बसे हुए बीजविहाड़ा और अनंतनाग के मध्यभाग में विद्यमान संगम नामक स्थान पर यह वितस्ता में मिल जाती है। लिदर से निकाली गई नहर से ऐशमुकाम और मार्तण्ड के आस-पास की भूमि को सिंचित किया गया है। इस नहर पर अब अनेक नई बस्तियां स्थापित हो गई हैं।

जनश्रुति है कि काश्मीर का सुलतान सिकन्दर(1386-1413) काश्मीर के मन्दिरों की मूर्तियों को तोड़ने के अभियान में लिदर

1. नगेन्द्रनाथ वसु, हिन्दी विश्वकोश।
2. डा० रघुनाथ सिंह, जोन राजतरंगिणी भाष्य।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

घाटी से होता हुआ अमरनाथ का तुषारलिंग भंग करना चाहता था। पहलगांव के समीप गणेशवल नामक स्थान पर पहुंचकर उसने गणेश की मूर्ति पर प्रहार किया। गणेश का यह मन्दिर लिदर नदी के मध्यवर्ती द्वीप में था। सिकन्दर ने मूर्ति के घुटने पर जब चोट की तो उससे रक्त की धारा बहने लगी। यह घटना देखकर सिकन्दर भयभीत हो गया और उसने अमरनाथ तीर्थ पर जाने का विचार त्याग दिया[1]। लिदर घाटी के मगल नामक स्थान में मम्मेश्वर नाम से एक मन्दिर की चर्चा प्राप्त होती है[2]। जबकि एक दूसरी रचना में मन्दिर में स्थापित लिंग का नाम कामेश्वर तथा गांव का नाम मामलक दिया गया है[3]। यह मन्दिर लिदर नदी के दक्षिणी तट पर है और उपेक्षित अवस्था में है।

पहलगांव से आगे अमरनाथ यात्रा के तीन पड़ाव हैं— चन्दनबाड़ी, शेषनाग और पंचतरण पहलगांव से चन्दनबाड़ी सोलह किलो मीटर, शेषनाग से पंचतरणी तेरह किलोमीटर तथा पंचतरणी से पवित्र गुफा कुल पांच किलोमीटर की दूरी पर है। इस प्रकार पहलगांव से अमरनाथ की गुफा छियालीस किलो-मीटर के अन्तर पर है। यह सारा मार्ग बड़ा कठिन और जोखिम भरा है। पहलगांव से चन्दनबाड़ी तक का मार्ग तो अब काफी सीमा तक ठीक जर दिया गया है, किन्तु शेषनाग तक पहुंचते समय यात्री को बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। कहते हैं प्राचीनकाल में शेषनाग स्थान से ऊपर महागुनस (महागणेश) नामक पहाड़ से जानलेवा वायु चलती रहती थी। उसे समाप्त करने के लिए भगवान् शिव ने शेषनाग को आदेश दिया कि वह अपने हजारों मुखों से उस वायु का वर्जन कर दें। शेषनाग ने

1. डा० रघुनाथसिंह, जोनराज राजतरंगिणी भाष्य : पृष्ठ, 365
2. अमरेश्वर कल्प
3. अमरेश्वर माहात्म्य

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आदेश का पालन किया और सदा तूफान की गति से चलने वाली वायु को पी गए। तब इस स्थान का नाम 'वायुवर्जन' पड़ गया जो आज बावजन नाम से विश्रुत है[1]। शेषनाग के इस स्थान पर निवास के कारण जिस झील का उदय हुआ उसका नाम शेषनाग पड़ा और उससे निसृत नदी को नीलगंगा कहा गया। नीलगंगा में हजारों यात्री स्नान करके पुण्य लाभ करते हैं[2]। इसके आगे पांच तरंगों शाखाओं वाली पंचतरंगिणी में विश्राम स्थान है। दूसरे दिन प्रातः अपना सारा सामान यहीं पर छोड़कर यात्री गुफा की तरफ प्रस्थान करते हैं। मार्ग में हिन्दू यात्रियों के लिए फूल, नेवेद्य, नारियल, सूत्र, मालाएं आदि पूजा की सारी सामग्री मुस्लिम बकरवालों द्वारा बेची जाती है।

पवित्र गुफा के बाहर प्रवाहित अमरगंगा में स्नान करके यात्री भगवान् अमरनाथ के दर्शनों के लिए गुफा की ओर बढ़ते हैं। इस गुफा की स्थिति समुद्रतल से सोलह हजार फुट से अधिक की ऊंचाई पर है। इसकी चौड़ाई पन्द्रह मीटर, लम्बाई सत्रह मीटर और ऊंचाई दस मीटर के लगभग है। इसके आसपास की पर्वतमाला ऊंची-नीची है। क्या सरदी और क्या गरमी, बारहों महीने चारों तरफ बरफ ही बरफ दिखाई देती है। गुफा के चारों ओर की भूमि और पर्वत प्राणिशून्य और तृणशून्य है। गुफा के भीतर अत्यन्त शीत होता है। उसमें दिन-रात जल टपकता रहता है। गुफा के मध्य भाग में भगवान् शिव का अपने आप बनने वाला तुषार का लिंग निर्मल सफेद मणि की तरह चमकता रहता है[3]। इसके पास ही पार्वती और गणेश की भी

---

1. भृंगीश संहिता
2. नीलगंगा माहात्म्य, भृंगीश संहिता।
3. नगेन्द्रनाथ वसु, हिन्दी विश्वकोश।

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुषार की स्वयंभू प्रतिमाएं बनती हैं[1]। गुफा की छत से टपकने वाली जल की बूंदों से निर्मित तुषारलिंग के सम्बन्ध में गुफा में दो-तीन महीने निवास करने वाले योगी और संन्यासियों का कथन है कि चन्द्रमा की वृद्धि और ह्रास होता है[2]। पूर्णिमा के दिन तुषारलिंग पूर्णता को प्राप्त होता है। प्रतिपदा तिथि से एक-एक कला घटने लगती है। अमावस्या के दिन तुषारलिंग का कोई चिन्ह नहीं रहता। इस प्रकार यह क्रम निरन्तर चलता रहता है। स्थान के जनशून्य और भयानक होने के कारण कोई भी मनुष्य यहां बारह महीने नहीं रह सकता। योगी-संन्यासियों में कोई-कोई गरमी के मौसम में इस तीर्थ पर दो-तीन महीने निवास करते हैं। वही इस बात की पुष्टि करते हैं[3]।

कर्ण परम्परा से विश्वास किया जाता है कि भगवान् शिव ने इस गुफा में बैठकर एकांत में माता पार्वती को सृष्टि-रचना से सम्बन्धित अमरकथा सुनाई थी। पर इस एकांत में भी उनके दो सेवक कबूतरों का रूप धारण करके उनके आस-पास ही टिके रहे। वे भी अमरकथा सुनकर अमर हो गए। भगवान् शिव को जब इस बात का पता चला तो उन्हें हमेशा के लिए कबूतर ही बने रहकर उसी गुफा में रहने का शाप दे दिया[4]। आज भी कई यात्रियों को ये कबूतर दिखाई देते हैं। इसके साथ-साथ भगवान् शिव का यह पवित्रतीर्थ काश्मीर के हिन्दू और मुसलमानों की एकता का भी प्रतीक है। यात्रा काल में तीर्थ पर जितना भी चढ़ावा होता है उसे हिन्दू पुजारी और आदम मलिक के वंशज प्राप्त करते हैं।

---

1. कल्याण : तीर्थ अंक पृष्ठ, 44
2. हिन्दी विश्वकोश
3. हिन्दी विश्वकोश
4. धर्ममार्ग, अंक 4, अमरनाथ की महिमा पृष्ठ 21

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मार्त्तण्ड

प्राचीनकाल में काश्मीर घाटी में जिन महत्त्वपूर्ण भवनों और मन्दिरों का निर्माण किया गया था उनमें मार्त्तण्ड मन्दिर का विशेष स्थान था। काश्मीर में बने मन्दिर अपनी भव्य कला के लिए विश्व विख्यात् थे। इन पर करोड़ों रुपये खर्च किए गए थे। महाभारत काल से लेकर चौदहवीं शताब्दी तक राजा-महाराजाओं, मन्त्रियों और सामन्तों द्वारा काश्मीर भूमि में ऐसे अनेक मन्दिरों का निर्माण करवाया गया था जो अपनी वास्तु-कला के कारण शताब्दियों तक विश्रुत रहे। इनकी सुन्दरता से प्रभावित होकर मिर्जा हैदर दुघलात ने लिखा था—

"काश्मीर की अत्यधिक आश्चर्यजनक वस्तुएं इसके मन्दिर हैं। इनके जैसी इमारत की समानता सारी दुनिया में नहीं मिल सकती[1]।" इसी के बारे में इतिहासकार फिरिश्ता का मत है कि काश्मीर के मन्दिर इतने शोभनीय हैं कि मैं अपने को उनकी कुछ रूपरेखा देने में असमर्थ पाता हूं। मैं समझता हूं कि समस्त विश्व में इस प्रकार की इमारतें न होंगी[2]।"

काश्मीर का मार्त्तण्ड मन्दिर इस प्रकार के मन्दिरों का सिर-मौर था। मार्त्तण्ड भगवान् सूर्य को कहते हैं। प्राचीन भारत में

---

1. मिर्जा हैदर दुघलात, तारीखे रशीदी : पृष्ठ, 426
2. तारीखे फरिश्ता, अंग्रेजी अनुवाद : पृष्ठ, 445

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पांच देवताओं की पूजा का विशेष प्रचार था जिनमें विष्णु, शिव, शक्ति, गणेश और सूर्य की गणना की जाती थी। इसे पंच-देवोपासना की संज्ञा दी गई थी। आज भी देश में इन्हीं देवताओं की पूजा-उपासना की जाती है। यद्यपि विष्णु, शिव, शक्ति और गणेश के मन्दिर भारत में स्थान-स्थान पर दिखाई देते हैं, और उनकी तुलना में भगवान् सूर्य के उतने मन्दिर नहीं, परन्तु भारतीय संस्कृति में भगवान सूर्य को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। वेदों, पुराणों, महाभारत, रामायण और दूसरे ग्रन्थों में भगवान् सूर्य का व्यापक वर्णन प्राप्त होता है। भविष्य पुराण, वराह पुराण, विष्णु पुराण, कूर्म पुराण, मत्स्य पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण आदि में सूर्य के सम्बन्ध में अनेक आख्यान् मिलते हैं। मार्कण्डेय पुराण में मार्त्तण्ड की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कहा गया है—

प्राचीनकाल में दानवों ने देवताओं को युद्ध में हराकर स्वर्ग पर अधिकार कर लिया। देवताओं की माता आदिति ने जब देखा कि उसके पुत्र अधिकार शून्यता के कारण यज्ञभाग प्राप्त न होने से दिन-प्रतिदिन दुर्बल होते जा रहे हैं तो उसने अपने पुत्रों की भलाई के लिए भगवान् सूर्य के उद्देश्य से कठोर तप करना आरम्भ किया। अनेक वर्षों की तपस्या के उपरान्त भगवान् सूर्य प्रसन्न हुए और उन्होंने अदिति से मनवांछित वर मांगने को कहा। अदिति ने कहा कि दानवों ने उसके पुत्रों को स्वर्ग से निकालकर जबरदस्ती उनके अधिकार छीन लिए हैं। उनकी बहुत बुरी स्थिति है। वह चाहती है कि भगवान् सूर्य उसके गर्भ से उत्पन्न होकर उसकी सन्तान के शत्रुओं का नाश करें। भगवान् सूर्य ने अदिति से कहा—

"मैं तुम्हारे गर्भ से सहस्रांश से उत्पन्न होकर तुम्हारे पुत्रों के शत्रुओं का नाश करूंगा।"

इसके उपरान्त वरदान के प्रभाव से अदिति सूर्य का गर्भ

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धारण करके परम स्वच्छता से चान्द्रायणादि व्रत रखने लगी। जब कश्यप ने देखा कि अदिति उपवास भी करती है और ऐसे कठोर व्रत रखती है, जिनसे शरीर क्षीण हो जाता है तो उन्हें बड़ा क्रोध आया। उन्होंने अदिति से कहा—

"तुम प्रतिदिन उपवास करके क्या इस गर्भाण्ड को नष्ट कर दोगी ?" अदिति ने उत्तर दिया, 'तुम यह जो गर्भाण्ड देखते हो, इसे मैं नष्ट नहीं करती हूं। यह मेरे पुत्रों के शत्रुओं की मृत्यु का कारण स्वरूप है।"

दोनों में विवाद होता गया। अपने पति कश्यप की ताड़ना से क्रोधित होकर अदिति ने उसी समय गर्भ को गिरा दिया। कश्यप ने उस गर्भ को उदय हुए तेजस्वी सूर्य की तरह देखा। उसके प्रकाश से रोमांचित कश्यप उसकी स्तुति करने लगे। तभी आकाशवाणी हुई—"हे महर्षि ! तुमने "इस गर्भाण्ड को मार डालोगी" ऐसा अपनी पत्नी से कहा था। मृत्ताण्ड से उत्पन्न होने के कारण तुम्हारे इस पुत्र का नाम मार्त्तण्ड होगा। यह संसार में सूर्य का कार्य करेगा। जिन असुरों ने देवताओं के यज्ञभाग का अपहरण किया है, उन सबका यह विनाश कर देगा।"

इस समाचार से देवता बड़े हर्षित हुए। उन्होंने मार्त्तण्ड को अगुआ बनाया और असुरों के साथ युद्ध करने लगे। युद्ध में सभी असुर भगवान् मार्त्तण्ड द्वारा देखे जाते ही भस्म हो गए। असुरों के नष्ट हो जाने पर देवताओं ने अपना नष्ट अधिकार पा लिया। मार्त्तण्ड सभी दिशाओं में अपनी किरणों से प्रकाश बिखेरने लगे। देवताओं के देखते-देखते ही उन्होंने जलते हुए अग्निपिण्ड की तरह अत्यन्त तेजस्वी शरीर धारण कर लिया।

विश्वकर्मा की कन्या संज्ञा के साथ इनका विवाह हुआ। समय पाकर संज्ञा ने एक कन्या और दो पुत्रों को जन्म दिया। बड़े पुत्र वैवस्वत मनु हुए। दूसरे पुत्र यम थे। कन्या का नाम

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यमुना था। यद्यपि संज्ञा भी देवकन्या थी पर भगवान् मार्त्तण्ड का प्रखर तेज उससे सहा नहीं जा रहा था। वह अपने पति से यह बात कहने में लज्जा का अनुभव करती थी। एक दिन उसने अपनी छाया से कहा—

"छाया ! तुम्हारा मंगल हो। मैं अपने पिता के घर जा रही हूं। तुम मेरे पति मार्त्तण्ड के साथ-साथ रहना। मेरे पुत्रों और कन्या का भली-भांति लालन-पालन करना, ताकि उन्हें माता की कमी न लगे। पर इस बात का ध्यान रखना कि मेरे पति को इस बात का पता न चले। इस रहस्य को कभी भी प्रकट न करना।"

छाया ने संज्ञा की बात मान ली पर उसने स्पष्ट शब्दों में उसे कह दिया कि जब तक मार्त्तण्डदेव उसके केश न पकड़ेंगे और उसे शाप न देंगे वह उसके कहने के अनुसार ही चलेगी।

छाया के इस प्रकार कहने पर संज्ञा अपने माता-पिता के घर चली गई और वहीं पर निवास करने लगी। जब संज्ञा को पति के घर से आए हुए वहुत दिन हो गए तो उसके पिता विश्वकर्मा ने उसे पतिगृह में चले जाने को कहा। संज्ञा चुपचाप रही। कुछ दिन बीत गए। जब पिता संज्ञा से बार-बार अपने पति के पास जाने का अनुरोध करने लगे तो संज्ञा ने बड़वा का रूप धार लिया और उत्तरकुरु की तरफ जाकर तपस्या करने लगी।

इधर संज्ञा के अपने पिता के घर चले जाने पर छाया ने संज्ञा का रूप धारण कर लिया और मार्त्तण्डदेव की सेवा करने लगी। मार्त्तण्डदेव ने उसे अपनी पत्नी संज्ञा ही समझा। समय पाकर उसके गर्भ से भी दो पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई। बड़े पुत्र का नाम सावर्णीमनु और छोटे पुत्र का नाम शनैश्चर था। कन्या का नाम तपती रखा गया। इसका विवाह राजा संवरण के साथ हुआ था।

इस प्रकार कुछ समय बीत गया। फिर अकस्मात् मार्त्तण्ड

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

को जब पता चला कि संज्ञा अपने पिता के घर चली गई है तो वे तत्काल अपने ससुर विश्वकर्मा के घर पहुंचे। विश्वकर्मा ने मार्त्तण्डदेव का बहुत आदर-सत्कार किया और फिर उन्हें बताया कि संज्ञा उनके प्रखर तेज को सह न सकने के कारण कठोर तपस्या कर रही है। वह उन्हें कमनीय रूप में देखना चाहती है। यदि वे उसे प्राप्त करना चाहते हैं तो उन्हें अपना प्रखर तेज कम करना पोगा।

मार्त्तण्डदेव ने जब इस बात को स्वीकार कर लिया तो फिर विश्वकर्मा ने शाकद्वीप में मार्त्तण्ड को भूमियन्त्र में आरोपित करके, उनके तेज को घटाना आरम्भ किया। जब उनका तेज शान्त हो गया तो उनका शरीर अत्यन्त कमनीय दिखाई देने लगा। तेज और सौन्दर्य से आपूर्ण उनका व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक और प्रिय लगने वाला था। उनके इस रूप को देखकर संज्ञा पुनः अपने पति के पास आ गई। भगवान् मार्त्तण्ड के इस स्वरूप से धरती का अत्यन्त कल्याण हुआ और जीव-जन्तुओं के साथ-साथ वनस्पतियों में भी नव जीवन का संचार हुआ। विश्वकर्मा ने मार्त्तण्ड के कम किए गए तेज को पन्द्रह भागों में विभक्त करके, उससे देव-शस्त्रों की रचना की। विष्णु का चक्र महादेव का त्रिशूल, कुबेर की पालकी, यम का दण्ड, कार्त्तिकेय की शक्ति आदि का इसी तेज से निर्माण किया गया।

समय पाकर अन्य देवताओं की भांति वेद और पुराण साहित्य में सूर्य की उपासना और भक्ति का प्रचार करने वाले अनेक आख्यान लिखे गए। ऋग्वेद में सूर्य से सम्बन्धित अनेक सूक्त मिलते हैं जिनमें मार्त्तण्ड को अदिति का आठवां पुत्र माना गया है[1]। शतपथ ब्राह्मण में बारह सूर्यों की गणना है जो बारह

---

1. ऋग्वेद 10 : 72 : 8 : 9

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महीनों के प्रतीक हैं[1]। तैत्तिरीय आरण्यक में भी अदिति से उत्पन्न बारह पुत्रों को बारह सूर्य माना गया[2]। वेदों के उपरान्त पुराण साहित्य में भी सूर्य को एक प्रमुख देवता स्वीकार करके उनकी पूजा और भक्ति का प्रचार किया किया गया।

भारतवर्ष में उपासना की दृष्टि से विष्णु, शिव, शक्ति, गणेश और सूर्य इन पांच देवताओं को प्रमुखता प्राप्त थी। इन पांच में से एक को प्रमुख और शेष को गौण मानकर उपासना की जाती थी। इसी को पुराणों में पंचदेवोपासना कहा गया। जनता ने अपनी-अपनी रुचि के अनुसार इनमें से किसी एक की उपासना करके उसके मन्दिर और पूजास्थान बनाए।

यद्यपि पुराण साहित्य में विष्णु, शिव और शक्ति का ही व्यापक वर्णन हुआ है परन्तु सूर्य के सम्बन्ध में भी महत्त्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होती है। ब्रह्म पुराण के छः अध्यायों में भगवान् सूर्य की महिमा और उनके प्रभाव का वर्णन किया गया है[3]। लिंग पुराण में भगवान सूर्य के स्वरूप और महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए सूर्य को तीनों लोकों का स्वामी, मूलाधार और परम देवता स्वीकार किया गया है। सूर्य से ही सब कुछ उत्पन्न होता और सूर्य में ही विलीन हो जाता है। संसार में भगवान् सूर्य के बिना किसी की भी निष्पत्ति असम्भव है। भविष्य पुराण में सूर्य को परब्रह्म रूप में स्वीकार करके अनेक, कथाओं का वर्णन करते हुए उनका सम्बन्ध सूर्य पूजा से स्थापित किया गया है[4]। इसके अति-

1. शतपथ ब्राह्मण 6 : 1 : 2 : 8
2. तैत्तिरीय आरण्यक 1 : 119 : 1
3. डा० बी० के शास्त्री, तुलसी साहित्य में पौराणिक आख्यानों का विनियोग : पृष्ठ 15
4. वही, पृष्ठ 28

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रिक्त वराह पुराण[1], विष्णु पुराण[2], कूर्म पुराण[3], मत्स्य पुराण[4] आदि में भी सूर्य सम्बन्धी प्रसंग मिलते हैं। पुराणों में सूर्य की महिमा का वर्णन करते हुए उन्हें भास्कर, विकर्तन, दिनकर, प्रचण्ड, मिहिर, पूषा, मार्त्तण्ड, रवि, ब्रघ्न, प्रभाकर, विभाकर आदि नामों से सम्बोधित किया गया है। एक ही देवता के ये अलग-अलग नाम हैं।

साम्ब पुराण के अनुसार श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब ने चन्द्रभागा के तट पर सूर्य मन्दिर का निर्माण करवाया था। पंजाब का मुल-तान नगर अपने सूर्य मन्दिर के कारण विशेष प्रसिद्ध था। चीनी यात्री हुयेनत्सांग, जिसने सातवीं शताब्दी में भारत की यात्रा की, स्पष्ट रूप से लिखता है कि मुलतान की प्रसिद्धि इस नगर में बने सूर्य मन्दिर के कारण थी।

"मुलतान के मन्दिर में सूर्य की मूर्ति पीले सोने की थी। उसे अमूल्य रत्नों से अलंकृत किया गया था। यहां स्त्रियां गान करती थीं। बत्ती जलाती थीं। पुष्प तथा धूपदान करती थीं। सभी देशों से यात्री पूजा के लिए आते थे। हजारों यात्री मन्दिर के चारों ओर परिक्रमा करते थे[5]।

उस काल में पंजाब और काश्मीर भावात्मक रूप से एक-दूसरे के बहुत निकट थे। दोनों प्रदेशों की हिन्दू प्रजा और हिन्दू राजा एक-दूसरे की राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक परि-स्थितियों से प्रभावित होते थे। मुलतान काश्मीर से बहुत दूर

---

1. वराह पुराण : आदित्योत्पत्ति अध्याय
2. विष्णु पुराण : अंश 2, अध्याय 10
3. कूर्म पुराण : अध्याय 40
4. मत्स्य पुराण : अध्याय 101
5. डा० रघुनाथसिंह, कल्हण राजतरंगिणी भाष्य : भाग दो, पृष्ठ, 112

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं था। भगवान् सूर्य की उपासना करने वाले मुलतान और पंजाब के दूसरे भागों में बड़ी संख्या में आबाद थे। अतः काश्मीर पर उनका प्रभाव पड़ा। काश्मीर के राजाओं ने भी सूर्यपूजा से प्रभावित होकर मार्त्तण्ड मन्दिर का निर्माण करवाया। उस काल में काश्मीर अपनी मन्दिर निर्माण कला और विद्या के केन्द्र के रूप में विश्रुत था। अतः उसकी गरिमा के अनुरूप ही मार्त्तण्ड जैसे भव्य और विशाल मन्दिर की रचना करवाई गई। भगवान् मार्त्तण्ड का यह मन्दिर अनन्तनाग से छः किलोमीटर और मटन तीर्थ से तीन किलोमीटर उत्तर-पूर्व में एक बहुत उंचे टीले पर है। काश्मीर के सुलतान सिकन्दर के राजत्वकाल में इसे तोड़ा गया था। पर ऐसा होने पर भी उसकी गणना संसार की सर्वश्रेष्ठ कलाकृतियों में की जाती है।

यह मन्दिर साठ फुट लम्बा और अड़तीस फुट चौड़ा है। इसके चारों तरफ दो सौ बीस फुट लम्बा और एक सौ बयालीस फुट चौड़ा भू-भाग है। मन्दिर के सारे अहाते को एक बहुत बड़ी दीवार से घेरा गया था। मन्दिर के अहाते में प्रवेश करने के लिए तीन द्वार हैं। मन्दिर का मुख्य भाग अनन्तनाग नगर की ओर है। सभी द्वार बड़े विशाल हैं। आठ से दस फुट लम्बे-लम्बे शिला-खण्डों से इनकी रचना की गई है। पता नहीं इतने बड़े-बड़े शिला-खण्ड किस प्रकार पर्वत की चोटी पर पहुंचकर मन्दिर की इमारत में लगाए गए होंगे।

पूर्वकाल में मन्दिर की स्थिति जल के सरोवर के मध्य थी। उसके चारों ओर एक फुट गहरा जल भरा रहता था। पहलगाम के पास प्रवाहित होने वाली लिदर नदी से एक नहर के द्वारा मन्दिर प्रांगण में जल लाया गया था। निरन्तर प्रवहमान होने के कारण जल हमेशा साफ और सुथरा रहता था और यह एक अत्यन्त सुन्दर झील का दृश्य उपस्थित करता था। सरोवर के

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मध्य में शोभायमान, मन्दिर तक पहुंचने के लिए प्रांगण के मुख्य द्वार से मन्दिर द्वार तक पहुंचने के लिए जल में बड़े-बड़े चौकोर शिलाखण्ड स्थापित किए गए थे। उसपर चरण रखकर चलते हुए भक्त और दर्शनार्थी मन्दिर में पहुंचते थे। इसी प्रकार शेष दो द्वारों से भी मन्दिर द्वार तक पहुंचने के लिए चौकोर शिलाखण्ड जल में लगाए गए थे।

कल्हण की राजतरंगिणी से ज्ञात होता है कि मार्त्तण्ड मन्दिर की स्थापना राजा गोनन्द के वंश में उत्पन्न राजा रणादित्य ने करवाई थी। श्रीनगर शहर की स्थापना करने वाले राजा प्रवरसेन के पुत्र युधिष्ठर के उपरान्त उसका पुत्र नरेन्द्रादित्य काश्मीर नृपति हुआ। केवल तेरह वर्ष तक राज्य करने के उपरान्त उसका छोटा भाई रणादित्य राजसिंहासन पर बैठा। शंख की मुद्रा से अंकित उसका विलक्षण मस्तक, सूर्य के मण्डल से मिश्रित चन्द्रमा के बिम्ब के सामान शोभित था। अपने राजत्व के वैभवकाल में इस राजा ने—

"रोगियों को निरोग करने के उद्देश्य और अपनी सेनामुखी नामक राजपत्नी के भय को दूर करने के निमित्त एक उत्तम आरोग्यशाला की स्थापना करवाई तथा सिंहरोत्सिका नामक ग्राम में रणपुर स्वामी के नाम से सुप्रसिद्ध श्री सूर्यनारायण का भव्य मन्दिर बनवाया। उसकी द्वितीय पत्नी अमृतप्रभा ने रणेश्वर के दायीं तरफ अमृतेश्वर मन्दिर की स्थापना करवाई[1]।"

राजा प्रवरसेन के उपरान्त गोनन्द वंश के राजाओं के नाम के साथ आदित्य का अपर नाम मार्त्तण्ड है। संभवत: इसका कोई दैवी कारण रहा होगा। तभी तो प्रवरसेन के उपरान्त इस वंश में नरेन्द्रादित्य, रणादित्य, विक्रमादित्य, बालादित्य प्रतापादित्य,

---

1. नीलम अग्रवाल, कल्हण राजतरंगिणी : पृष्ठ, 57

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वज्रादित्य, ललितादित्य, उदयादित्य आदि राजा हुए। संभवत: भगवान् मार्त्तण्ड के किसी अनुग्रह के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए राजा ने अपने वंश के राजाओं के नाम के साथ आदित्य शब्द जोड़ने का निर्देश दिया हो।

सुलतान सिकन्दर ने अपने राजत्वकाल (ईस्वी वर्ष 1389-1413) में मन्दिरों को तोड़ने का जो अभियान चलाया था उसके फलस्वरूप काश्मीर भूमि के दूसरे मन्दिरों के साथ-साथ मार्त्तण्ड मन्दिर को नष्ट करने का वर्णन करते हुए काश्मीर का प्रसिद्ध इतिहासकार पीरहसन लिखता है—

"सबसे पहले मार्त्तण्ड शूर के मन्दिर को मिसमार करने के लिए जो राजा रामदेव की तामीरात से मटन के टीला पर याद-गार था, एक साल तक बराबर कारखाना जारी रखा। लेकिन खराब न कर सका। बिल आखिर इसकी बुनियाद से कुछ पत्थर निकाल लिए गए। बुतखाना के बीचोबीच ईंधन और लकड़ियां जमा करके आग लाग दी। मन्दिर की शक्लें और तस्वीरें जो दीवारों पर तलाश मुलम्मा की गई थीं तबाह और बरबाद कर दी। उसके आसपास की चारदीवारी जड़ से उखाड़ फेंकी गई। इसके खण्डरात अब भी हैरत अफजां हैं[1]।

काश्मीर में रचित भृंगीश संहिता में मार्त्तण्ड तीर्थ के सम्बन्ध में जो विवरण प्राप्त हुआ है उसके अनुसार कश्यप की पत्नी अदिति ने तेजस्वी पुत्र प्राप्त करने की कामना से बारह वर्ष और छ: महीने तक कठोर तप किया। तपस्या से प्रसन्न ब्रह्मा ने उसके सामने उपस्थित होकर अदिति को वरदान देते हुए कहा—

"हे अदिति ! तुमने बारह वर्ष तक जो अत्यन्त कठिन तपस्या की है, उसके फलस्वरूप तुम्हें बारह तेजस्वी पुत्र प्राप्त होंगे।

1. पीरहसन, तारीखे काश्मीर : उर्दू, पृष्ठ, 160-61

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तेरहवे वर्ष के छः महीनों में तुमने जो तप किया है उसके परिणाम में तुम्हारे गर्भ से एक मृताण्ड उत्पन्न होगा[1]। उस मृताण्ड को तुम सतीसर में फैंक देना। सतीसर में जिस स्थान पर तुम यह मृताण्ड फैंकोगी कालान्तर में वह मार्त्तण्ड नाम का पुण्य क्षेत्र बनेगा। उसकी प्रसिद्धि तीनों लोकों में होगी। मृत लोगों का उद्धार करने वाला होगा। अपमृत्यु प्राप्त लोगों को सद्गति प्रदान करेगा। उन्हें जीवन-मरण के चक्र से मुक्ति देगा। मरे हुए पापी लोगों को मुक्ति प्रदान करने वाला होने के कारण यह संसार में मार्त्तण्ड नाम से विश्रुत होगा[2]।

ब्रह्मा के आदेश से अदिति ने अपने मृताण्ड को सतीसर में फैंक दिया। उचित समय पर उस मृत अण्ड से भगवान् मार्त्तण्ड उत्पन्न हुए। उनके प्रकाश से पूरा सतोसर जगमगा उठा। कश्यप ऋषि ने उनकी स्तुति की। अपनी महत्ता और शक्ति के कारण मार्त्तण्ड लोकप्रिय देवता के रूप में काश्मीर में पूजित होने लगे।

वाद में जिस ग्राम में भगवान् मार्त्तण्ड का नया भवन वनाया गया था, कालक्रम से उस स्थान का नाम ही भवन हो गया। आज भी यह ग्राम स्थानीय जनता में भवन के नाम से ही विख्यात् है[3]। ऐतिहासिक ग्रन्थों में इस स्थान का उल्लेख मटन के

1. यस्माद् दादशवर्षाणि चरितं दुष्करं तपः।
अण्डाद्वादश वै गर्भा भविष्यन्ति ही जीविताः॥
अर्धंयत् तपसानीतं त्वया वर्षं त्रयोदशम्।
अतोमृताण्डः त्वद् देवी काले प्रादुर्भविष्यति॥
भृंगीश संहिताः मार्त्तण्ड माहात्म्य, पटल, 1, श्लोक-55-56

2. मृ-मृतानां पापिनां यस्माद् उद्धारयेत् क्षणात्।
तस्मादयं च ते पुत्रो मार्त्तण्डख्यातिमेश्यति॥
वही श्लोक 70

3. गृहंमार्त्तण्डनाथस्य यतः प्रोक्तं पुरातनैः।
तन्नाम्ना भवन मित्याख्यं प्रापितोग्राम उत्तमः॥ वही, श्लोक, 106

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नाम से हुआ है। मटन मार्त्तण्ड शब्द का ही प्रचलित रूप है जो मार्त्तण्ड की अपेक्षा बोलने में काफी सुगम था। धीरे-धीरे तीर्थ-यात्रियों द्वारा अलग-अलग प्रदेशों में पहुंचा और फिर इस तीर्थ के लिए रूढ़ हो गया। आज यह तीर्थ मटन के नाम से ही प्रसिद्ध है।

ईस्वी वर्ष 1586 में मुगल सम्राट अकबर ने काश्मीर पर अधिकार कर लिया। अकबर की धर्म निरपेक्ष नीति के परिणाम स्वरूप इस तीर्थ की स्थिति में विशेष सुधार हुआ। उसका सर्वप्रथम स्पष्ट आदेश यही था कि काश्मीर में अपने-अपने धर्म के अनुसार जीवन बिताने की सबको स्वतन्त्रता होगी। ईस्वी वर्ष 1889 में अपनी सर्वप्रथम काश्मीर यात्रा के समय अकबर ने स्वयं तीर्थ पर जाकर मार्त्तण्ड मन्दिर का बड़े ध्यान से निरीक्षण किया। मटन के ब्राह्म णों को हीरे-मोतियों की लड़ियों से सजाई गई बहुत सी गौएं दान में दीं। गरीब लोगों को फल भोजन और मिठाईयां बांटी।

सम्राट अकबर की मार्त्तण्ड-यात्रा से हिन्दुओं में जाग्रति आई और वे इस तीर्थ के नवनिर्माण की ओर अग्रसर हुए। नये मन्दिर का निर्माण भी सरोवर के मध्य किया गया। तीर्थ यात्री यहां आकर अपने पूर्वजों को पिण्डदान करने लगे। प्राचीन परम्परा पुनः जीवित हुई। यहां के ब्राह्मण पुरोहितों ने भारत के हरिद्वार, प्रयाग, काशी और पुष्कर तीर्थ के पण्डों की तरह वही खाता रखना शुरू किया। तीर्थ पर आने वाले यात्रियों का स्वागत-सत्कार करना पूजा और अन्य आवश्यक कृत्य करवाना, उनके विश्राम और निवास की व्यवस्था करना तथा उनकी वंशावली का ब्यौरा आदि दर्ज करना इनका मुख्य कर्त्तव्य बन गया। मटन तीर्थ पर आज भी इस परम्परा का निर्वाह किया जा रहा है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सहायक पुस्तक-सूचि

नाम	लेखक
1. अष्टादशपुराण दर्पण	
2. कल्याण शिवपुराण अंक	
3 कल्याण तीर्थ अंक	
4. गुलाबसिंह	नृसिंहदास नर्गिस
5. गोरखनाथ और उनका युग	डा० रांघेय राघव
6. गोरखनाथ	डा० नगेन्द्रनाथ उपाध्याय
7. तारीखे-काश्मीर	पीर हसन
8. तारीखे-पंजाब	.गुलाम मुहीयुद्दीन
9. तारीखे-रशीदी	मिर्जा हैदर दुघलात
10. तिथितत्व	
11. महाभारत	
12. योगिसंप्रदाया विस्कृतिः	चन्द्रनाथ योगी
13. राजगुरु योगिवंश	सुरेश मजूमदार
14. राजतरंगिणी	कल्हण
15. राजतरंगिणी	जोनराज
16. राजतरंगिणी	श्रीवर
17. राजतरंगिणी	शुक
18. राजतरंगिणी	डा० रघुनाथ सिंह
19. राजतरंगिणी हिन्दी अनुवाद	डा० नीलम अग्रवाल
20. विक्रमांक देव चरित	विल्हण
21. वैष्णो माता—इतिहास और कथा	डा० बी० के शास्त्री
22. शारदा तिलक तन्त्र	
23. शारिका माहात्म्य	
24. हिन्दी विश्वकोश	नगेन्द्रनाथ वसु
25. हिन्दी विश्वकोश	नागरी प्रचारिणी सभा काशी

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अंग्रेजी

1.	अल्वेरुनीज इण्डिया	अलवेरुनी
2.	आईने अकबरी	जरेट
3.	ए जरनी	जार्ज फारस्टर
4.	काश्मीर, दैन एण्ड नौ	जी० एल० कौल
5.	उमदाते-उत-तवारीख	सोहनलाल सूरी
6.	जम्मू राज	डा० एस० एस० चाड़क
7.	रणजीत सिंह	ग्रिफिन
8.	रणजीत सिंह	के० के० खुल्लर
9.	जम्मू एण्ड काश्मीर टैरीटरीज	ड्रियु
10.	हिस्ट्री आफ दी पंजाब	एस० एम० लतीफ
11.	गिलिम्पसिज आफ इण्डियन हिस्ट्री	भवानी भट्टाचार्य
12.	रिलिजस पालिसी आफ मुगल एम्परर्ज	श्रीराम शर्मा
13.	पंजाब अण्डर दी मुगलज	मुहम्मद अकबर
14.	हिस्ट्री आफ इण्डिया	इलियट
15.	डायरी आफ ए पैडस्ट्रियन	कै० नाइट
16.	हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन काश्मीर	डा० आर० के० पारिमू
17.	हिस्ट्री आफ काश्मीर	पी० एन० के० बामजाई
18.	ट्रैवलस इन मुगल एम्पायर	र्वनियर
19.	दी वैली आफ काश्मीर	लारैन्स
20.	जहांगीरनामा	
21.	जहांगीरज मैमोरीज	
22.	ट्रैवल्ज इन काश्मीर एण्ड लद्दाख	जी० टी० विने
23.	ट्रैवल्स आफ मूरक्राफ्ट	विलसन
24.	ट्रैवल्स इन काश्मीर एण्ड पंजाब	हूगल
25.	हिस्ट्री आफ मैडीवल इण्डिया	ईश्वरी प्रसाद

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

अनुक्रमणी

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

(अ)

अकबर 19

अहमदशाह अब्दाली 19, 172

अनन्तनाग 20

अच्छावल 84

अमीर मुहम्मद खां जवांशेर 24

अमीराकदल 24

अवन्ती वर्मा 13

अमरनाथ 138

अब्दुल गफार खां 37

अब्दुल कलाम आजाद 35

(आ)

आसफखान 83, 88

(ई)

ईद 103

ईरान 12

(औं)

औरंगजेब 51

(क)

कश्यप 7

कर्णसिंह 44

काबुल 9

(ख)

खानकाह 100

खीर भवानी 130, 131, 137

(ग)

गुलाम मुहम्मद बख्शी 36

गुलाबसिंह 20

गुलाम मुहम्मद सादिक 106

गुलाम मुहम्मद शाह 44

गोरखनाथ 119

(च)

चश्माशाही 75, 84

चारचिनारी 49, 52

चिंगस 207

(ज)

जहांगीर 8७: 91

जयापीड 112

जवाहरलाल नेहरू 37, 77

जगमोहन 44

जैनुल आबदीन 121, 122

जामामस्जिद 27, 97, 101

(ड)

डल 47

(द)

दाराशिकोह 51

(न)

नमाज 102

निशात 83, 89

नूरमहल 93

नरजहां 104

नेशनल कान्सफ्रेंस 37

(प)

पदम 13

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पत्थर मस्जिद 104
परीमहल 78
पुंछ 12
प्रतापसिंह 31

(फ)

फारुख अब्दुला 45

(म)

मटन 21, 172
महाराजगंज 29
महाराज बाजार 29
महात्मा गांधी 36
मार्त्तण्ड 21, 160
मूये मुबारक 104
मेहरचन्द महाजन 41
मुहम्मद अली जिन्ना 37
मुराद बख्श 51
मुस्लिम कान्फ्रेंस 37
मुमताज महल 83

(र)

रणादित्य 11
रणवीरसिंह 28
राजौरी 20
रामचन्दकाक 33
रावलपिण्डी 39
राजभवन 78
रूपलंका 50

(ल)

लखपतराय 27
लाहौर 20
लालसिंह 27
लालमण्डी 29
लालबहादुरशास्त्री 106

(व)

बाबर 19
बारहमूला 17
वेरीनाग 91
वूलरझील 107

(श)

शंकराचार्य मठ 57
शहरयार 83
शालीमार 89, 90
शाहमीर 16
शाहजहां 83
शेरसिंह 63
शेख अब्दुल्ला 35

(स)

सरदार पटेल 40,
सतीदेश 7
सिकन्दर 98
सोपुर 14
सोनलंका 50

(ह)

हरिसिंह 33
हरी पर्वत 66
हजरतबल 104

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu.
Acc. No....2095(D)
Dated....27-8-2015

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-O. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh